जैसलमेर क्षेत्र की लोक कला में भित्ति अलंकरण परम्परा के कलात्मक आयामों का अध्ययन

(माँडना चित्रण, रिलीफ चित्रण व बील के सन्दर्भ में)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
की पीएच.डी. (चित्रकला) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध
कला संकाय

शोधार्थी:
इंदूबाला

पर्यवेक्षक:
डॉ. लोकेश जैन
सह आचार्य

चित्रकला विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बूँदी

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
2018

प्रमाण–पत्र

मुझे यह प्रमाणित करते हुए प्रसन्नता है, कि शोध–प्रबन्ध **जैसलमेर क्षेत्र की लोक कला में भित्ति अलंकरण परम्परा के कलात्मक आयामों का अध्ययन (माँडना चित्रण, रिलिफ चित्रण व बील के सन्दर्भ में)** शोधार्थी **इंदूबाला,** RS/985/10 ने कोटा विश्वविद्यालय, कोटा के कला संकाय में पीएच.डी. (चित्रकला) के नियमानुसार निम्नलिखित आवश्यकताओं के साथ मेरे निर्देशन में कार्य पूर्ण किया है।

1. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार कोर्स वर्क पूर्ण किया है।
2. शोधार्थी ने 200 दिन के आवासीय आवश्यकता नियम को पूरा किया है।
3. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार समय–समय पर अपने कार्य का प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है।
4. शोधार्थी ने विभाग व संस्था प्रधान के समक्ष अपना शोध कार्य प्रस्तुत किया है।
5. शोधार्थी का बताई गई शोध पत्रिका में शोध पत्र का प्रकाशन हुआ है।

मैं इस शोध–प्रबन्ध को कोटा विश्वविद्यालय, कोटा की पीएच.डी. (चित्रकला) उपाधि प्रदत्त किये जाने हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा करता हूँ।

दिनांक :

शोध निर्देशकः
(डॉ. लोकेश जैन)
चित्रकला विभाग

प्राक्कथन

लोक कलाएँ कला का वह स्वरूप है जो कलात्मक होते हुए एक शुभ संकेत के रुप में भारतीय समाज व संस्कृति का एक हिस्सा रही है। सदियों से हमारे समाज द्वारा लोक चित्रण, गायन, नृत्य आदि को अपने रिवाजों के रुप में त्यौहारों, शुभ अवसरों, पूजा आदि पर अपनाया जाता है।

राजस्थान में लोक कला के कई स्वरूप दृश्यमान होते है। जिन्हें आज भी ग्रामीण समाज में एक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। लोक अलंकरण गांवों के इन कच्चे घरों को कलात्मक रुप प्रदान करती है। साथ ही यह महिलाओं के गौरव व सम्मान तथा परिवार के मंगल स्वरुप होने से आत्म संतुष्टि प्रदान करती है। माटी से जुड़े माटी से बने ये घर सुकून व आनन्द प्रदान करने वाले होते है और इनमें संजोये सांस्कृतिक लोक अलंकरणात्मक रुप अद्‌भूत वातावरण प्रदान करते है। इन आयामों को स्वरूप प्रदान करने वाली सृजनकर्त्ता जो इन्हें अपने संस्कारों का हिस्सा मान कर अपनाती है और मस्तिष्क व आत्मा में इन रुपों को आत्मसात कर इन्हें अपने घरों को अलंकरणात्मक रुप में अंकित करती है।

अपने घर परिवार के मंगल की कामना करती है और ये रुप उनको मानसिक व आत्ममिक संतोष की प्राप्ति का माध्यम होते है। सम्पूर्ण राजस्थान में माँडना बनाया जाता है, जिसके पीछे यह मान्यता है कि घर की दीवार खाली छोड़ने पर अमंगल व बुरी शक्तियों का प्रभाव पड़ता है और माँडना आदि को अंकित कर घर में शुभ व मंगल की कामना की जाती है।

जैसलमेर ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत ही विकट परिस्थितियों में भी यह लोग अपनी सांस्कृतिक कलात्मक रुपों से जुड़े है। यह क्षेत्र क्योंकि विकट भौगोलिक परिस्थितियों वाले क्षेत्र है। इसी कारण यहाँ के लोक अलंकरणों पर बहुत ही कम लेखन कार्य हुआ है।

इसी कारण इसका परिचय कराना आवश्यक है, क्योंकि धीरे–धीरे संचार के प्रचार–प्रसार के कारण लोगों में आधुनिकता आ रही है। जिसका असर लोक कलाओं के इन स्वरुपों पर भी दृष्टिगत होता है। यह रुप अपना मूल स्वरुप खोते जा रहे है तथा इन कच्चे घरों का स्थान अब पक्के मकानों ने ले लिया है। जो सीमेण्ट से बने होते है तथा इन घरों में इन लोक अलंकरणों का बन पाना सम्भव नहीं है और इन्हीं कारणों से लोक कला के स्वरुप ह्रास की ओर बढ़ते जा रहे है। इनको अपने अध्ययन के माध्यम में संकलन कर व लोंगो को इन विषय से परिचित करने का यह शोध एक माध्यम है।

शोध की प्रक्रिया में आंकड़ा संकलन के लिए हमने राजस्थान के कई गाँवों में तथा जैसलमेर के समीपवर्ती क्षेत्रों का भ्रमण किया। इस शोघ के कार्य से हमें ग्रामीण संस्कृति को और अधिक करीब से देखने का अवसर प्राप्त हुआ यहाँ लोग शहरी जीवन से भिन्न सादगी पूर्ण जीवन व्यतीत करते है तथा इनके व्यवहार में अपनापन, सहृदयता होती है। लोगों ने हमारे प्रश्नों के उत्तर बड़े ही प्रेम पूर्वक व सहजता से दिये। ग्रामीण क्षेत्र के इन अलंकरणों का सृजन करने वाली महिलाओं से उनके इस सृजन का इतिहास व गाँव के सांस्कृतिक परिवेश व कहानियाँ जानने का अवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार शोध के दौरान हमें गाँव के समाज व कलात्मक स्वरुपों को देखने का मौका मिला।

इसके अध्ययन की सुविधा के लिए निम्न अध्यायों की रचना की गई है।

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत 'जैसलमेर की संस्कृति एवं लोक–कलाओं सामान्य परिचय' प्रस्तुत किया गया। जिसके अन्तर्गत शोध की प्रकृति उद्देश्य साहित्य की समीक्षा विधि व शोध विधि का वर्णन करते हुए जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति सांस्कृतिक परिदृश्य व विभिन्न कलात्मक हस्तशिल्प एवं लोक कलाओं का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया। जो हमें विषय सम्बन्धित क्षेत्र से परिचित कराता है और हम इस क्षेत्र को और अधिक नजदीक से जान पाते है। यहाँ के लोग उनकी संस्कृति, उनकी वातारणीय परिस्थितियाँ व्यवहार, जीवन आदि से परिचित हो सके है।

द्वितीय अध्याय में 'जैसलमेर क्षेत्र की आलेखनात्मक लोक कला माँडना एवं अलंकरण की लोक–प्रकृति का वर्णन किया गया है। जिसके अन्तर्गत माँडना अंकन की परम्परा, माँडना स्वरुप तथा उसके तकनीकी पक्ष का वर्णन करते हुए रुपविधान वस्तुनिरपेक्ष गुण व राजस्थान के अन्य माँडना से तुलनात्मक अध्ययन कर जैसलमेर क्षेत्र के इस कलारूप का सम्पूर्ण परिचय प्रस्तुत किया गया।

तृतीय अध्याय में 'रिलीफ चित्रण' जो यहाँ की भित्ति अलंकरण का ही एक हिस्सा है के अध्ययन को प्रस्तुत किया गया है। जिसमें भित्ति रिलीफ चित्रण का स्वरूप, तकनीकी पक्ष तथा उसमें अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व व सृजनात्मक पक्ष के अध्ययन को प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में 'बील' अलंकरणात्मक लोक सृजन के अध्ययन का प्रस्तुतिकरण किया गया है। जिसे बील के साक्षात्कार के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसमें बील के परिचय स्वरूप, परिचय, ज्यामितीय सौन्दर्य सृजन व वर्ण प्रयोग आदि के माध्यम से प्रस्तुत किया गया।

पंचम अध्याय के अन्तर्गत 'सम्पूर्ण अध्ययन से प्राप्त' निष्कर्षः को प्रस्ततु किया गया जिसमें जैसलमेर क्षेत्र के भित्ति अलंकरण के उपयोगी एवं सौन्दर्यात्मक पक्ष भौगोलिक परिदृश्य में प्रयुक्त कला का चाक्षुक आकर्षण तथा भित्ति अलंकरण परम्परा के रूपविधान, अन्तराल प्रयोग एवं सृजनात्मक पक्ष का वर्णन करते हुए जैसलमेर के निकटवर्ती क्षेत्रों एवं समीपवर्ती राज्य से आयातित कला प्रभाव की व्याख्या करने के साथ जैसलमेर भित्ति अलंकरण का वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य के पक्षों को चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया।

षष्टम् अध्याय उपसंहार को प्रस्तुत किया गया। जिसमें अध्ययन से प्राप्त उपलब्धियाँ तथा शोध से प्राप्त विषयों नवीन स्थापनाऐं तथा परवर्ती शोध की नवीन संभावनाओं का प्रस्तुतिकरण किया गया।

दिनांक :

इन्दूबाला
पीएच.डी.चित्रकला, शोधार्थी
पंजीकरण क्रमांक RS/985/10
राजकीय महाविद्यालय, बूँदी

घोषणा शोधार्थी

मैं **इंदूबाला** (शोधार्थी, चित्रकला विभाग) यह घोषणा करती हूँ कि मेरा यह शोध–प्रबन्ध **''जैसलमेर क्षेत्र की लोक कला में भित्ति अलंकरण परम्परा के कलात्मक आयामों का अध्ययन (माँडना चित्रण, रिलीफ चित्रण व बील के सन्दर्भ में)''** जो मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया है, यह मेरा अपना शोधकार्य है। मैंने यह शोधकार्य **डॉ. लोकेश जैन, सह आचार्य, चित्रकला** के निर्देशन में पूर्ण किया है। यह मेरा अपना मौलिक कार्य है। मैने अपने विचारों को अपने शब्दों में प्रस्तुत किया है, और जहाँ दूसरे विचारों और शब्दों का प्रयोग किया गया है, व मेरे द्वारा मान्य स्रोतो से लिए गये है। अपरिहार्य स्थिति में ली गई ऐसी हर सामग्री का यथा स्थान सन्दर्भ एवं आभार व्यक्त कर दिया गया है, जो कार्य इस शोध प्रबन्ध में प्रस्तुत किया गया है।

मैं यह भी घोषणा करती हूँ कि मैने विश्वविद्यालय के सभी अकादमिक नियमों का निष्ठा एवं ईमानदारी से पालन किया है, तथा किसी तथ्य को गलत प्रस्तुत नहीं किया है। मैं समझती हूँ कि मेरे द्वारा किसी भी नियम उल्लंघन पर मेरे खिलाफ प्रशासनिक कार्यवाही की जा सकती है। मेरे खिलाफ जूर्माना भी लगाया जा सकता है यदि मैने किसी स्रोत से बिना, उसका नाम दर्शाये या जिस स्रोत से अनुमति की आवश्यकता हो, बिना अनुमति के लिया हो ।

दिनांक :

इंदूबाला
शोधार्थी
पंजीयन संख्या RS/985/10

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी **इंदूबाला** पंजीयन संख्या RS/985/10 द्वारा दी गयी उपर्युक्त सभी सूचनाएं मेरी जानकारी के अनुसार सही है।

दिनांक :

शोध निर्देशकः
(डॉ. लोकेश जैन)
चित्रकला विभाग

कृतज्ञता ज्ञापन

इस शोध कार्य हेतु मैं सर्वप्रथम अपने शोध निर्देशक **डॉ. लोकेश जैन** को सहृदय से धन्यवाद देती हूँ जिनके मार्गदर्शन ने मुझे शोध कार्य में अतुलनीय सहयोग प्रदान किया है। साथ ही मैं अपने राजकीय महाविद्यालय, बूँदी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

मैं अपने पिता श्री प्रभूलाल बघेरवाल एवं माता श्रीमती अरुणा बघेरवाल जी को भी उनके द्वारा शोध कार्य में दिया गया सम्पूर्ण सहयोग एवं आशीर्वाद के प्रति कृतघ्न हूँ। मेरे शोध कार्य में परिवार के समस्त स्नेहजनों को उनके सहयोग के लिए धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

शोध के दौरान जैसलमेर क्षेत्र के उन सभी ग्रामीण एवं प्रबुद्ध जन जिन्होंने मुझे अपने घरों में उपस्थित इन कला स्वरूपों का अवलोकन एवं परिचय करवाया। उन सभी को मै। धन्यवाद देना चाहती हूँ, क्योंकि उनके इस सहयोग के बिना मेरा शोध अपूर्ण रहता ।

श्री कैलाश खत्री जी, श्री अशोक सोलंकी व दिनेश सोलंकी को इस शोध कार्य के आंकड़ा संकलन, भ्रमण एवं शोध से सम्बन्धित समस्त आवश्यक कार्यों में सहयोग प्रदान करने का धन्यवाद प्रकट करती हूँ एवं डॉ. मुक्ति पाराशर द्वारा समय–समय पर दी गई सलाह के लिए धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

समस्त शोध कार्य के प्राथमिक एवं द्वितीय आकड़ों के संकलन में सपना टहलियानि का आभार प्रकट करती हूँ एवं अन्य सभी मित्रगण शिखा गौत्तम, विजेन्द्र कुमार, वीरेन्द्र सिंह कराड़ योगेश नामा द्वारा शोध कार्य में अमूल्य सहयोग प्रदान किया गया।

इन्दूबाला
पीएच.डी.चित्रकला, शोधार्थी
पंजीकरण क्रमांक RS/985/10
राजकीय महाविद्यालय, बूँदी

अनुक्रमणिका

अध्याय	पृष्ठ संख्या

प्रथम अध्याय

जैसलमेर की संस्कृति एवं लोककलाओं का सामान्य परिचय (1–40)

1. शोध की प्रकृति
2. उद्देश्य
3. साहित्य की समीक्षा
4. शोध विधि
5. जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति
6. जैसलमेर का सांस्कृतिक परिदृश्य
7. जैसलमेर के विभिन्न कलात्मक हस्तशिल्प एवं लोक कलाओं का सामान्य परिचय

द्वितीय अध्याय

जैसलमेर क्षेत्र की आलेखनात्मक लोककला माँडना एवं अलंकरण (41–90)

की लोक प्रवृत्ति

1. माँडना अंकन की परम्परा
2. माँडना का स्वरुप
3. तकनीक
4. रूपविधान
5. वस्तुनिरपेक्ष गुण
6. राजस्थान की अन्य माँडना कलाओं से तुलनात्मक अध्ययन

तृतीय अध्याय

रिलीफ चित्रण (91–115)

1. रिलीफ चित्रण का स्वरूप
2. तकनीकी पक्ष
3. अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व
4. सृजनात्मक पक्ष

चतुर्थ अध्याय

बील : अलंकरणात्मक लोक सृजन **(116–172)**

1. परिचय : स्वरुप – परिचय
2. ज्यामितीय सौन्दर्य सृजन
3. वर्ण प्रयोग

पंचम अध्याय –

सम्पूर्ण अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष **(173–183)**

1. जैसलमेर क्षेत्र के भित्ति अलंकरण, उपयोगिता एवं सौन्दर्यात्मक–पक्ष
2. जैसलमेर के भौगोलिक परिदृश्य में प्रयुक्त कला का चाक्षुष आकर्षण
3. भित्ति अलंकरण परम्परा के रुप–विधान, अन्तराल प्रयोग एवं सृजनात्मक–पक्ष
4. जैसलमेर के निकटवर्ती क्षेत्रों एवं समीपवर्ती राज्य से आयातित कला प्रभाव
5. जैसलमेर भित्ति अलंकरण का वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य

षष्टम् अध्याय –

उपसंहार **(184–194)**

1. अध्ययन से प्राप्त उपलब्धियाँ
2. नवीन स्थापनाऐं
3. परवर्ती शोध की नवीन सम्भावनाऐं।

निष्कर्ष – **(195–196)**

सारांश – **(197–203)**

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची – **(204–211)**

चित्र सूची

क्र.सं.	चित्र का नाम	पेज सं.
1	जैसलमेर का मानचित्र	11
2	जैसलमेर क्षेत्र का ग्रामीण दृश्य	12
3	जैसलमेर का एक दृश्य	13
4	जैसलमेर का एक दृश्य	14
5	जैसलमेर का ग्रामीण सांस्कृति दृश्य	15
6	मरु उत्सव का एक दृश्य	16
7	जैसलमेर के ग्रामीण परिवेश में महिला	17
8	जैसलमेर के किले का बाहरी दृश्य	18
9	मरु उत्सव जैसलमेर	19
10	ग्रामीण परिवेश में महिला	20
11	शादी की पौशाक में नववधु एवं सुसज्जित प्रवेश द्वार	21
12	देवा गाँव का एक दृश्य	22
13	बोहा ग्राम का एक दृश्य	23
14	जैसलमेर की ढ़ाणी का परिक्षण को दौरान मौखिक साक्षात्कार	24
15	सियाम्बर ग्राम का एक दृश्य	25
16	ग्रामीण परिवेश में महिला	26
17	मोखला गांव का सुसज्जित एक घर	28
18	जैसलमेर किले के बाजार का एक दृश्य	30
19	कटपुलती दृश्य	31
20	जैसलमेर की प्रसिद्ध मौजड़ियाँ	32
21	सम गाँव का एक दृश्य	33
22	बड़ा देवा गाँव में स्थित कोठी एवं तिजौरी	34
23	बरमसर गाँव की लाभू देवी द्वारा निर्मित पुरानी हठड़ी	35
24	पोकरण कला के आकर्षक खिलौने	36
25	अधुरी कृति	37
26	रोटी बनाने की तश्तरी	37
27	काठौड़ी गाँव में बकरी, बकरी के बाल, रस्सी बनाता ग्रामीण व बालों से बनी रस्सी का कम्बल	38
28	पारेवर गाँव की नाखू देवी द्वारा निर्मित पेच वर्क का बिछोना	39
29	माँडना का अंकन करती महिला, ग्राम जालेड़ा (बूँदी)	42
30	जैसलमेर क्षेत्र का माँडना से सुसज्जित घर	43

क्र.सं.	चित्र का नाम	पेज सं.
31	सवाई माधोपुर के भित्ति माँडना स्वरुप	45
32	जैसलमेर के 'मन्धा' गाँव का दृश्य	46
33	माँडना का रचना कार्य	48
34	नरसिंहों की ढाणी का एक दृश्य	49
35	ग्रामीण क्षेत्र के घर के आंगन का दृश्य	50
36	काठोरी गाँव का एक माँडना दृश्य	50
37	जैसलमेर के दऊ गाँव का चौक चित्रण	51
38	द्वार पर बना माँडना, ग्राम देवा	52
39	शादी के अवसर पर बनाए जाने वाला 'मोडा' नामक माँडना	53
40	पग्ल्या माँडना, ग्राम कोटड़ी, जैसलमेर	54
41	द्वार माँडना, ग्राम बोआ	55
42	प्रवेश द्वार का एक दृश्य	56
43	भित्ति अलंकरण का एक स्वरुप	57
44	हाबूर गाँव का एक दृश्य	58
45	खीया गाँव का एक दृश्य	59
46	वस्तुनिरपेक्ष माँडना स्वरुप	60
47	वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य का प्रकट करना माँडना स्वरुप	61
48	हाड़ौती का चौक माँडना	62
49	जैसलमेर का चौक माण्डना	62
50	ढूँढार क्षेत्र का भित्ति व चौक माँडना	63
51	जैसलमेर क्षेत्र के माँडने का स्वरुप	64
52	भित्ति पर बनाए गये माँडनो का ज्यामितीय स्वरुप, ग्राम मंधा	65
53	भित्ति अलंकरणात्मक स्वरुप	67
54	माँडना व माँडने के निर्माता का चित्र	67
55	आधुनिक रंगों द्वारा बनाऐं गये माँडनों का सूक्ष्म स्वरुप	68
56	सम्पूर्ण घर को अलंकृत करते माँडना स्वरूप	69
57	घर में माँडना अलंकरण दृश्य	70
58	आंगन में माँडना का सज्जात्मक स्वरुप	71
59	वर्ग व कोणिय आकृतियों के संयोजन से बना माँडना	72
60	घर की छोटी दीवार पर माँडना स्वरूप	73
61	माँडना में आधुनिकता का प्रवेश	**74**
62	माँडना से सजा घर	75
63	ग्रामीण घर का एक दृश्य	76
64	माँडना अलंकरण में बाह्य प्रभाव	77

क्र.सं.	चित्र का नाम	पेज सं.
65	भित्ति अलंकरण स्वरुप	78
66	माँडना का अधुरा स्वरुप	79
67	ग्रामीण दृश्य	80
68	द्वार सज्जा का एक रुप	81
69	माँडना रहित एक घर	82
70	रंगीन माँडनों से अलंकृत एक घर	83
71	ग्रामीण परिवेश का एक घर	84
72	बाह्य प्रभाव से युक्त माँडना स्वरुप	85
73	जैसलमेर के माँडने का छोटा सा एक स्वरुप	86
74	आन्तरिक रुप को सुसज्जित करता माँडना स्वरुप	87
75	आन्तरिक सज्जा से अलंकृत गृह	88
76	ग्रामीण घर का एक दृश्य	89
77	आँगन का एक दृश्य	90
78	जैन मन्दिर शिल्प, जैसलमेर	93
79	जैन मन्दिर शिल्प, जैसलमेर	94
80	सिरावा गाँव की तिजौरी पर उभरा रिलीफ	94
81	मिट्टी से निर्मित रिलीफ से अलंकृत मन्दिर, देवरा गाँव	95
82	स्तम्भ पर कोणीय निर्मित रिलीफ	96
83	पौधे के आकार में काँच व काँच की चूड़ियों के टुकड़ों से अंलकृत रिलीफ, जैसलमेर	97
84	रेखीय स्वरुप में कोठी पर निर्मित रिलीफ	98
85	मिट्टी के मन्दिर पर रिलीफ	99
86	काँच के टुकड़ों से अलंकृत रिलीफ	100
87	कोठी पर रिलीफ अलंकरण	101
88	कोठी पर डूबा हुआ रिलीफ चित्रण	102
89	अंगुलियों से बनाया हुआ रिलीफ चित्रण	103
90	दीवार पर बना रिलीफ अंकन	104
91	दीवार पर बना रिलीफ अंकन	105
92	चौखट पर रिलीफ अंकन	106
93	तिजौरी पर बने रिलीफ चित्रण	107
94	अलंकृत तिजोरी का एक स्वरुप	108
95	बील में रिलीफ प्रयोग	109
96	तिजौरी पर रिलीफ अंकन	110
97	घर के दो आल्ये स्वरुप	111

क्र.सं.	चित्र का नाम	पेज सं.
98	रिलीफ से अलंकृत तिजौरी	112
99	वास्तु के स्वरूपों में रिलीफ का अंकन	113
100	अंगुलियों से बनाए गये रिलीफ	114
101	तिजौरी पर रिलीफ अंकन	115
102	खुरी ग्राम में सरपंच के घर में बना बील	117
103	काठोरी गाँव की हरकू देवी कुलघरा गाँव की कहानी बताते हुए	121
104	पालीवाल ब्राह्मणों द्वारा निर्मित, काठोरी ग्राम का 150 साल पुराना बील	122
105	नरसिंहों की धाणी ग्राम का नख्खू देवी द्वारा निर्मित बील	123
106	बील अलंकरण स्वरुप, ग्राम मन्धा	125
107	पारेवर ग्राम की पठानी देवी द्वारा निर्मित 55 वर्ष पुराना बील	126
108	डाबला ग्राम से प्राप्त बील	127
109	बील का उपरी भाग 'बारी' पर पक्षी अलंकरण व जाली का प्रदर्शन एक स्वरुप	128
110	काठोरी ग्राम में सरसों देवी द्वारा निर्मित 60 वर्ष पुराना बील	129
111	बील को अलंकृत स्वरुप देती जाली का प्रारुप	130
112	बील को अलंकृत स्वरुप देती जाली का प्रारुप	130
113	बील के घूघरों से बनी जंजीर का अलंकरण	131
114	रुपसी ग्राम, जर्जर अवस्था 90 वर्ष पुराना बील	132
115	लानेडा ग्राम का बील मन्दिर	133
116	स्तम्भ पर बनाई गयी छोटी बील आकृति	134
117	रुपसी ग्राम से प्राप्त 1 वर्ष पुराना सीमेण्ट से निर्मित बील का आधुनिक स्वरुप	135
118	मोकला ग्राम से प्राप्त बील जिस पर आधुनिकता का प्रभाव परिलक्षित होता है।	137
119	बील का जाली अलंकरण	138
120	बील का जाली अलंकरण तथा बारी स्वरूप	139
121	सम्पूर्ण दीवार को अलंकृत स्वरुप देता बील, ग्रम सियाम्बर	140
122	बील का एक स्वरुप, ग्राम डाबला	141
123	नाणेला गाँव से प्राप्त विभिन्न अलंकरण युक्त बील	142
124	जालीदार अलंकृत बील की आकृति	143
125	साधारण स्वरुप में एक पुराना बील	144
126	कपाट युक्त छोटा बील स्वरुप	145
127	बील की 'बारी' एक स्वरूप	146
128	दीवार के मध्य बीलाकार स्वरूप	147

क्र.सं.	चित्र का नाम	पेज सं.
129	बील पर बनी खूटियाँ तथा छोटा मन्दिर स्वरूप	148
130	बील का एक खण्डित स्वरूप	149
131	बील के जालीय अलंकरण	150
132	बील अलंकरण	151
133	खण्डित अवस्था में बील, लाणेला ग्राम	152
135	बील अलंकरण, ग्राम बोआ	153
136	बील का अद्‌भुत स्वरूप	154
137	गृह सज्जा में प्रयुक्त बील अलंकरण, ग्राम पारेवर	155
138	बील अलंकरण, ग्राम बरमसर	156
139	बील अलंकरण, ग्राम बोआ	157
140	खण्डित बील, ग्राम मंधा	158
141	बील अलंकरण, कोठारी ग्राम	159
142	बील अलंकरण, कोठारी ग्राम	160
143	कोठी पर बील अलंकरण	161
144	बील की 'बारी' का अलंकरणात्मक स्वरूप	162
145	बील अलंकरण, ग्राम बरमसर	163
146	छोटा बील स्वरूप	164
147	बील अलंकरण, ग्राम बोआ	165
148	खण्डित बील स्वरुप, ग्राम सलम्बर	166
149	खण्डित बील स्वरुप	167
150	बील अंलकरण, ग्राम नाणेला	168
151	बील संयोजन, ग्राम हाबूर	169
152	बील में रिलीफ का प्रयोग, ग्राम सोरावा	170
153	लुप्त होता स्वरुप, ग्राम कुच्छड़ी	171
154	बील का जाली स्वरूप	172
155	बील का अलंकरणात्मक स्वरुप	174
156	माँडना का भित्तिय अलंकरण	175
157	जैसलमेर के वास्तु स्वरुप का प्रतिबिम्ब	181
158	घर के प्रवेश द्वार पर वास्तु का अद्‌भुत स्वरुप	182
159	वस्तुनिरपेक्ष को प्रदृशित करता जैसलमेर के घर का एक दृश्य	183

प्रथम अध्याय

जैसलमेर की संस्कृति एवं लोक कलाओं का सामान्य परिचय

1. शोध की प्रकृति
2. उद्देश्य
3. साहित्य की समीक्षा
4. शोध विधि
5. जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति
6. जैसलमेर का सांस्कृतिक परिदृश्य
7. जैसलमेर के विभिन्न कलात्मक हस्तशिल्प एवं लोक कलाओं का सामान्य परिचय

शोध की प्रकृति

मनुष्य का पदार्पण जब से इस भूमि पर हुआ है, प्रकृति द्वारा उसे जो अद्‌भुत, अद्वितीय शक्ति की प्राप्ति हुई है, वह है, उसकी वाणी व बुद्धि। जब मनुष्य ने इस धरती पर कदम रखा, तो यह प्राकृतिक सौन्दर्य की अद्‌भुत रचनाऐं उसके सामने थी। परन्तु उसे भाषा का ज्ञान प्राप्त नहीं था। उसका मन, शरीर जैसे प्रकृति से ही बने थे। अतः प्रकृति में ही प्रकृति के साथ उसने रहना सीखा।

सर्वप्रथम मनुष्य ने अपने आप को अभिव्यक्त करने के लिए भावात्मक पक्ष में संकेतों का सहारा लिया होगा तथा प्रकृति के द्वारा प्राप्त संगीत तथा ध्वनियों आदि को अपनाया। संगीत तथा ध्वनियों के द्वारा ही उसने धीरे–धीरे कुछ वर्णों का प्रयोग करना सीखा होगा तथा प्रकृति को अभिव्यक्त करने के लिए चित्रों का प्रयोग करना प्रारम्भ किया। यह उसकी प्रथम कल्पना थी, जो मूर्तरुप से चट्‌टानों आदि पर भित्तिचित्रों शैलचित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त हुई।

समयानुसार मनुष्य ने कबीलों तथा कस्बों में रहना प्रारम्भ किया तथा विभिन्न परम्पराओं संस्कृतियों आचार–विचारों आदि का प्रारम्भ हुआ। अपनी बुद्धि व पराक्रम तथा कुशलता का उपयोग कर मानव प्रकृति का उपभोग करने लगा। प्रकृति से आप अपनी अनुभूतियों को विभिन्न प्रकार के संकेतों तथा चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करने लगा। जैसे–जैसे उसे पृथ्वी पर उपलब्ध विभिन्न संसाधनों का ज्ञान होने लगा, उसकी कल्पनाशीलता भी विशाल होने लगी। वह प्रकृति द्वारा प्रदत्त चित्रों में अपनी कल्पनाओं के रंग उकेरने लगा। सृष्टि में उसे विभिन्न प्रकार के रंग दिखाई देने लगे। विभिन्न समुदायों में विभिन्न प्रकार के, विचित्र प्रकार के तथा विशेष प्रकार के संकेतों एवं चित्रों का प्रयोग व उपयोग किया जाने लगा।

मानव के प्रारम्भिक काल में उसे अभिव्यक्त करने के लिए मानव शरीर तथा उसका आवास ही सर्वोत्तम प्रतीत हुआ। अतः समुदाय के व्यक्ति विभिन्न रंगों तथा संकेतों का प्रयोग अपने स्वयं के शरीर पर विभिन्न प्रकार की रचनाओं के माध्यम से करने लगे, इसी प्रकार के विशेष समुदाय के आवास भी विशेष प्रकार से बनाये जाते थे। जिससे वह अन्य से भिन्न प्रतीत हो सकें। इस प्रकार से विभिन्न प्रकार के रंगों, संकेतों, चित्रों आदि का प्रयोग करना प्रारम्भ हुआ। मानव क्षमता, बुद्धि, कल्पना आदि का प्रयोग अपने आस–पास के वातावरण के अनुसार करने लगा उसकी अद्‌भूत विलक्षण प्रतिभा चित्रों, संकेतों के माध्यम

से प्रदर्शित होने लगी। अपने रहन–सहन, परिवेश को बेहतर तथा अन्यों से भिन्न प्रदर्शित करने के लिए वह अपनी बुद्धि व योग्यता का उपयोग परिवेश में उपलब्ध सामाग्रियों द्वारा करने लगा।

मानव के विकास के साथ–साथ उसके आवास तथा परिवेश में भी विभिन्न प्रकार के परिवर्तन होने लगे। जो हमें पुरातन संस्कृति, सभ्यता, परम्पराओं में दृष्टिगोचर होते है। मानव ने अपनी बुद्धि के विकास के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के संसाधनों का भी उपयोग करना प्रारम्भ किया। मोहनजोदडों, हडप्पा, नील नदी सभ्यताओं और पाषाणकाल से प्राप्त विभिन्न प्रकार के वस्तुओं से हमें यह ज्ञान होता है, कि उस समय भी कलात्मकता, चित्रकारी का बेहतर उपयोग होने लगाा था। मानव अपने वस्त्रों के साथ–साथ विभिन्न प्रकार की धातुओं का प्रयोग कलात्मकता के साथ करने लगा था।

प्राचीनकाल से प्राप्त विभिन्न प्रकार की मूर्तियों से यह स्पष्ट होता है, कि मानव अपनी कल्पना तथा प्रकृति से प्राप्त विभिन्न अनुभूतियों को साकार रुप से प्रस्तुत करने लगा था। मानव के कलाकारी व चित्रांकन उत्कृष्ठ कोटि का हुआ करता था। विभिन्न मूर्तियों की भाव–भंगिमाओं को देख कर ही अद्‌भुत भाव उत्पन्न होते हैं, जो मन की गहराईयों में हलचल उत्पन्न कर भाव–विभोर कर देते हैं।

विकास के साथ विभिन्न प्रकार की नक्काशियों, सजावटी वस्तुओं आदि का प्रयोग भी होने लगा। जिसमें मानव अपनी प्रतिभा को निखारने लगा। मानव अपने आवास को गणितीय पद्धति के प्रयोग द्वारा विभिन्न प्रकार से व्यवस्थिति कर स्थापित करने लगे। उसी प्रकार मन्दिरों महलों, हवेलियों, सरायों आदि के निर्माण में गणितीय, वैदिक पद्धतियों का प्रयोग व उपयोग होने लगा। महलों, हवेलियों सरायों आदि के निर्माण में विभिन्न कलाओं भाव–भंगिमाओं, चित्रों, रंगीन चित्रों आदि का प्रयोग किया जाने लगा। गांवों तथा कस्बों में ग्रामीण परिवेश के मानव मिट्‌टी, गोबर, खड़ीया, गेरु तथा प्राकृतिक रंगों का प्रयोग अपने घर आदि को सजाने तथा संवारने में करने लगे।

विभिन्न प्रकार के त्यौहारों, कार्यक्रमों में विभिन्न प्रकार के नृत्य, सांस्कृतिक कार्यक्रम, नाटक, मंचन आदि के द्वारा जो प्रस्तुतिकरण किया जाता था। वह प्रकृति को अभिव्यक्त करने की एक परम्परा सी हो गई । इस प्रकार के कार्यक्रमों में हर व्यक्ति अपनी अनुभूति, भावना संवेदनाओं आदि को विभिन्न माध्यमों से प्रदर्शित करता था। इस प्रकार की अभिव्यक्ति से वह स्वयं सुखद अनुभूति का आभास करता है तथा आत्म सन्तुष्टि की पूर्ति होती है।

राजा–महाराजा तथा विभिन्न मुगलों, सम्राटों तथा उसके साथ–साथ जमीदारों, जागीरदारों आदि के द्वारा आरक्षण प्राप्त कारीगरों, चित्रकारों, कलाकारों के द्वारा संस्कृति, परम्पराओं के आधार पर क्षेत्रीय तथा स्थानीय रीति–रिवाजों को संवेदनाओं, भावनाओं के साथ उकेरा तथा भविष्य के लिए संजोकर रखा।

इस प्रकार के व्यक्ति अपनी प्रशंसा, प्रसिद्धि तथा योग्यता का प्रदर्शन् कर संस्कृति व कलाओं को उच्च स्थान तक लेकर गये। इस प्रकार की अभिव्यक्ति लोककलाओं व संस्कृति स्पष्ट रुप से अभिलक्षित होती हैं।

कला एक व्यक्ति द्वारा अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने का साधन है, जो उसको स्वयं को एक अनुभूति प्रदान कर संतोष की प्राप्ति कराता है।

कलाओं के उत्थान में पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं की भागीदारी भी अहम् हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों से कही अधिक होती है। नारी अपनी भावनाओं व संवेदनाओं की अभिव्यक्ति पुरुष की अपेक्षा अधिक कर पाती है। उसकी अभिव्यक्ति में मातृत्व, वात्सल्य, प्रेम, प्रीति, सौन्दर्य, संस्कार आदि होते हैं। जिन्हें वह अपनी कल्पना को साकार रुप प्रदान करते हुए चित्रों, भित्ति चित्रों, रंगोली आदि के माध्यम से प्रदर्शित करती है। ग्रामीण अंचल की महिलाऐं अपने प्राकृतिक वातावरण से जो पदार्थ या सामग्री प्राप्त करती है, तथा उन्हें रंगों के रुप में प्रयुक्त करते हुए, अपने घर–आंगन तथा दीवारों को अपनी कल्पनाशीलता तथा सृजनता से आकार प्रदान कर चित्रात्माकता का प्रदर्शन कर एक प्रकार का आत्मसंतोष प्रदान करती है। यह आत्म संतोष तथा खुशी उसके घर–परिवार के साथ–साथ देखने वाले लोगों तथा मेहमानों को भी आकर्षित करती है, तथा मन के भावों में सकारात्मकता, ऊर्जा व स्फूर्ति का संचार करती हैं। व्यक्ति उन्हें देखकर आत्म विभोर होता है, तथा खुशियों की प्राप्ति होती है।

ग्रामीण क्षेत्रों की अधिकांश महिला व पुरुष वर्ग कृषि कार्यों में संलग्न रहता है, तथा उनके जीवन में वर्ष में कुछ समय ही ऐसा होता है, जो उनके लिए उत्सव प्रदान करता है। कृषि कार्यों में जब फसल तैयार हो जाती है तथा फसल बेचने के बाद जो राशि उन्हें प्राप्त होती है, वह उनकी मेहनत का फल होती है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति में दीपावली, होली तथा फागुन का महीना उत्सव का होता है। जिसमें महिलाऐं अपने घर वस्त्रों, साज–सज्जा के द्वारा घर–आंगन को सँवारती है। इसी प्रकार से शादी–समारोह आदि के समय भी घर की महिलाऐं माँडने, रंगोली आदि के द्वारा घर–आंगन की साज–सज्जा करती हैं।

उद्देश्य

1. जैसलमेर को विभिन्न कलात्मक हस्तशिल्प एंव लोककलाओं का सामान्य अध्ययन।
2. जैसलमेर क्षेत्र की माँडना अंकन की परम्परा, उनका स्वरुप, तकनीक, रुपविधान, वस्तुनिरपेक्ष गुणों का अध्ययन।
3. राजस्थान की अन्य माँडना कलाओं से तुलनात्मक अध्ययन।
4. रिलीफ चित्रण के स्वरुप, तकनीकी पक्ष, अन्तनिहित अलंकरण के तत्व, सृजनात्मक पक्ष का अवलोकन व अध्ययन।
5. बील अलंकरण का स्वरुप, ज्यामितीय, सौन्दर्य सृजन, वर्ण प्रयोग का अवलोकन, चित्र प्रदर्शन तथा अध्ययन।
6. भित्ति अलंकरण परम्परा के रुप विधान, अन्तराल प्रयोग एवं सृजनात्मक पक्ष का अध्ययन।
7. जैसलमेर के निकटवर्ती क्षेत्रों तथा समीपवर्ती राज्यों से प्रभावित कला प्रभाव का अध्ययन।
8. अन्य शोधों का विश्लेषण, तुलनात्मक अध्ययन कर निष्कर्ष को प्रभावशाली बनाना।
9. अवलोकन तथा साक्षात्कार से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर शोध को मौलिकता प्रदान करते हुए प्रभावशाली बनाना ।
10. लुप्त होती सांस्कृतिक धरोहर को आने वाले समाज के लिए संग्रहित कर रखना।

उद्देश्य की पूर्ति के चरण –

शोधार्थी का शोध कार्य जैसलमेर से सम्बन्धित है, तथा इसका क्षेत्र विस्तार शहरी कम होकर ग्रामीण क्षेत्र पर निर्भरता अधिक है, अतः शोधार्थी द्वारा सर्वप्रथम निम्न चरणों में कार्य किया जाता है।

1 **प्रथम चरण में** सर्वप्रथम मेरे द्वारा जैसलमेर में मेरे एक मित्र को साथ लेकर उन गाँवों का पता लगाया गया जहाँ पर मॉडने, रिलीफ तथा बील दिखाई देते है, तथा उनकी जानकारी व महत्वपूर्ण तथ्यों को संग्रहित किया जा सकें ।

2 **द्वितीय चरण में** प्राप्त संग्रहों, फोटों, चित्रों तथा प्रदत्तों व अन्य सामग्रियों का अध्ययन किया गया। इसके लिए कई विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों तथा संग्रहालय, पर्यटन विभाग का दौरा किया गया तथा उनका अध्ययन कर ज्ञान का विस्तार किया गया और यह समझा गया, कि वास्तव में शोध कार्य किस प्रकार किया जाता है, और वास्तविक महत्व क्या है, तथा उनकी उपयोगिता क्या होगी।

3 **तृतीय चरण में** चरणबद्ध तरीकों से जैसलमेर के विभिन्न गाँवों का दौरा किया गया। विभिन्न जातियों तथा व्यक्तियों तथा बुजुर्ग व्यक्तियों का साक्षात्कार किया गया। उनकी बातचीत द्वारा माँडनों, रिलीफ तथा बील से सम्बंधित जानकारियों को प्राप्त किया गया।

4 **चतुर्थ चरण में** शोध से सम्बन्धित सभी कार्य पूर्ण करने के पश्चात् उस कार्य की संश्लेषण कर उसकी विवेचना की गई तथा निष्कर्ष प्राप्त किये गए।

साहित्य की समीक्षा

मानव की असाधारण एवं अभूतपूर्व प्रगति तथा एक सुन्दर सृष्टि के निर्माण के रहस्य, प्रकृति के रहस्यों का जानना और अतीत के क्रियाकलापों, क्रियाओं को वर्तमान के साथ जोड़ते हुए भविष्य की योजनाओं के लिए मार्ग प्रशस्त करना महत्वपूर्ण है, जिससे वर्तमान के कार्यों को भविष्य के अनुसार प्रगति प्रदान की जा सकें।

किसी भी अनुसंधान में अहम पद या चरण होते हैं। जिनके द्वारा परिणाम व निष्कर्ष में गुणवक्ता की प्राप्ति होती हैं।

अतः सर्वप्रथम शोध प्रकरण से सम्बन्धित प्रकरणों, तथ्यों आादि का अध्ययन किया जाता हैं। शोध से सम्बन्धित साहित्य के बारे में परिभाषाऐं तथा व्यक्त निम्न प्रकार से है।

"A Survey of related literature is necessary of proper planning education and right concept of the problems and its solution. It provided suiding hypothesis suggestive methards of investigation of comparative data for interative purpose."

–कार्टर.वी.गुड

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन अनुसंधान प्रक्रिया पहला चरण है। यह समस्या को परिभाषित करने उसने महत्व को पहचान ने, अध्ययन का प्रारुप तैयार करने और संमकों को प्राप्त करने के श्रोतों का पता लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

– बेस्ट.जे.डब्ल्यू

- ***Saxena Jogendra, Art of Rajasthan, Heena and floor Decorations, Sundeep Prakashan, Delhi. 1979***

यह पुस्तक बूंदी क्षेत्र के गांवों की कच्ची मिट्टी के मकानों की दीवारों, जमीन पर बनने वाले माँडनों तथा हाथों व पैरों पर बनाये जाने वाली मेहन्दी के अध्ययन सम्बन्धित है। लेखक ने माँडना तथा मेहन्दी को विभिन्न शुभ एवम् मांगलिक अवसरों पर बनाये जाने वाले इन सुन्दर आलेखनों में अवसर अनुसार आने वाली विविधताओं का विस्तार से वर्णन किया है।

लेखक ने पुस्तक के माध्यम से माँडना कला के लुप्त होने का भय प्रकट करते हुए उसके समाधानों पर प्रकाश ड़ालने का प्रयास विभिन्न पत्रिकाओं में अपने लेखों के प्रकाशन के माध्यम से किया है। पुस्तक में माँडना के स्वरूप व तकनीक का विस्तार से वर्णन किया

गया है। चित्रों के माध्यम से इन्होंने माँडना व मेहन्दी कलाओं के विभिन्न प्रकारों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है।

- ***कोठारी कंचन – दादी मॉड़या माडणा, पत्रिका प्रकाशन, 2013***

इस पुस्तक में चित्रों व लेखन माध्यम से माँडना का विस्तृत वर्गीकरण त्यौहारों तथा मांगलिक अवसरों के आधार पर किया गया है। साथ ही थापा कला, मेहन्दी कला का भी वर्णन चित्रों व लेखों के माध्यम से विस्तार पूर्वक प्रस्तुत किया है, तथा इनके चित्र संग्रह के अध्ययन से हमें अच्छा मार्गदर्शन मिला एवं हमारे ज्ञान में वृद्धि हुई तथा हमारे शोध कार्य में माँडना अध्याय को समझने में प्रमुख भूमिका निभाई।

- ***Pal, H. Bhisham, Handicrafts of Rajasthan, Publications Division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India, 1906***

पुस्तक में राजस्थान की हस्त शिल्प कलाओं के विभिन्न आयामों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। लेखकों ने इन कलाओं के प्रारुप व स्थान के अनुसार उनका वर्णन प्रस्तुत किया है। तथा इन कलाओं के कलाकारों का परिचय भी अपनी पुस्तक के अन्तिम चरण में अंकित किया है। जो कला के सृजनकर्ता की परम्परागत इस कार्य में दिये गये सहयोग के लिए उनको श्रेय प्रदान करता है। हस्त शिल्प कला को राजस्थान की विरासत कला के रुप में प्रस्तुत किया है। पुस्तक में हस्त शिल्प कला में राजस्थान की कई कलाओं जैसे महिलाओं के गहने, कशीदाकारी व टेक्स्टाइल, लकड़ी के कार्य, धातु के हस्त शिल्प पत्थर पर कार्विंग, मिट्टी के बर्तन की कला लाख कार्य, लोक चित्रण आदि को प्रस्तुत किया, जो हमें हस्त शिल्प के विभिन्न आयामों से परिचित कराती है।

- ***माथुर कमलेश, पारम्परिक कला एवं लोक संस्कृति, साहित्यागार, जयपुर, 2010***

इस पुस्तक में लोक कला से जीविकोपार्जन की सम्भावनाओं के बारे में बताया गया है तथा आज के बढ़ते पाश्चात्यिकरण के चलते लुप्त होती इन लोक कलाओं में पुनर्जीवित तथा संग्रहित करने की समस्या की ओर ध्यान केन्द्रित किया गया है तथा समाधान हेतु सुझाव भी प्रस्तुत किये गये है।

- ***शर्मा, डॉ. राधारानी, हाड़ौती की लोक कला में मॉडने, नवजीवन पब्लिकेशन, निवाई, टोंक, 2007***

इस पुस्तक में स्त्रियाँ अपने दैनिक व्यस्त जीवन में भी समय निकालकर किस प्रकार अपनी इस धरोहर को सिंचित करती है। लोक गीत गाते माँडने सृजन करते हुए व

अपनी थकान भूल जाते है तथा विवाह के उपरान्त जहाँ भी जाती है। माँडनों व अपने लोक गीतों को अपने साथ धरोहर के रुप में ले जाती है। इस तरह वह अपनी इस कला को पीढ़ी दर पीढ़ी किस तरह आगे पहुँचाती है का वर्णन लेखिका द्वारा प्रस्तुत किया गया तथा इस अमूल्य कला को ओर विकसित करने पर भी पुस्तक में विचार व्यक्त किया गया है।

शोध विधि

किसी भी प्रकार के शोध को पूर्ण करने के लिए किसी ना किसी विधि का उपयोग किया जाता है, वह विधि इसलिए महत्वपूर्ण हो जाती है, कि प्राप्त प्रदत्त उसी विधि पर आधारित होता है, यदि शोध कि प्रक्रिया से विधि मेल नहीं हो या सम्बन्ध नहीं हो पाता है, तो प्राप्त प्रदत्त व परिणाम इससे प्रभावित होते है। शोध में प्रयुक्त सभी विधियाँ महत्वपूर्ण होती है, अतः विधि का चयन इस बात पर निर्भर करता है, कि शोध उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस प्रकार के तथ्यों कि आवश्यकता है, तथा इस तरह से तथ्य एकत्रित किए गए।

यह शोध सर्वेक्षण आंकडा, संकलन, चिन्तन आदि माध्यमों से पूर्ण हुआ है। सर्वेक्षण विधि के अन्तर्गत अवलोकन व मौखिक साक्षात्कार किया गया तथा इसी मौखिक साक्षात्कार व अवलोकन के माध्यम से इस शोध के विषय सम्बन्धी आंकड़ों का संकलन किया गया।

जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति

चित्र सं. 1, जैसलमेर का मानचित्र[1]

---

[1] राजस्थान टूरिस्ट रोड़ एटलस एवं राज्य दूरी मार्ग दर्शिका, इण्डियन मेप सर्विस, जोधपुर पृ.सं.33

भारत के पश्चिमी क्षेत्र में राजस्थान राज्य का एक जिला है, जैसलमेर थार, रेगिस्थान के आँचल में बसा यह शहर अपनी खूबसूरती के लिए विश्वविख्यात है, सुनहरी पीली रेतिली मिट्टी बसा यह शहर अद्भूत है। पीले पत्थर तथा पीली रेतिली मिट्टी से बना जैसलमेर का किला सोने जैसी चमक तथा आभा लिए विश्वविख्यात है।

चित्र सं. 2, जैसलमेर क्षेत्र का ग्रामीण दृश्य

यह जिला राजस्थान राज्य का सबसे बड़ा जिला है, क्षेत्रफल की दृष्टि से यह 26.4^0 से 28.33^0 उत्तरी अक्षांश तथा 69.20^0 से 72.42^0 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है, पूर्व से पश्चिम तक इसकी लम्बाई 270 कि.मी. तथा उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 186 कि.मी है। इसके उत्तर में बीकानेर पश्चिम तथा दक्षिण–पश्चिम में भारत–पाकिस्तान अर्न्तराष्ट्रीय सीमा रेखा है, दक्षिण में बाड़मेर और जोधपुर पूर्व में जोधपुर, बीकानेर जिलों की सीमाऐं लगती है, जैसलमेर जिले की अर्न्तराष्ट्रीय सीमा रेखा की लम्बाई 471 किलोमीटर है। ग्रेट इंडियन थार रेगिस्थान का यह जिला शुष्क तथा रेतीला है, यह क्षेत्र चट्टानी, पत्थर तथा बंजर क्षेत्र है, मानसून में यहाँ पर बहुत ही कम वर्षा होती है। भौगोलिक दृष्टि से यह जिला 38. 40 कि.मी में फैला हुआ है।

चित्र सं. 3, जैसलमेर का एक दृश्य

[1] District Administration website, Jaisalmer

इस क्षेत्र मे खेंजड़ा, रोहिड़ा, बबूल के साथ केक्ट्स मिलते हैं। पशुओं में भेड़, गाय, बकरी, चिकांरा, जंगली सूअर आदि के साथ ऊँट सामान्यतया पाये जाते है। साँप भी सामान्यतया पाये जाते है। यह क्षेत्र शुष्क जलवायु क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। गर्मियों में यहाँ का तापमान 49^0C तथा सर्दियों में 1^0C तक पहुचँ जाता है। यहाँ औसत वर्षा केवल 16 से.मी. तक है।

चित्र सं. 4, जैसलमेर का एक दृश्य

जैसलमेर का सांस्कृतिक परिदृश्य

जैसलमेर का सांस्कृतिक विरासत भी जैसलमेर की माटी की तरह अद्‌भुत व मनोरम है, जो दूर से ही, अपनी मनोरम छटा को बिखेरती हुई प्रतीत होती है। राजस्थान की स्वर्ण नगरी के नाम से विख्यात जैसलमेर प्राचीन काल में मारवाड़ अथवा वल्लभ मण्डल के नाम से जाना जाना जाता है, यदुवंशी राजपूत महारावल जैसल ने श्रावण शुक्ल 12 संवत् 1292 में एक त्रिकुट पहाड़ी पर जैसलमेर की नींव रखी थी, यहाँ कि संस्कृति में राजपूत झलक स्पष्ट दिखाई देती है, राजपूत शासकों द्वारा यहाँ पर शासन किये जाने के फलस्वरुप यहाँ की वेशभूषा, बोलचाल, खान–पान एवं भाषा आदि से राजपूती संस्कृति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है, यहाँ कि संस्कृति, परम्पराऐं, अविस्मरणीय है, जो व्यक्ति के अन्तरमन को छू जाती है।

चित्र सं. 5, जैसलमेर का ग्रामीण सांस्कृति दृश्य

यहाँ की हवेलियाँ प्रसिद्ध है, अपनी स्थापत्य कला के लिए। राजस्थान में विभिन्न जातियाँ व धर्म पनपें, लेकिन राजपूतों के शौर्य व गाथाऐं आज भी राजस्थान की माटी की विशेषता है। राजपूतों की आन–बान–शान की परम्परा राजस्थान को गौरवान्वित करती है। राजपूत शासकों और उनके युवराजों ने ही राजस्थान में अधिकांशः स्थानों पर गढ़, महल, बावड़ियों, हवेलियों आदि का निर्माण कराया जो राजस्थान की परम्परा, संस्कृति व सभ्यता का द्योतक रहा है। राजपूतों के अदम्य, शौर्य, वीरता, बलिदान, त्याग, के कारण ही यह भूमि वीरभूमि कहलाती है।

राजाओं, महाराजाओं द्वारा चित्रकला, कलात्मक कारीगरी आदि को जो प्रौत्साहन प्रदान किया उसी का परिणाम है कि यहाँ रिलीफ चित्रण तथा कला आज भी सजीव है तथा महलों, हवेलियों एवं मंदिरों की शोभा वहाँ आज भी जीवन्त है। इसी प्रकार से माँडनों को रीति–रिवाजों पारम्परिक परम्पराओं से इस प्रकार से जोड़ा गया है कि वह आज भी यहाँ की माटी में रची बसी है।

चित्र सं. 6, मरु उत्सव का एक दृश्य

राजस्थान के सभी क्षेत्रों में माँडनें तथा रिलीफ की कलात्मक अभिव्यक्ति स्वयं अपनी गाथा कहती हुई प्रतीत होती है। विभिन्न मन्दिरों की मूर्तियों, भग्नावशेष, महलों, बावड़ियों, झरोखों, महराबों, छतों, सीढ़ियों एवं पाषाण प्रतिमाओं आदि में यह कला दृष्टिगत होती हैं।

जैसलमेर क्षेत्र, जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर से जुडा हुआ है, अतः यहाँ की संस्कृति, सभ्यता, परम्पराओं के समानताऐं पाई जाती है तथा इन क्षेत्रों का प्रभाव आज भी जैसलमेर

चित्र सं. 7, जैसलमेर के ग्रामीण परिवेश में महिला

की संस्कृति, सभ्यता, परम्पराओं में स्पष्ट रुप से दिखाई देता है। राजस्थान का यह जिला थार का अंग है तथा आजादी से पहले पाकिस्तान भी इसी का भाग होने से परम्पराओं के कुछ अंश अभी भी यहाँ देखे जा सकते है। अतः जैसलमेर की सांस्कृतिक विशेषताऐं अद्‌भुत, निराली व रंगों से परिपूर्ण हैं।

चित्र सं. 8, जैसलमेर के किले का बाहरी दृश्य

पहनावा –

जैसलमेर के ग्रामीण क्षेत्रों में पारम्परिक पोशाकों में बांदा, बुगतरी, पचेवरा एवं खोल पहनी जाती है तथा पुरुष सफेद धोती पहनते हैं। पुरुष अंगरखी, झारी (एक जैकेट) एवं कामारी अंगरखा का उपयोग भी करते है। मुस्लिम पुरुष शाल, धाबला, अचकन व कुर्ते का उपयोग करते हैं।

कमरबन्द या पटका–कमर में बाँधा जाने वाला कपड़ा, इसमें हथियार या हाथ पकड़ने में काम आता है। इस क्षेत्र के पुरुष मुखियाँ कुछ विशेष प्रकार के पहनावे को पहनते है। जैसे– पैचा, सेला, साफा, पगड़ी आदि।

चित्र सं. 9, मरु उत्सव, जैसलमेर

पगड़ी यहाँ का सबसे प्रसिद्ध पहनावा माना जाता है, तथा आदर सत्कार के रुप में भी इसे पहनाया जाता है, जो सिर पर बांधा जाता है तथा जिसकी लम्बाई 82 मी. तथा

चौडाई 8 मी. होती है। पगड़ी का रंग, पहनने का तरीका, बांधने का तरीका आदि। क्षेत्र विशेष से प्रभावित रहती है तथा विशेष क्षेत्र को प्रदर्शित करती है।

शाही व राजपरिवारों के व्यक्तियों द्वारा विशेष प्रकार की तथा विशिष्ट पगड़ियाँ पहनी जाती है। उन्हें पहनने के लिए भी विशेष व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है। इसके साथ अलंकरण, आभूषण तथा पंख भी पगड़ी पर अलंकृत किये जाते है। जो राज परिवार की गरिमा, प्रतिष्ठा का द्योतक होते हैं।

चित्र सं. 10, ग्रामीण परिवेश में महिला

जैसलमेर के राज परिवार या अन्य परिवारों की पोशाकें विशेष तो होती थी परन्तु उसमें रेशमी वस्त्र रंगीन रंगों आदि का उपयोग नहीं होता था परन्तु मुगल काल के दौरान मुगल पोशाकों का प्रभाव राजस्थानी पोशाकों पर भी पड़ा और राजस्थानी पोशाकों में कढाई, नक्काशी, जड़ाऊ, रेशमी वस्त्रों का भी प्रयोग किया जाने लगा। पश्चिमी सभ्यता तथा संस्कृति का प्रभाव भी पोशाकों पर दृष्टिगोचर होता है।

जैसलमेर क्षेत्र के सामान्य पुरुष व महिलाऐं मोजड़ी का प्रयोग पैरो में पहनने के लिए करती है, जबकि विशेष रुप से कढाई की गई मोजड़ी का उपयोग उच्च स्तर के व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।

यहाँ की महिलाऐं खास तौर पर जो विवाहित है, आभूषणों से सुसज्जित रहती है, तथा रंगीन चुडियाँ, हाथी दाँत के आभूषण, लाख के आभूषणों को धारण करती है, विशेष पर्व उत्सव, त्यौहार पर महिलाऐं तथा पुरुष विशेष रुप से पहनावे पहनते है, तथा आभूषणों का उपयोग करते है, उच्च घराने की महिलाऐं सोने के आभूषण तथा सामान्य महिलाएँ चाँदी के आभूषण धारण करती है। जैसलमेर अपनी जटिल व कलात्मक मोजड़ी के लिए प्रसिद्ध है।

चित्र सं. 11, शादी की पौशाक में नववधु एवं सुसज्जित सजा प्रवेश द्वार

खान–पान –

जैसलमेर के खान–पान में संस्कृति व सभ्यता की झलक दिखाई देती है, हर क्षेत्र के खान–पान की अपनी विशेषता होती है, उसी प्रकार से जैसलमेर के खान–पान की अपनी एक विशेषता है।

चित्र सं. 12, देवा गाँव का एक दृश्य

सामान्य जनजीवन में दाल–बाटी–चुरमा, कैर–सागरी, गट्टे की सब्जी, लाल व सफेद मांस, माखनियां लस्सी, सात पकवान, खीर–पुडी, कड़ी सब्जी, छाछ, मोतीचुर के लड्डु, मक्का बाजरा, जौ की रोटी, दाल पकवान, खिचड़ी, मालपुआ, बालुशाही आदि भोजन के रुप में ग्रहण किए जाते है।

राजपूती घराने में खाने–पीने में मांस–मदिरा का प्रचलन आम है तथा उत्सवों एवं त्यौहारों के विशेष पर्व पर विभिन्न प्रकार के मांसाहारी व शाहाकारी भोजन परोसे जाते हैं।

शाहाकारी भोजन स्वादिष्ट व लज़ीज होता है, जिसमें विशेष रुप से कैर–सांगरी, दाल के बांजरे की रोटी, सांग–रोटी, दाल–बाटी–चूरमा, सात पकवान, जलेबी, घेवर, मालपुआ, मीठे चावल, छाछ व रायता आदि परोसे जाते है।

रहन–सहन –

ग्रामीण परिवेश में लोग साधारण तरीके से ही जीवन व्यतीत करते है चूंकि यहाँ के परिवेश में कृषि कार्य बहुत ही कम होते है अतः लोग जीवन यापन के लिए दूर दराज के क्षेत्रों में जाकर रोजी की व्यवस्था करते है या पशु–व्यवसाय पर जीवन आधारित रहता हैं। वर्तमान समय में चूंकि पर्यटन व्यवसाय अब फलने–फूलने लगा हैं अतः लोग इस व्यवसाय पर निर्भर रहने लगे हैं। मानव रेगिस्तान में पानी निकाल सकता है। अतः जैसलमेर का जीवन स्तर भी पहले से बेहतर तथा अच्छा होता जा रहा है।

रेगिस्तानी जीवन शैली को जानने व पहचानने के लिए अब विदेशी सैलानी भी काफी आने लगे है। जिससे जन–जीवन के रहन–सहन में काफी बदलाव दिखाई देने लगा है। ग्रामीण क्षेत्रों में मकान कच्ची मिट्टी या पक्की ईटों से ही निर्मित किये जाते है। जिससे इन मकानों में या घरों में तापमान कम रहता है। इसी प्रकार व्यासफूल, छप्पर के

चित्र सं. 13, बोहा ग्राम का एक दृश्य

भी मकान दिखाई देते हैं। पुरुष धोती–कुर्त्ता, पगड़ी पहनते है, जबकि महिलाएँ कुर्त्ती–काँचली, घाघरा–चोंली पहनती है। यहाँ की महिलाऐं सामान्यतया घूंघट में रहती है। शहरी परिवेश से महिलाऐं साड़ी व सलवार–सूट भी पहनने लगी है। यहाँ के लोग मेहमान को भगवान का रुप मानते है, तथा उसका आदर सत्कार करते है। यहाँ के लोगों की बोली में मिठास है, लोग नम्रता के साथ स्वागत करते हैं।

बोलियां व हाव–भाव –

इस क्षेत्र की बोली मारवाड़ी है। अधिकाशः व्यक्ति केवल मारवाडी बोलते है, लेकिन हिन्दी भाषा भी आम प्रचलन में है। इस क्षेत्र की भाषा में मारवाड़ी, सिन्धी, उर्दू, गुजराती, हिन्दी भाषाओं का मिश्रण दृष्टिगत होता है। इस क्षेत्र में पुरुष प्रधानता अधिक है तथा स्त्रियां अपने रीति–रिवाज, धर्म, संस्कारों से ज्यादा जुड़ी हुई है। अतः पुरुषों से स्त्रियाँ कम बात करती है, तथा घर परिवार के कार्य पुरुष प्रधानता के अनुसार ही सम्पन्न होते है। शिक्षा के बढ़ते स्तर के कारण तथा नवीन व आधुनिक सुविधाओं से पुरुष व स्त्रियों की मानसिकता में परिवर्तन जरुर आया है परन्तु आज भी यह क्षेत्र पुरुष प्रधान है। राजपूत समाज में पुरुष हावभाव व प्रधानता अधिक होने से समाज में पुरुषों का ही दबदबा रहता है। स्त्रियों केवल घर की चारदीवारी तक ही सीमित रहती है तथा रीति–रिवाजों में बंधी रहती है।

चित्र सं. 14, जैसलमेर की ढाणी का परिक्षण के दौरान मौखिक साक्षात्कार

अधिकांश स्त्रियाँ पुरुष से बात करते समय हाव–भावों का प्रयोग अधिक करती है, तथा पुरुष भी संकेतों व हावभाव के द्वारा अपनी बात को स्त्रियों के सामने रखते है। इसे सभ्यता की निशानी माना जाता है। स्त्रियाँ घूघंट या पर्दे में रहती है तथा पराये पुरुष से दूरी रखती है। आभूषणों का प्रयोग यहाँ की स्त्रियाँ अधिक करती है। सोने के आभूषण को अधिक महत्व दिया जाता है।

चित्र सं. 15, सियाम्बर गांव का दृश्य

संस्कार परम्परायें –

यह क्षेत्र संस्कार व परम्पराओं से सम्पन्न है। राजपूत अपने संस्कार, परम्पराओं के लिए ही विश्व विख्यात हैं।

कहावत भी है–

''राजपूत अपनी जान तो दे सकता है परन्तु अपने वचन से कभी पीछे नहीं हटता।''

राजपूत अपने संस्कारों व परम्पराओं के लिए प्राण न्यौछावर करते हुए आये है। जैसे पन्नाधाय ने अपने ही पुत्र को न्यौछावर कर दिया, राणा प्रताप ने अपना सारा जीवन जंगलों में ही गुजार दिया। रानी पद्मनी ने अपनी आत्म सुरक्षा के लिए जौहर कर लिया

था। इस प्रकार की अमिट कहानियाँ जैसलमेर क्षेत्र की माटी में रची बसी है, जो यहाँ की मिट्टी को वीर भूमि कहलाने पर विवश कर देती है।

राजपूती पहनावा उनका आदर सत्कार तथा परम्पराऐं सैलानियां पर अमिट छाप छोड़ती हैं तथा देश–विदेश से सैलानी इस प्रकार के राजसी–राजवाड़ा परम्पराओं, रीति–रिवाजों तथा उनके इतिहास की आन–बान–शान को देखने आते है। राजस्थान में अतिथि सत्कार अनूठा तथा अपनी विशिष्टता रखता है तथा राजपूत रीति–रिवाज, उनका रहन–सहन, हवेलियों बरबस ही आकर्षित करती है।

आदर सत्कार, मान–सम्मान, प्रतिष्ठा –

आज भी राजपूतों की मान मर्यादा, प्रतिष्ठा एक विशिष्टता का प्रतीक हैं। राजपूत अपनी प्रतिज्ञा के लिए अपनी जान तक देने को आतुर रहते है। इतिहास इस बात का गवाह है कि राजपूत एक बार जो प्रण कर लें, उसे किसी भी कीमत पर पूरा अवश्य करता है। अपना मान–सम्मान सभी को प्रिय होता है। परन्तु राजपूत दूसरों की मान–मर्यादा के लिए भी प्राण न्यौछावर करने को हमेशा तत्पर रहता है। ऐसी कई कहानियाँ राजपूताने के इतिहास के पन्नों पर अमीट छाप से लिखी गई हैं। पुरुष द्वारा भी अमिट कहानियाँ लिखी गई है जो इतिहास को बनाती है। यहां की नारी ने अ पनी प्राण–रक्षा, मान–मर्यादा के लिए जौहर तक किया है, परन्तु अपनी मान–मर्यादा पर आँच तक आने नहीं दी। समाज व देश के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाले कई वीर, महान् यौद्धा यहाँ पैदा हुए है, जिन्होंने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर समाज को अपना ऋणी बना दिया।

चित्र सं. 16, ग्रामीण परिवेश में महिला

शौर्य व वीरता –

राजस्थान के दुर्ग, गढ़, हवेलियाँ, राजस्थान के इतिहास की गवाह है, जो यहाँ के शासकों की विजय गाथा का वर्णन आज भी करती है। उनके शौर्य, साहस, अदम्य वीरता की गाथाऐं आज भी राजस्थान की माटी के कण–कण में व्याप्त है। राजपूत अपने शौर्य वीरता तथा त्याग एवम् बलिदान के लिए जाने जाते है। ऐसे कई वीर योद्धा व महान् पुरुष हुए है, जिन्होंने अपने देश, राज्य के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। इसी प्रकार ऐसे महान् देशप्रेमी भी हुए है, जिन्होंने अपनी प्रजा की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। इसी प्रकार वीरांगनाऐं जिन्होंने अपने त्याग एवम् बलिदान से इतिहास के पन्नों को अमर बना दिया।

निष्ठा एवम् स्वामिभक्ति –

राजपूताना के इस क्षेत्र और माठी में अपने देश राज्य के प्रति प्रेम, निष्ठा, कूट–कूट कर भरी हुई हैं। यहाँ की प्रजा हमेशा से स्वामिभक्ति के लिए जाने जाते है। जिस प्रकार एक राजा प्रजा के प्रति पूर्ण समर्पण व निष्ठा से अपने कर्तव्यों व दायित्वों का निर्वाह करता है इसी प्रकार उसके मंत्रिमण्डल के सदस्य, समाज एवम् उसकी प्रजा के लोग भी पूर्ण निष्ठा व समर्पण से राज्य के प्रति अपने दायित्वों व कर्तव्यों को पूर्ण करते हुए आये है।

इतिहास में ऐसे भी उदाहरण देखने को मिलते है कि यदि राज्य का खजाना खाली हो या राज्य पर किसी प्रकार का संकट या युद्ध की स्थिति से उभरने के लिए बजट की आवश्यकता थी तो स्वामिभक्तों ने अपना सर्वस्व राजा के चरणों में अर्पण कर दिया। यहाँ के वीर यहाँ की धरती को अपनी माता के समान मातृभूमि का दर्जा देते हुए उसकी पूजा करते है और उसकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

प्रण एवम् प्रतिज्ञा – राजपूत अपने प्रण एवम् प्रतिज्ञा के लिए विख्यात रहते हैं। महाराणा ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक अपने राज्य को प्राप्त नहीं कर लेते, प्रजा की खातिर वह वनों में ही रहे। सम्पूर्ण जीवन वनों में रहकर काटा। आज भी उनकी स्वामिभक्ति के कारण उनके स्वामिभक्त अपना घर नहीं बनाते है तथा स्थान परिवर्तित कर घुमक्कड जीवन व्यतीत करते हैं। यहाँ के व्यक्ति (राजपूत) एक बार यदि प्रण कर ले तो प्रण के लिए प्राण दे देता था, परन्तु अपने प्रण पर अडिग रहता है।

चित्र सं. 17, मोखला गांव का सुसज्जित एक घर

जैसलमेर के विभिन्न कलात्मक हस्तशिल्प एवं लोककलाओं का सामान्य परिचय

रेतीले धोरों पर बसा हुआ सोने सी चमक प्रदान करने वाला किला **''सोनार दुर्ग''** अपनी सोने सी आभा के लिए विश्वविख्यात है। बलुई पीले पत्थरों से निर्मित इस किले पर सूर्य की किरणों से जो प्रकाश उत्पन्न होता है, उससे सोने सी आभा प्राप्त होती है। जैसलमेर पर राजपूतों का अधिपत्य रहा, जो रावल कहलाये परन्तु कुछ समय तक यह मुगल के अधीन भी रहा है। अतः यहाँ की कला हस्तकला में मुगलकालीन का अंश दिखाई देता हैं।

जैसलमेर अपनी प्राचीन परम्पराओं, सभ्यता, संस्कृति को आज भी संजोये हुए है। अतः यह क्रम निरन्तर जारी हैं।

राजपूती पोशाकों की प्रधानता होने के कारण वस्त्रों पर कारीगरी तथा नक्काशी का कार्य प्राचीन समय से ही होता हुआ आया है। रेशमी वस्त्रों तथा सूती वस्त्रों पर नक्काशी, अलंकरण, बेल–बूटें, काँच की कारीगरी आदि होती आ रही है।

इसी के साथ यहाँ की कटपूतली तथा जूतियाँ प्रसिद्व हैं। ऊँट के चमड़े से बने सामान, बुने हुए जैकेट, लकड़ी के बॉक्स व गहने कढाई वाले दर्पण वस्त्र व कालीन, कंबल, शाल, ऊँनी पट्टू, ऊँट के बाल से बने कालीन, टेपेस्टी तथा चिमनी एवं कलात्मक दीपक व आभूषण में अलंकरण का कार्य किया जाता है।

कलात्मक व नक्काशी वाले पत्थर की प्रतिमाऐं, रेशमी व सूती वस्त्र, स्मृति चिन्ह, रंगीन धागों से बनी हुई, वस्तुऐं छोटे व खूबसूरत आकर्षित वस्तुऐं, हार–शृगांर की वस्तुऐं, पुरातन वस्तुऐं व सामान, आदि का व्यापार यहाँ किया जाता है। काचं जड़ित दुपट्टा, ऊंट के बाल व अन्य से बने हुई कलात्मक वस्तुऐं, गोटे व कसीदे से जड़ित कपड़े से बने हुए बॉक्स आदि का कार्य यहाँ किया जाता है, जो यहाँ की आर्थिक उन्नति का घोतक है।

इसी के साथ यहाँ की परम्पराओं में गायन की परम्परा भी प्रसिद्व रही है और इसी के साथ ऊँट का नाचना तथा ऊँट को संजाना संवारना यहाँ की लोक कलाओं का अटूट हिस्सा रहा हैं। यहां की संस्कृति तथा सभ्यता में हिन्दु–मुस्लिम का अद्भूत संगम व समन्वय दिखाई देता हैं।

कटपुतली कला –

अद्भूत व अविस्मरणीय तथा मन के भावों को जागृत कर उन्माद व उमंग का संचार प्रदान करती है। कटपुतली कला में अधिकांश लोक जीवन पर आधारित कथाओं व कहानियों का प्रयोग किया जाता है, जिसमें कलाकार कोटपुतली के प्रर्दशन के साथ–साथ उसका वाचन भी करते है तथा कटपुतली उसी वाचन के अनुसार अपना अभिनय प्रदर्शित करती है।

चित्र सं. 18, जैसलमेर किले के बाजार का एक दृश्य

चित्र सं. 19, कटपुलती दृश्य

इस कला में मन मस्तिष्क हाव–भावों आदि के प्रदर्शन में कलाकार की पूर्ण अभिव्यक्ति सम्मिलित रहती है तथा सधे हुए हाथों के साथ अभिनय पक्ष को भी पूर्ण किया जाता है।

कटपुतली का निर्माण विभिन्न प्रकार के कपड़ों के द्वारा स्त्री–पुरुष, लड़का–लड़की अर्थात् पात्र का निर्माण किया जाता है तथा इसके निर्माण में सावधानी रखी जाती है कि पात्र का प्रत्येक अंग में लचक, तारतम्यता, लोचपन हो तथा प्रत्येक अंग को जो धागा या डोरी के साथ बंधा हुआ होता है, उसे मनःस्थिति के अनुसार अभिनय प्रदान किया जा सकें।

कटपूतली परम्पराओं राजा महाराजाओं के समय से प्रचलित है, तथा लोक कथाओं के वाचन व प्रर्दशन तथा मान–सम्मान के इसमें व्याख्या करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता रहा है। सभी कटपूतली कला में एक सन्देश की प्राप्ति होती है, जो जन साधारण से जुडी हुई होती है। एक छोटे परदे के पीछे छिपा हुआ कलाकार परदे के ऊपर से धागों या डोरियों के सहारे जो अंगुलियों में लगे हुए होते है। परदे के आगे कटपूतली का प्रदर्शन करता हैं। कटपुतली परम्परा या कला लोक संस्कृति का एक अभिन्न अंग है, जो विशेष क्षेत्र को प्रदर्शित करती हैं।

मोजडी –

पैरों मे पहनी जाने वाली मोजड़ी का उपयोग प्राचीन समय से ही होता आ रहा है, परन्तु सामान्य मोजड़ी का प्रयोग साधारण लोग करते है। लेकिन मोजड़ी के विशिष्ट व भिन्न रुपों का प्रयोग विशेष त्यौहार व उत्सव पर्वों पर किया जाता है। राज परिवार व शाही परिवार के आने के साथ इसकी महत्ता और बढ़ गई, क्योंकि इन परिवारों तथा सम्राट परिवारों के सदस्यों के लिए विशेष रुप से विशेष प्रकार की मोजड़ियों का निर्माण विशेष कारीगरों व कलाकारों द्वारा किया जाने लगा।

चित्र सं. 20, जैसलमेर की प्रसिद्ध मौजड़ियाँ

मोजड़ी का निर्माण चमड़े के द्वारा किया जाता है तथा चमड़े के विभिन्न आकार, स्वरुप तथा अलंकरण या विच्छेदन द्वारा रुप प्रदान किये जाते है, उसके पश्चात् जब मोजड़ी सामान्य रुप से तैयार कर ली जाती है तो उसे विभिन्न प्रकार से अंलकरित किया जाता है। जैसे– कन्गुरे, घूघरे, रेशमी धागे, ऊनी धागें आदि के प्रयोग द्वारा इसी प्रकार छोटे कांचों, मोतियों द्वारा उसे अलंकरित किया जाता हैं।

राजा, महाराजा और जागीदारों की जूतियाँ मखमल, जरी मोती तथा अमूल्य रत्नों से जड़ित होती थी। शादी के समय जब मोची दूल्हे के लिए विशेष जूतियाँ लाता था, तो उसे **'बिन्दोली'** कहा जाता है।

राज–राजवाड़ों में चोंचदार जूतियाँ पहनने का रिवाज प्रचलित रहा है जिनसे चलने पर करड–करड की आवाज आना रौब का चिन्ह माना जाता है। शादी–शुदा स्त्रियाँ रंगीन, कशीदें एवं जरी वाली मोजड़ी पहनती है, परन्तु विधवाएँ सिर्फ काले चमड़े की सादि जूतियाँ ही पहनती हैं।

ऊँट सज्जा :

ऊँट के शरीर को गोदना, उसके बालों की कटिंग कर विशेष प्रकार की आकृतियाँ बनाना तथा विभिन्न प्रकार के पारम्परिक आभूषणों द्वारा उसकी सज्जा करना ऊँट सज्जा कहलाता है। यह इस क्षेत्र की पारम्परिक कला भी रही है, क्योंकि इस क्षेत्र विशेष रेगिस्तान का भाग रहा है तथा ऊँट यहां के साधन का प्रमुख अंग है। अतः यहां के जनजीवन में ऊँट की महत्ता अधिक रही है। ऊंट की सवारी अपने आप में अनोखी व अनूठी होती है, तथा इस प्रकार ऊँट की सज्जा पर्यटक को आकर्षित करती हैं।

चित्र सं. 21, सम गाँव का एक दृश्य

कोठी एवं तिजोरी –

जैसलमेर क्षेत्र में अलंकृत कोठियां भी देखी जाती है। इन कोठियों पर रिलीफ चित्रों द्वारा अलंकरण किया जाता है। कोई भी कोठी अलंकरण रहित नहीं छोड़ी जाती है। कोठियां के दो प्रकार प्राप्त होते है। जो चित्र में दर्शायी गई है। एक अनाज भण्डारण के लिए प्रयुक्त की जाती है। जिसके उपर का हिस्सा खुला हुआ होता है तथा नीचली सतह पर एक गोल वृताकार छिद्र होता है । उपरी खुले हिस्से से कोठी में अनाज भरा जाता है तथा नीचे बने छिद्र के माध्यम से अनाज को पुनः प्राप्त किया जाता है।

चित्र सं. 22, बड़ा देवा गाँव में स्थित कोठी एवं तिजौरी

तिजौरी का प्रयोग खाद्य सामग्री को सुरक्षित रखने या सरंक्षण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। जिसमें सामने की ओर एक छोटा सा द्वार होता है, जो सामग्री रखने के पश्चात् बंद किया जा सकता है। दोनों प्रकार के निर्माण के समय ही कच्ची मिट्टी पर मट्टी द्वारा ही रेखीय स्वरुपों से ज्यामितीय आकृतियों के संयोजन से अलंकृत किया जाता है।

हटड़ी –

यह बील का ही एक स्वरुप प्रतीत होता है जो दीवार के सहारे ना होकर पूर्णरुप से स्वंतत्र बनाया गया है। इसका निर्माण भी बांस की खपच्चियों को मिट्टी द्वारा जोड़ते हुए तालाब की मिट्टी में धोड़े, गधे की लीद मिला कर मिश्रण का लेपन किया जाता है। जिस पर सफेद रंग का आवरण किया जाता है। यह एक झुलेनुमा आकृति का स्वरुप है जिसमें आधार भाग कुछ मोटाई लिए हुए है तथा आधार का उपयोग व अन्दर के भाग का उपयोग दीपावली के समय दीपक रखने के लिए किया जाता है। आधार भाग के उपर की और

चित्र सं. 23, बरमसर गाँव में लाभु देवी द्वारा निर्मित पुरानी हटडी

भाग को त्रिभुज ने समान रखना प्रदान करते हुए अलंकार प्रदान किया गया है, जबकि उसके उपरी भाग को इसी प्रकार त्रिभुज के समान छोटी–छोटी आकृतियों में सम्मिलित कर अलंकरणात्मक व सौन्दर्यात्मक कलाकृति का स्वरुप प्रदान किया गया हैं। पिरामिडनुमा आकृति की बनी हुई यह रचना का मूल मंदिर के स्वरुप पर आधारित है तथा उसी के आधार पर इसकी संरचना की गई हैं। इसे आम बोलचाल में ''हट्डी'' कहा जाता है। इसे समृद्धि का प्रतीक माना जाता था।

हटड़ी का एक सामान्य स्परुप घर में सामग्रीयों को रखने में प्रयुक्त होता है। यह भी दीवाली पर हटडी के साथ रखा जाता है जिसमें मिठाई, फटाके आदि संग्रहित किये जाते है।

पोकरण कला (टेराकोटा) –

जैसलमेर के पोकरण नामक स्थान से प्राप्त मिट्टी को आकार प्रदान कर उसे पकाया जाता है। और इस प्रकार बनने वाले मिट्टी के खिलौने पोकरण के खिलौने (टेराकोटाकला) कहलाते है।

यह खिलौने वास्तविकता को प्रदर्शित करते है तथा अनुपम सौन्दर्य युक्त आभा लिए हुए होते है। हस्तशिल्प के अन्तर्गत आने वाली यह कला बचपन के भावों को जागृत करती है। जबकि बालकों को सकारात्मक प्रेरणा प्रदान करती है। यह सृजनात्मकता यहाँ की कलाकृति में स्पष्ट दिखाई देती है। सघे हुए हाथों पर बनने वाली हाथी, ऊंट, घोड़े, दीपक, मंदिर की कलाकृतियों आकर्षण व मनमोहक होती है। जो अनायास ही ध्यान अकर्षित करती है।

चित्र सं. 34, पोकरण कला के आकर्षक खिलौने

रोटी परोसने की तश्तरी –

रोटी परोसने की इस तश्तरी का निर्माण गेंहू के पौधे से बचे हिस्से की लकड़ी जो पट्टीनुमा या चपट्टी रस्सीनुमा लम्बी पट्टीयों को आपस में गुथकर बनाया जाता है। संघे हुए हाथों से गुथे गई इस प्रकार की तश्तरी मनमोहन, सुन्दर व खुबसूरत लगती है तथा मन में हर्ष की एक लहर उत्पन्न करती हैं।

इस प्रकार की तश्तरी में एक के बाह एक गांटनुमा संरचना बनती है तथा उनके मध्य कुछ खाली स्थान रह जाता है, जिससे वायु का संचरण होता रहता है। वृताकार आकृति में निर्मित इस प्रकार की हस्तकला का उपयोग घर की रसोई में तथा त्यौहार विशेष पर कुछ परोसने के लिए किया जाता है। इस प्रकार की तश्तरी में रोटी रखने पर वह मुलायम बनी रहती है। गेहूँ के बाहरी आवरण से प्राप्त पट्टियों को पानी में भिगोकर फिर उन्हें गूथा जाता है।

चित्र सं. 25, अधुरी कृति

चित्र सं. 26, रोटी बनाने की तश्तरी

बकरी के बाल के कम्बल –

जैसलमेर के इस क्षैत्र में एक विशेष हस्तशिल्प का उदाहरण दिखाई दिया जो विचित्र भी है और विशिष्ट भी। यहाँ लोककला केवल इसी क्षेत्र तक सीमित है। इसमें यहाँ पाली जाने वाले बकरी जिसके शरीर पर घने व लम्बे बाल पाये जाते है। उस बाल को प्राप्त कर उनसे रेशे बनाये जाते है। तत्पश्चात् उन रेशों को गुथ कर उससे कम्बल बनाये जाते है। यह विशेष प्रकार के कम्बल पशुओं को सदी से बचाने के कार्य में प्रयुक्त किये जाते है।

चित्र सं. 27, काठौड़ी गाँव में बकरी, बकरी के बाल, रस्सी बनाता ग्रामीण व बालों से बनी रस्सी का कम्बल

पेच वर्क – जैसलमेर में कपड़ों के टुकड़ों को जोड़ते हुए अलंकृत चादर नुमा वस्त्र का निर्माण कर विभिन्न प्रकार के दैनिक कार्यों के उपयोग होने वाली वस्तु निर्मित की जाती है। जैसे – थेले, झोले, बिछोना, दरी, दिवार सज्जा इत्यादि।

चित्र सं. 28, पारेवर गाँव की नाखू देवी द्वारा निर्मित पेच वर्क का बिछोना

लोक गायन शैलियाँ –

जैसलमेर क्षेत्र में मुख्य रुप से तीन लोक गायन शैलियां प्रसिद्व है।

- 10 वीं व 11वीं शताब्दी में जैसलमेर क्षेत्र माण्ड क्षेत्र कहलाता था। अतः यहाँ विकसित गायन शैली माण्ड गायन शैली कहलायी। यह श्रृंगार प्रधान गायन शैली हैं।

इसकी प्रमुख गायिकाएँ –

– अल्लॉ जिल्हा बाई (बीकानेर)– केसरियां बालम आवो नी।
– गबरी देवी (पाली)– भैरवी युतु मॉड गायकी में प्रसिद्ध।
– गवरी देवी (बीकानेर)– सादी मॉड गायिका।
– मांगी बाई (उदयपुर)– राज्य गीत प्रथम बार गाया।
– जमिला बानो।

– बन्नों बेगम–प्रसिद्व नृतकी **'गोहर जान'** की पुत्री है।

- **मांगणियार गायन शैली –**

राजस्थान के पश्चिम क्षेत्र जैसलमेर व बाड़मेर में इसका गायन व वादन किया जाता है। यह मुस्लिम जाति है। प्रमुख वाद्य यंत्र कमायना तथा करताल हैं।

प्रमुख गायक –

– सदीक खां (प्रसिद्ध खडताल वादक)
– साकर खां (प्रसिद्व कमायण वादक)

- **लंगा गायन शैली –**

बडवणा गांव **'लंगो का गांव'** कहलाता हैं। यह गायिकी जैसलमेर–बाडमेर जिलों में हैं। यह जाति मुख्यतः राजपूतों के यहां वंशावलियों का बखान करती है। प्रमुख वाद्य यंत्र कमायचा तथा सांरगी हैं।

प्रसिद्व गायकार –

– अलाउद्दीन खां लंगा
– करीम खां लंगा

---

[1] जसंविदर सहगल, http#//www.dw.com

द्वितीय अध्याय

जैसलमेर क्षेत्र की आलेखनात्मक लोककला माँडना एवं अलंकरण की लोक प्रवृत्ति

1. माँडना अंकन की परम्परा
2. माँडना का स्वरुप
3. तकनीक
4. रूपविधान
5. वस्तुनिरपेक्ष गुण
6. राजस्थान की अन्य माँडना कलाओं से तुलनात्मक अध्ययन

माँडना अंकन की परम्परा

लोक कला में माँडना सदियों से हमारे संस्कृति का एक हिस्सा रही है। यह कला हमारे तीज त्यौहारों, पर्वों व शुभ कार्यों (जैसे – शादी, पूजा आदि) पर घरों में मांगलिक संकेतों के रुप में अंकित की जाती है। त्यौहारों तथा पर्वों के अनुसार माँडना के स्वरुप में अन्तर देखा जा सकता है। यह अंतर क्षेत्रगत व जातिगत दृष्टिगत होता है।

इसे बनाने का कार्य महिलाऐं करती है। जो बचपन से अपनी माँ व परिवार की अन्य महिलाओं को माँडना बनाते देख इस कला को आत्मसात् कर इसमें पारंगत हो गयी है। यह कलात्मक रुप इनके सदे हुए हाथों से त्रुटि रहित सीधे मस्तिष्क से धरातल पर गेरु व चूना से उकेर दिये जाते है। यह आकृतियाँ ज्यामितीय, लयात्मक रुपों में सृजित की जाती है। इनमें पशु–पक्षी, फूल, लताऐं व अन्य आकृतियों का सृजन अलंकरणात्मक रुपों को प्रस्तुत करते है। जो वातावरणीय प्रभाव से युक्त होता है।

चित्र सं. 29, माँडना का अंकन करती महिला, ग्राम जालेड़ा (बूँदी)

सम्पूर्ण राजस्थान में माँडनों का चित्रण लोक सांस्कृतिक व पारम्परिक रुप में उपस्थित है। परन्तु हर क्षेत्र में भिन्नता होते हुए भी रंग व आकृतियों के संयोजन में समानता दृश्यमान होती है। राजस्थान में बनाये जाने वाले माँडनें मुख्यतः दो रंगों के संयोजन से अंकित किये जाते है। इनमें खड़िया के साथ कभी गेरु तो कभी पीली मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। कई स्थानों पर रंगाकन सपाट अलंकरण रहित तो कहीं पर चिर–भरण व फूल–पत्तियों, बेल–बूटों, कंगुरों आदि के माध्यम से अलंकृत किये जाते है। इसी प्रकार रेखांकन को कहीं पतला, तो कहीं मोटा बनाया जाता है।

लोक चित्रण की यह परम्परा ग्रामीण समाज में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका रखती है। गांवों में मान्यता है कि घरों की दिवारों को खाली छोड़ना अशुभ होता है तथा इसी कारण आंगन, दिवारों, चौखट आदि सभी स्थानों पर माँडना अंकन किया जाता है। यह आकृतियाँ शुभ मंगल का प्रतीक होती है तथा साथ ही महिलाओं को समाज में सम्मानजनक स्थान प्रदान कराती है। जितना सुन्दर अंकन वह अपने घरों के स्वरुप को माँडना द्वारा प्रदान करती है। उतनी ही अच्छी छवि समाज में स्वयं की प्रस्तुत करती है। यह स्वरुप महिलाओं के मन की छवि को प्रस्तुति देती है। यह सरल रुप जो कई सरल अलंकरणों रेखाओं से सृजित किये जाते है। सृजनकर्त्ता की सादगी पूर्ण मानस की छवि सा प्रतीत होता है। इसमें

चित्र सं. 30, जैसलमेर क्षेत्र का माँडना से सुसज्जित घर

गति, लय तो कहीं ज्यामितीयता का प्रदर्शन किया जाता है। साथ ही ये वस्तु निरपेक्ष गुणों से भी युक्त होती है। सरलीकृत रुपों में अंकित आकृतियाँ पशु–पक्षी, मानव, फूल–पत्ती आदि प्रकृति के कई रुपों को उनके वातावरणीय प्रभाव के अनुसार अंकन करती है। इस अंकन में स्वतः ऐसे रुपों का सृजन हो जाता है। जो बनाई गयी आकृति के स्थान पर छोड़े गये आधार को रुप प्रदान कर देते है।

कला के ये रुप राजस्थान की खुशबु से युक्त है। इसमें सादगी व कलात्मक रुपों का संगम है तथा ये संस्कृति व समाज का एक दर्पण है। जो सदियों से हमारी परम्पराओं का एक अटूट हिस्सा बनी हुई है।

माँडना का स्वरुप

माँडनों ने विभिन्न आकृतियों का सम्मिश्रण या समावेश किया जाता है परन्तु आकृतियाँ गोल, चौकारे, त्रिभुजाकार तथा अन्य आकृतियों को मिलाकर रचना को साकार रुप प्रदान किया जाता है। जिससे उस रचना या मांडने का महत्व अधिक बढ़ जाता है। साथ ही मांडने में त्यौहार, उत्सव, पर्व, रीति–रिवाजों के अनुरुप ही रुप प्रदान किया जाता है। अधिकांश माँडनों में फूल पत्ती दीये, पशु–पक्षी के मुख, पंख आदि का प्रयोग अधिकांश किया जाता है।

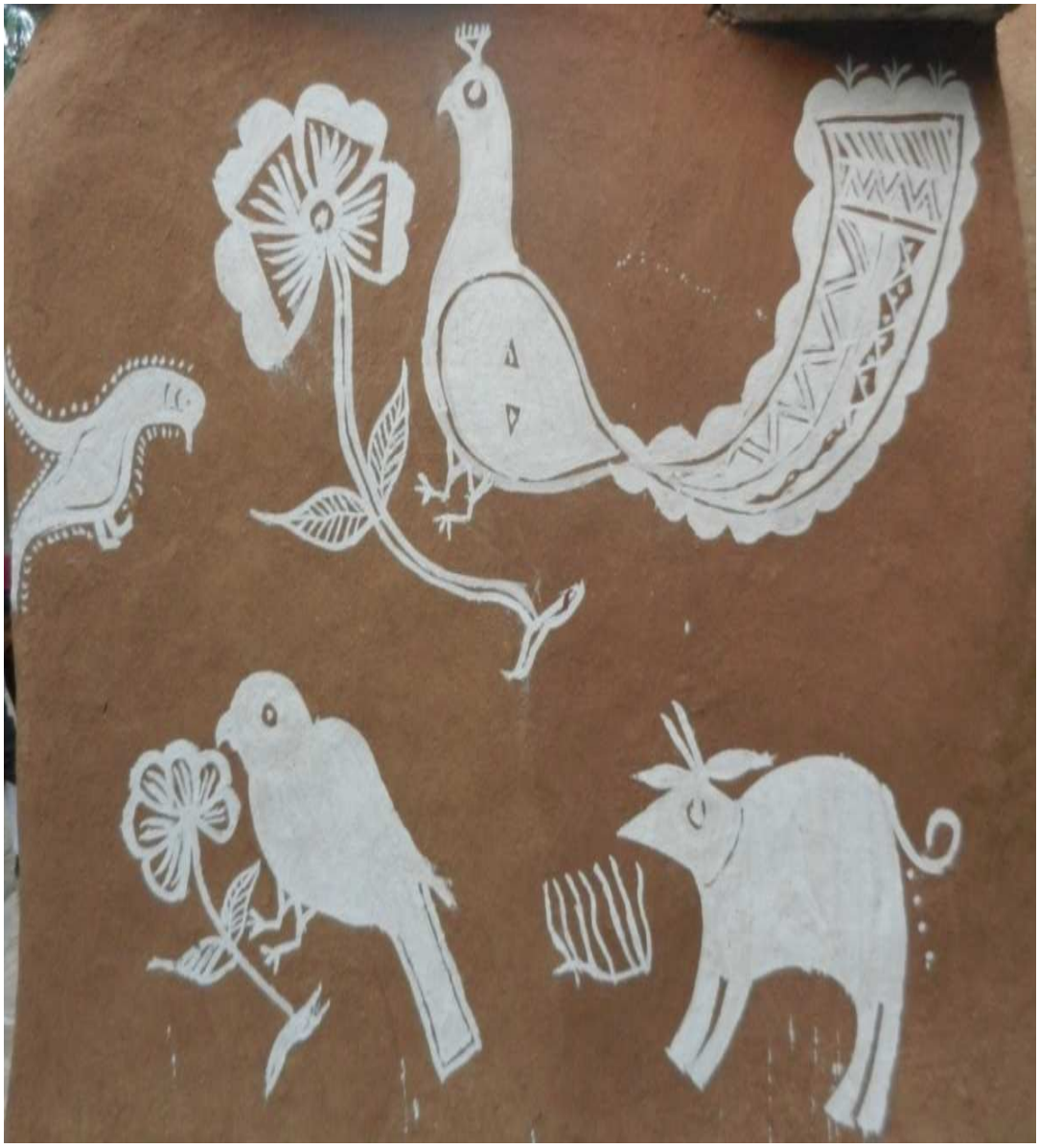

चित्र सं. 31, सवाई माधोपुर के भित्ति माँडनों स्वरुप

ग्रामीण क्षेत्र की महिलाऐं, बुजुर्ग महिलाऐं के रीति–रिवाजों के अनुसार माँडनों का प्रयोग व उपयोग करती है। इसमें स्थिति का भी विशेष ध्यान रखा जाता है, कि कौन–सा माँडने चौक के मध्य में और किस प्रकार से बनाया जायेगा। घर के बाहर की दीवार तथा अन्दर की दीवार पर किस प्रकार के माँडने का प्रयोग होगा। यह पीढ़ी दर पीढ़ी रीति–रिवाजों के अनुसार होता आ रहा है।

ग्रामीण क्षेत्र में अंचल व परिवेश का प्रभाव तथा यहाँ के वातावरण का प्रभाव स्पष्ट नजर आता है। सीधी–साधी जीवन शैली पर आधारित माँडने का स्वरुप दिखाई देता है परन्तु वर्तमान समयानुसार तथा आधुनिकता की झलक भी अब माँडने में दिखाई देती है। सभ्य समाज तथा पढ़ी लिखी महिलाऐं व कन्याऐं अपनी सोच, ज्ञान के आधार पर भी इसमें कलात्मकता लाने की कोशिशें करती है।

वर्तमान में रंगो की विविधता तथा आकृतियों के ज्ञान तथा ज्ञान के विस्तार के साथ इसमें आधुनिकता की झलक दिखाई देती है परन्तु माँडनों की ज्ञान रखने वाली महिलाऐं पारम्परिक माँडनों का ही अधिकाशः प्रयोग करती हैं।

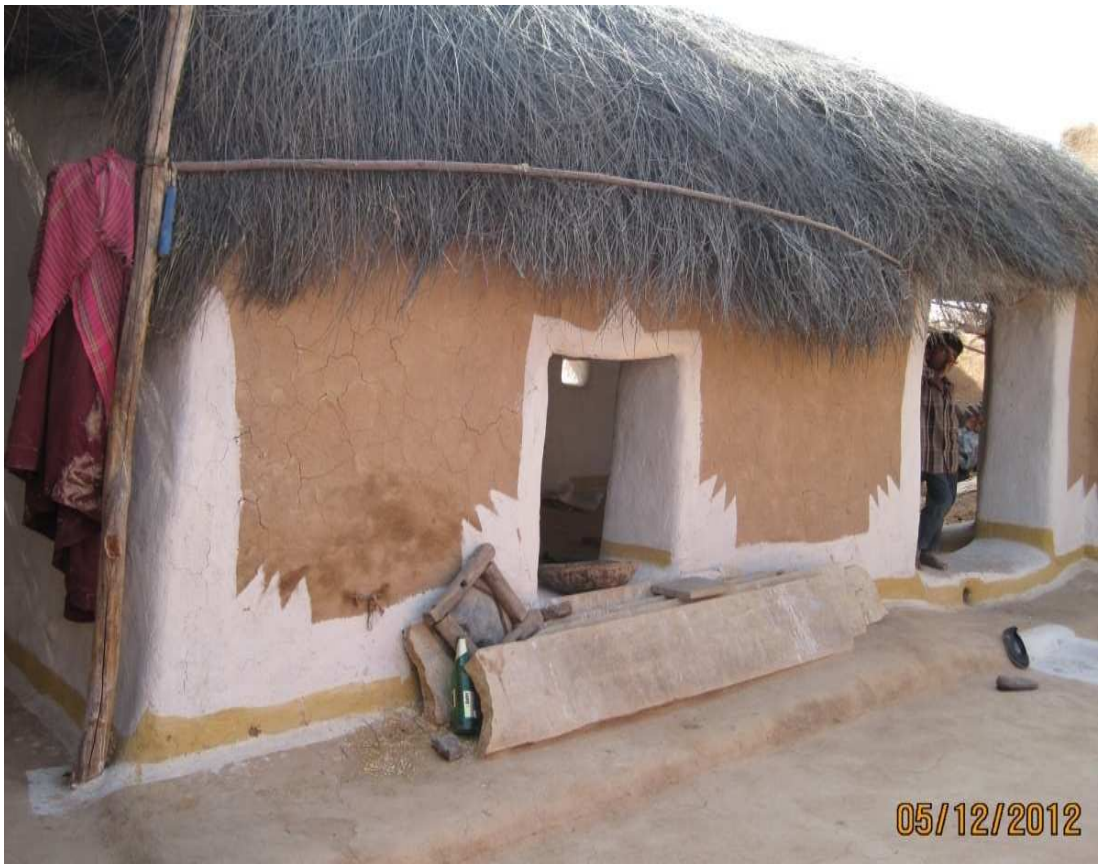

चित्र सं. 32, जैसलमेर के 'मन्धा' गाँव का एक दृश्य

जैसलमेर में बने माँडना स्वरुप सरल व ज्यामितीय रुप में अलंकरण रहित प्रस्तुत किये जाते है। जिसका कारण यहाँ की भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा मुस्लिम संस्कृति का प्रभाव माना जा सकता है। क्योंकि मुस्लिम संस्कृति में पशु–पक्षियों व मानव का अंकन नहीं किया जाता है। उसी प्रकार भी पशु–पक्षी या सजीवों का अंकन नहीं किया गया है। यहाँ भित्तियों पर माँडना में सपाट चौड़ा पट्टीनुमा रंगाकन कर दरवाजों, खिड़कीयों व आल्यों के चारों ओर तथा भित्ति के निचले हिस्सों में बॉर्डर के रुप प्रकट किये गये है। दरवाजों के दोनों ओर निचली सतह पर सीढ़ीनुमा कोणीय आकृतियों को बनाया गया है। इस प्रकार यहाँ ज्यामितीय, अलंकरण रहित आकृतियों का सृजन भित्तीय अलंकरण में मुख्य रुप से किया गया है। कहीं–कहीं कोणीय आकृतियों के ऊपरी भाग पर कुछ पत्तियाँ बना दी गई है।

माँडना में अन्य रुप का सृजन बाह्य प्रभाव को प्रदर्शित करता है। यहाँ भित्ति पर ज्यामितियों आकृतियों के रुप मूल रुप में सृजित किये गये है। माँडना के स्वरुप में विस्तार करते हुए छोड़े गये स्थान से आकृतियों का सृजन अद्भूत आकृतियों के रुप में प्रकट होता है। ये छुटी हुई आकृतियाँ स्वतः ही निर्मित हो गयी है। जो वस्तुनिरपेक्ष गुणों को प्रदर्शित करती है। माँडनों के यह सरल रुप आस–पास के क्षेत्रों में भी देखे जाते है। यह आकृतियाँ चूना, खडिया व पीली मिट्टी के संयोजन से अंकित की गई है। जो कच्चे घरों को अंलकरणात्मक व धार्मिक स्वरुप प्रदान करते है।

तकनीक

ग्रामीण आंचल व देहात की अधिकांश महिलाऐं इस कार्य को अपने सधे हुए हाथों से ही करती है। इसके लिए वह अपनी अगुलियों का इस्तेमाल करती है, साथ ही रंगो का उपयोग रूई या कपड़े के फोहे तथा कई जगह बालों के गुच्छे के साथ रंगो को लेकर अगुंली तथा अंगूठे की सहायता से भावों को आकृतियों द्वारा अभिव्यक्ति प्रदान करती है।

प्राकृतिक रंगो जैसे गेरू, खड़ीया के उपयोग द्वारा जब गोबर द्वारा लिपे हुए स्थान पर मांडने बनाये जाते हैं तो मन को एक सुखद आभास प्रदान करती है तथा मन को शान्ति प्रदान करती है। मन व मस्तिष्क में एक उत्साह व उमंग का अद्भूत संचार के रुप में प्रतीत होती है। वर्तमान में मांडाने को बनाने में ब्रश या कूंची का भी उपयोग किया जाने लगा है। परन्तु इसमें पारम्परिक मांडने का स्वरुप दिखाई नहीं देता है।

इनमें कई स्थानों पर गेरू के स्थान पर पीली मिट्टी का प्रयोग किया गया है। सफेद चूना मिट्टी का प्रयोग माँडना अंकन में मुख्य रुप से देखा जाता है। आकृतिय सृजन में कोणीय आकृतियाँ प्रमुख रुप से सृजित की गयी है। जिन्हें तीन या पाँच के क्रम में मुख्यतः बनाया गया है तथा सम्पूर्ण दीवार पर घोड़े, गधे व ऊँट के गोबर में मिट्टी, तुई आदि के प्लास्टर को तैयार कर लिपा जाता है। उसके उपरान्त रंगाकन का कार्य किया जाता है।

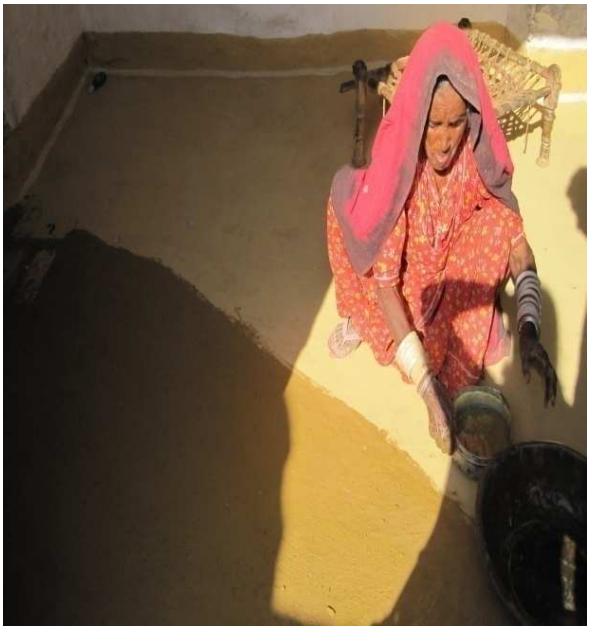

चित्र सं. 33, माँडना का रचना कार्य

रुपविधान

अधिकांशतः माँडनों का प्रयोग समतल स्थल तथा आंगन के मध्य किया जाता हैं। अधिंकाशः माँडनों का सम्पूर्ण स्वरूप गोल या चौकोर आकृति लिए हुए होता है।

चित्र सं. 24, नरसिंहों की ढाणी का एक दृश्य

जैसलमेर के मांडनों का रुप में दो प्रकार के रुप दिखाई देते है।

प्रथम जिसमें पट्टिनुमा आकृति तथा कोणीय आकृति दृष्टिगत होती है। कोणीय आकृतियों के स्वरुप में ऊर्ध्वाकार रुप पर पत्तियों के तीन स्वरुप बनाये जाते है। इसी प्रकार से दीवार में बने आल्यों को अन्दर की ओर सफेद रंग से रंगाकन कर बाहरी क्षेत्र पर पट्टीनुमा आकृति द्वारा आकार स्वरुप सौन्दर्यात्मकता प्रदान की जाती है।

चित्र सं. 35, ग्रामीण क्षेत्र के घर के आंगन का दृश्य

द्वितीय रुप में सम्पूर्ण दीवार के क्षेत्र को सफेद रंग से रंगा जाता है परन्तु मध्य भाग को ऊर्ध्वाधर/ऊपर की ओर चतुर्भुज आकार में तथा नीचे के भाग में दो प्रकार की आकृति के स्वरुप छोड़ दिये जाते है । नीचे की ओर का मध्य भाग आयताकार या चतुर्भुज आकृति में छोड़ दिया जाता है, जबकी कोणीय भाग को पत्तियों के अग्रभाग के रुप में पाँच पत्तियों के रुप में अंकित किया जाता है।

चित्र सं. 36, काठोरी गाँव का माँडना दृश्य

आकृति के मध्य भाग में टिपकियां बनाकर या स्वास्तिक की आकृति बनाई जाती है। इस विधान के दोनों स्वरुप में रंगों में विपरीतता का आभास होता है। परन्तु पहले रुप में रंगों का प्रयोग सम्पूर्ण दीवार पर किया जाता है, जबकि दूसरे स्वरुप में दीवार के स्थान को छोड़ कर माँडनों की आकृति प्रदान की जाती है।

जैसलमेर क्षेत्र में अधिकांश माँडना सरलता से परिपूर्ण है। इन माँडनों में प्रमुख रुप से कुछ आकृतियों जैसे तीर, त्रिभुज, गोल, पत्ती, पान आदि के साथ आड़ी तिरछी रेखाओं का समायोजन व सामंजस्य दिखाई देता है। यह यहाँ की जनमानस व लोककला के जीवन के सार की साधारणता व सामान्यता तथा सरलता को दर्शाती है।

उपरोक्त माँडने के मध्य भाग में चांद व तारों में समूह बनाया गया है तथा गोलाकार आकृतियों को मध्य में टिपकी द्वारा तथा गोले का बाह्य भाग तिरछी रेखा द्वारा अंकित किया गया है। यह चौक माँडना स्वरुप समतल रेखीय रूपों में बनाया गया है।

चित्र सं. 37, जैसलमेर के दऊ गाँव का चौक चित्रण

जैसलमेर के कुछ गाँवों या ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार के मॉडनों के भी प्रकार प्राप्त हुए है। जिसमें **"v", "^", "<", ">"** इस प्रकार के आकृति के मॉडने है तथा इस आकृति के माँडने है तथा इस आकृति को एक दूसरे के साथ सम्बद्ध करते हुए दरवाजे के चारों ओर पट्टिकानुमा माँडने बनाये जाते है तथा दीवार व समतल के कोण पर चतुर्भुज या आयत की आकृति को बड़ा बनाकर उसके उपर की ओर त्रिभुजाकार आकृति पर पौधेनुमा संरचना बनाई जाती है।

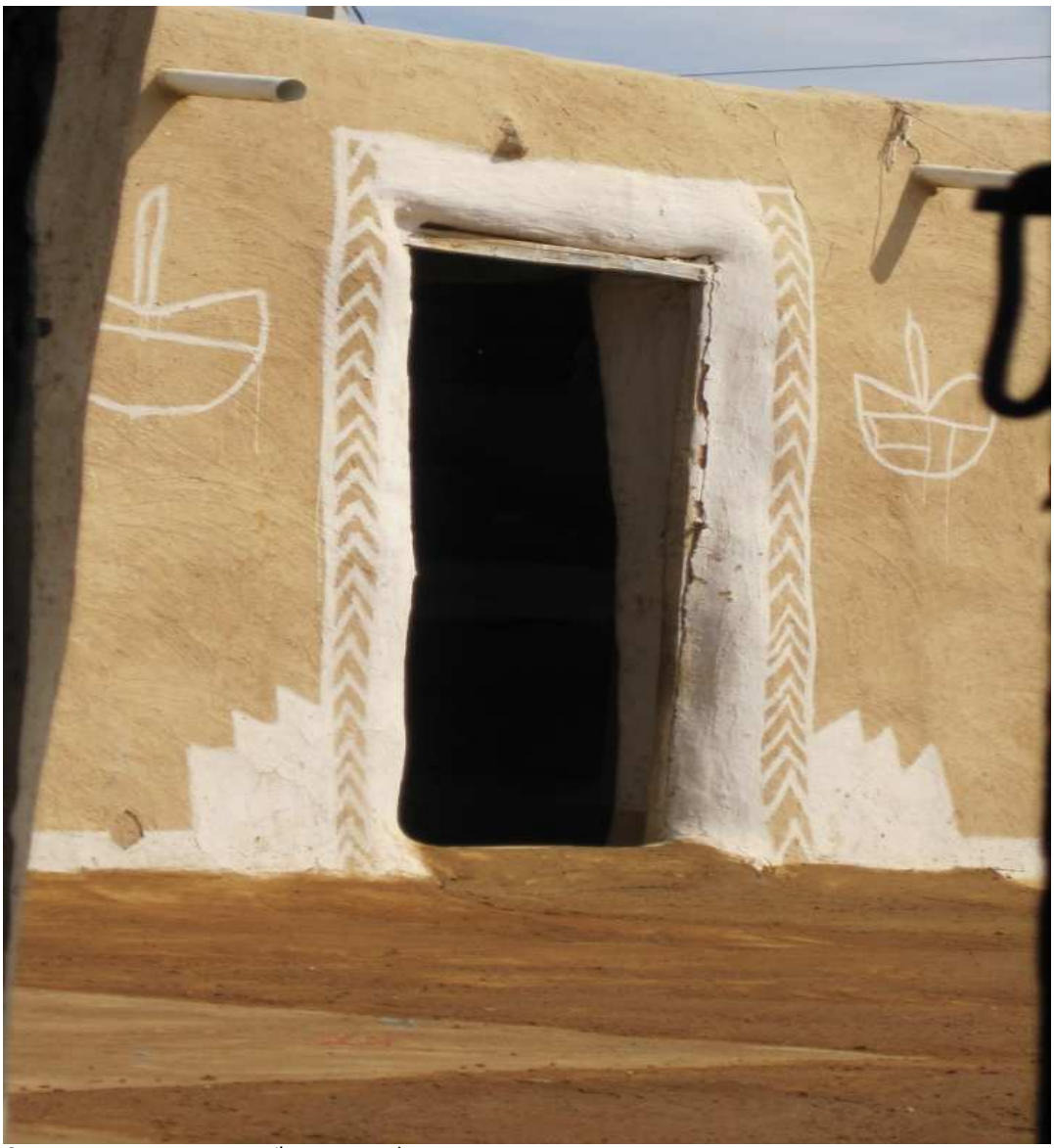

चित्र सं. 38, द्वार पर बना माँडना, ग्राम देवा

'मोड़' शादी का माँडना – इस क्षेत्र विशेष में एक विशेष प्रकार का शादी का माँडना बनाया जाता है, जिसे मोड कहा जाता है। जो पंचभुजाकार स्वरुप में होता है तथा दुल्हा–दुल्हन के कमरे में ही बनाया जाता है। इस माँडने की इसकी विशेषता यह है कि इस माँडने के मध्य भाग में दूल्हा–दूल्हन रेखाकिंत है, और एक विशेष आकृति लेटी हुए अवस्था में बनाई जाती है जो पुरातन समय में मनुष्य को संकेत रुप में इंगित करते है। यह आकृति सास की मानी जाती है तथा मान्यता के अनुसार दूल्हें के पास दुल्हन आ गई है अतः सास उनसे अलग हो गई है। यह मॉडना अपने आप में विशेष व विचित्र है।

चित्र सं. 39, शादी के अवसर पर बनाये जाने वाले 'मोड' नामक माँडना

पग्ल्या –

यह माँडना शुभ एवं मांगलिक अवसरों पर घर में लक्ष्मी के पैरों के निशान के रुप में शुभ संकेत को प्रकट करते हुए अंकित किया जाता है। पग्ल्या विशेष रुप से दीपावली के अवसर पर घर के आन्तरिक एवं बाह्य भाग में बनाया जाता है।

चित्र सं. 40, पग्ल्या माँडना, ग्राम कोटड़ी, जैसलमेर

चित्र सं. 41, द्वार माँडना, ग्राम बोआ

कुछ माँड़ने के स्वरुप में दरवाजे के ऊपर की ओर पट्टिनुमा आकृति लटकती हुई सी बनाई जाती है। जो दरवाजे के मध्य भाग तक होती है तथा मध्यभाग के अन्तिम छोर पर चौकोर आकृति का चित्रण कर दो या तीन पट्टिनुमा आकृति का चित्रण कर उसे पूर्ण कर दिया जाता है। इसके लिए चूने के रंग युक्त मिट्टी का प्रयोग भी किया जाता है।

इस प्रकार के माँडनों के स्वरुप में प्रमुख रुप से दो रंगों के सामंजस्य व सहयोग से मांडनों को स्वरुप प्रदान किया जाता है। अधिकांशतः सफेद रंग जबकि सफेद रंग के साथ अधिकांश पीली मिट्टी से बना रंग जो कच्ची दीवार पर गेहूऐं रंग का प्रदर्शन करता हुआ प्रतीत होता है। इस प्रकार से दो रंगों का मुख्यतः समायोजन दिखाई देता है। कहीं–कहीं पर अन्य माँडनों के स्वरुप में अन्य रंगों का प्रयोग भी देखा गया है। पीली मिट्टी के स्थान पर गेरु रंग का भी सामान्तया प्रयोग किया जाता है।

चित्र सं. 42, प्रवेश द्वार का एक दृश्य

चित्र सं. 43, भित्ति अलंकरण का एक स्वरुप

भित्ति अलंकरण के लिए घर की आंतरिक भित्तियों की निचली सतह पर चूना, पीली मिट्टी या गेरू का प्रयोग करते हुए। इस प्रकार साधारण पट्टीनुमा आकृतियों का संयोजन कर माँडना बनाया जाता है, तथा भूमि पर मोटी रेखा बनाई गई है तथा सभी कोनों पर रेखा व बिन्दुओं से फूल अलंकरण बनाये गये है, जो कि घर को सरल व साधारण रुपों के माध्यम से अद्भुत, अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान करता है। ये सरल ज्यामितीय आकार इस क्षेत्र के घरों में मुख्यतः देखे जाते है। जो इनकी साधारण जीवन शैली को प्रकट करने वाले होते है।

चित्र सं. 44, हाबूर गाँव का एक दृश्य

वर्तमान समय में माँडना स्वरुपों में बाह्य प्रभाव देखा जा सकता है। उपरोक्त माँडना के रंगों व आकृति दोनों ही मूल रुप से अलग प्रकट की गई है। यहाँ बच्चों की चित्र पुस्तिकाओं में बनाये जाने वाले फूल व गमले का प्रयोग भित्ति अलंकरण के रुप में हुआ है तथा रंगाकंन में गेरू व खड़िया के स्थान पर अन्य रंगों का प्रयोग किया गया है।

वस्तुनिरपेक्ष गुण

चित्र सं. 45, खीया गाँव का एक दृश्य

अधिकांश माँडने का रुप तथा आकृति का विस्तार इतना रखा जाता है कि दूर से भी आसानी से दिखाई दे, परन्तु छोटी आकृतियों दूर से स्पष्ट दिखाई नहीं देती है, परन्तु उनका आभास स्पष्ट दिखाई देता है। स्थान व स्थिति के अनुसार मांडने का स्वरुप, अकृति का निर्धारण किया जाता है तथा इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि विभिन्न आकृतियों के सम्मिश्रण में किस आकृति का कितना बनाना है तथा उसके अंग या भाग कितने बनने है तथा कुछ दूर से देखने पर किस का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होना चाहिए।

माँडनों में जब आकृतियों का निर्माण किया जाता है तो उसमें ज्यामितीय आकृतियों का जो समायोजन या सांमजस्य दिखाई देता है। उस भाग में किस भाग का प्रभाव अधिक दिखाया जाना है या किस भाग की प्रभाविकता का स्तर उच्च रखना है, महत्वपूर्ण होता है।

दूरी के साथ दृष्टि व मानसिकता में आने वाले परिवर्तन से मनःस्थिति या दृष्टिपटल पर बनाने वाले प्रतिबिम्ब का प्रभाव पड़ता है। अतः जैसलमेर के माँडनों में आकृतियों का आकार बड़ा तथा स्वरुप की आकृति बड़ी होती है। रेगिस्तानी क्षेत्र में दूर–दूर तक कुछ भी दिखाई नहीं देता है। अतः जनमानस व पर्यावरण तथा प्रकृति के अनुसार माँडनों के स्वरुप में यह गुण स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है।

चित्र सं. 46, वस्तुनिरपेक्ष माँडना स्वरुप

यहाँ प्राप्त माँडनों में ज्यामितिय आकृतियों द्वारा भावों की अभिव्यक्ति दी गई है। आधार व बनाई गई आकृति के सामंजस्य से कुछ नये रुप प्रकट हो जाते है। जो बनायी गयी आकृति के स्थान पर छोड़े गये आधार से रुपों का सृजन करती है। यहाँ सीमित रंग व आकार दृष्टि व मानस में शान्ति तथा सौम्यता उत्पन्न करते हैं। ज्यामितीय आकृतियों वास्तव में जो आकार सृजित करती है। वह अन्तराल में स्वतः ही बन जाते है। ये रुप बनाई गयी ज्यामितीय आकृतियों से भिन्न रुप प्रस्तुत करती है। ये आकृतियाँ इस तरह वस्तुनिरपेक्ष गुणों का इस लोक कला के सरल रुपों को विशिष्टता प्रदान करने वाली मानसिकता का द्योतक है।

चित्र सं. 47, वस्तुनिरपेक्ष माँडना को प्रकट करती हुई आकृति

राजस्थान की अन्य माँडना कलाओं से तुलनात्मक अध्ययन

यदि हम माँडनों के तुलनात्मक अध्ययन पर प्रकाश डालते है। तो हम पाते कि जैसलमेर के माँडने सीमित अंलकरण से युक्त होते हैं, तथा इनमें अधिकांशः सरल ज्यामितीय आकारों व आकृतियों का प्रयोग किया जाता है। पट्टीनुमा लम्बी संरचना का रंगों द्वारा निर्माण कर उनके मध्य को कोणीय आकृतियों की रचना व संयोजन किया जाता है, जो उसको सम्पूर्णता प्रदान करती है।

यहाँ पर सपाट रंगाकन द्वारा माँडनों का निर्माण किया जाता है। अधिकांश माँडने दिवारों पर बनाये जाते है।

हाड़ौती क्षेत्र में माँडने चौक व दिवारों दोनों पर बनाये जाते है। ज्यामितीय रेखाओं का प्रयोग किया जाता है। साथ ही फूल, पत्तियों, स्वास्तिक व अन्य आकृतियों के संयोजन से चीर व भरण द्वारा उन्हें रंगों का रंगाकनं कर माँडने का स्वरुप प्रदान किया जाता है। अतः इन आकृतियों में इन रंगों को भरा भी जाता है, जिससे सम्पूर्णता का आभास होता है।

चित्र सं. 48, हाड़ौती का चौक माँडना

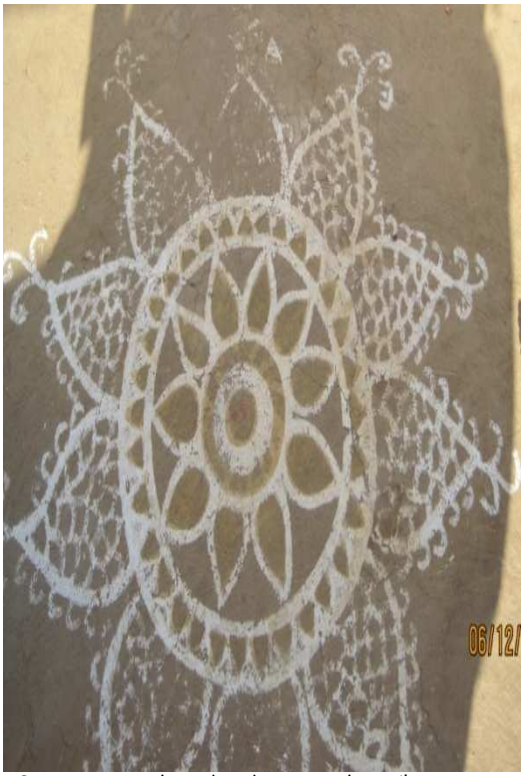

चित्र सं. 49, जैसलमेर क्षेत्र का चौक माँडना

ढूँढार के माँडनों में रेखाओं की मोटाई अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक मोटी होती है तथा अधिकांशतः लाल रंगो से लीपे हुए आधार स्थान पर सफेद रंग द्वारा सरंचना का निर्माण किया जाता है। जिसमें पशु–पक्षी अलंकरण को माँडना में प्रयोग अधिक होते है।

जैसलमेर के माँडनों में ज्यामितीयता, कोणीयता व सहजता मिलती है जबकि हाड़ौती व ढूढ़ाड के माँडनों में तारतम्यता व अलंकरणात्मकता अधिक पाई जाती है।

चित्र सं. 50, ढूँढाड क्षेत्र का भित्ति व चॉक माँडना

राजस्थान के अन्य सभी क्षेत्रों में माँडना के अलंकरणात्मक स्वरुप दृश्यमान होते है। जबकि जैसलमेर क्षेत्र तथा आस–पास के कुछ क्षेत्रों में इस प्रकार के माँडने बनाये गये जो कोणीय व सपाट आकृतियों का संयोजन प्रकट करते है। यह आकृतियाँ अल्प अलंकरण युक्त बनाई जाती है।

चित्र सं. 51, जैसलमेर क्षेत्र के माँडना स्वरुप

चित्र सं. 52, भित्ति पर बनाये गये माँडनों के ज्यामितीय स्वरुप, ग्राम मन्धा

उपरोक्त दृश्य में दिखाए गये भित्ति चित्रण में भित्ति की निचली सतह पर खड़ीया द्वारा सीढ़ीनुमा दो ज्यामितीय आकृतियों के स्वरूप तथा मन्दिर आकृतियों जैसे रुपों को संयोजित करते हुए। भित्ति को अलंकरणात्मक स्वरुप दिया गया है।

खडीया के साथ–साथ हरे रंग का प्रयोग आधुनिक रंगों के प्रति इनके आकर्षण को दर्शाता है।

चित्र सं. 53, भित्ति अलंकरणात्मक स्वरुप

उपरोक्त चित्र में घर की एक छोटी दीवार को लहरदार रेखाओं व पत्तियों तथा त्रिभुजाकार आकृतियों को क्रम में संग्रहित कर मध्य में स्थान छोड़ते हुए चूना मिट्टी द्वारा अलंकरणात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार का संयोजन इस क्षेत्र में अल्प रुप में प्राप्त हुआ है।

चित्र सं. 54, माँडना व माँडने के निर्माता का चित्र

चित्र में सम्पूर्ण दीवार को चूना द्वारा रंग कर पीली मिट्टी द्वारा द्वार को यहाँ माँडना के मूल स्वरुप में अंकित किया गया है। दीवारों व द्वार पर इस तरह के माँडनों के प्रयोग घर में आने वाले मेहमानों को आकर्षण तथा अतिथि देवो भवः के शब्दों को पूर्ण करने वाले भावों को व्यक्त करने का आभास प्रदान करता है।

चित्र सं. 55, आधुनिक रंगों द्वारा बनाया गया माँडने का सूक्ष्म स्वरुप

मन्दिर रुपी आल्या को आधुनिक रंगों द्वारा माँडना के मूल स्वरुप में व्यक्त किया गया है। जो आधुनिकता के इस क्षेत्र की कला में मिलाप को दर्शाता है। यह छोटा सा आल्या जो घर की छोटी से वास्तु का हिस्सा है। इसे भी अलंकरणात्मक स्वरुप देकर विशेष बना दिया गया है। जो इस क्षेत्र के लोगों का माँडना के प्रति इन लोगों की आस्था व्यक्त करता है।

चित्र सं. 56, सम्पूर्ण घर को अलंकृत करता माँडना स्वरुप

चित्र में सफेद दीवार पर पीली मिट्टी द्वारा कोणीय ज्यामितीय आकारों व पट्टीनुमा आकृति के संयोजन से सम्पूर्ण घर के आन्तरिक व बाह्य स्वरुप को सौन्दर्य प्रदान किया गया है। चूल्हे की पिछली दीवार पर पीली मिट्टी द्वारा एक वर्गाकार आकृति पर छोटा सा कोणीय रुप को देकर आन्तरिक व बाह्य रुपों का सन्तुलन व्यक्त करते हुए घर को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान किया गया है।

चित्र सं. 57, घर में माँडना अलंकरण दृश्य

उपरोक्त माँडना अलंकरण सम्पूर्ण भित्ति पर बनाया गया है। भित्ति को खड़िया द्वारा रंग तथा मध्य में एक वर्गाकार कोणीय आकृतियों के संयोजन से छोड़ी हुई आकृति का स्वरुप व्यक्त किया गया है। जो बनाई गई आकृति से भिन्न छोड़े गये रिक्त धरातल को स्वरुप प्रदान करता है। ये रुप ज्यामितीय आकृतियों के अद्‌भुत संयोजन को प्रकट करता है। श्वेत रंग से झाँकता पीली मिट्‌टी का आधार तल वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य को प्रकट करता है।

चित्र सं. 58, आंगन में माँडना का सज्जात्मक स्वरुप

चित्र में सम्पूर्ण घर को माँडना के स्वरुपों से अलंकरण रुप प्रदान किया गया है। घर के द्वारों व आल्यों, रोशनदान व आँगन की भित्तियों को सपाट पट्टिनुमा आकृतियों के संयोजन से सुन्दर रुप दिया गया है। द्वार के दोनों ओर ज्यामितीय कोणीय आकृतियों को सीढ़ीनुमा क्रम में लगाया गया है। जिनके उपरी कोण पर तीन पत्तीयों से अलंकरण किया गया है। दीवार के बीच में भी कोणीय आकृतियों के उठते–घटते क्रम में लगते हुए सम्पूर्ण घर को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान किया गया है।

चित्र सं. 59, वर्ग व कोणीय आकृतियों के संयोजन से बना माँडना

उपरोक्त माँडना में एक आयताकार रिक्त स्थान को छोड़ते हुए सफेद पट्टीनुमा आकृति को संयोजित कर उसके एक तरफ कोणीय आकृतियों को ऊपर से नीचे जाते हुए उठते त्रिभुजों का आकार बनाया गया है। यहाँ खाली रिक्त स्थान पीली मिट्टी के धरातल को व्यस्त करता हुआ दृश्यमान है। ये माँडना अधूरा प्रतीत होता है।

चित्र सं. 60, घर की छोटी दीवार पर माँडना स्वरूप

घर के वास्तु का हिस्सा छोटी सी छोटी दीवार पर भी इस प्रकार के माँडनों का अलंकरण कर शुभ व मंगल कामना की जाती है। यहाँ दीवार के निचली सतह तथा ऊपर तक जाते कोनों पर सफेद पट्टीनुमा अलंकरण किया गया है। मध्य में आकृतियों को संयोजित कर मध्य में एक आयताकार छोड़ अद्भुत ज्यामितीय स्वरुप दिया गया है। जो इस क्षेत्र विशेष प्रमुखता है।

चित्र सं. 61, माँडना में आधुनिकता का प्रवेश

वर्तमान में माँडना स्वरूपों में भी बाह्य प्रभाव दृष्टिगत हो रहा है। रंगों के प्रति आकर्षण होने से अब घर की बाहरी दीवारों पर रंगीन माँडनें बनाये जाने लगे है तथा माँडनों के मूल स्वरूपों का स्थान यहाँ के बच्चों की रंगीन चित्र पुस्तिका के अलंकरणों ने ले लिया है। घमले से फूल निकलता हुआ बनाया गया है। दो समान्तर मोटी रेखाओं के मध्य एक लहरदार रेखा बनाते हुए रंगों द्वारा अलंकृत रुप दिया गया है। मूल माँडना

स्वरुपों से मेल खाते सीढ़ीदार आकार में दृश्यमान हो रहे है। ये माँडने मूल आकृतियों से इन लोगों के लगाव को व्यक्त करते है।

चित्र सं. 62, माँडना से सजा घर

घर आंगन को माँडना रुपों से अलंकृत स्वरूप देने की प्रथा राजस्थान के हर ग्रामीण क्षेत्र से देखी जा सकती है। यहाँ घर की आन्तरिक व बाह्य दीवारों पर माँडना बनाया जाता है। इनके आकारों में सम्पूर्ण राजस्थान से अलग सरल सौम्यता व अलंकरण की अल्पता दृश्यमान है। यहाँ के लोग सादा जीवन व्यतीत करते है। इसी प्रकार के माँडना स्वरूपों को यहाँ देखा जा सकता है। द्वार के दोनों ओर स्वागत स्वरुप में माँडने बनाये गये है तथा दिवार के मध्य में चतुष्कोणीय आल्यों पर भी माँडना के मूल रुपों को बनाया गया है।

चित्र सं. 63, ग्रामीण घर का एक दृश्य

पीली मिट्टी व सफेद खड़िया से अलंकृत कच्चे मकान यहाँ के सांस्कृतिक परिवेश को प्रकट करने वाले होते है। माँडना रुपों व घर के वास्तु में सीढ़ीनुमा आकारों को देखा जा सकता है। यहाँ सफेद रंग से ज्यामितीय आकृतियों से माँडने बनाये गये है। ये सपाट रंगाकन से बने है। परन्तु द्वार के दोनों ओर स्थान छोड़ते हुए कोणीय आकृतियाँ बनाई गयी है। द्वार पर खड़े महिला पुरुष अपने सांस्कृतिक जीवन का परिचय देते माँडना स्वरुपों के मध्य खड़े हैं।

चित्र सं. 64, माँडना अलंकरण में बाह्य प्रभाव

मूल माँडनों के साथ यहाँ फूल पत्तियों को बाल सुलभ आकारों का समावेश करते हुए रुपायित किया गया है। चित्र में रंग, खड़िया व पीली मिट्टी है, परन्तु आकृतियों में बाह्य प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। द्वार के माँडनों का मूल स्वरुप इस माँडने में दृश्यमान होता है, परन्तु मध्य में बाह्य प्रभाव से प्रभावित आकारों का अंकन किया गया है।

चित्र सं. 65, भित्ति अलंकरण स्वरुप

चित्र में द्वार की उपरी भाग को सीढ़ीनुमा आकृति देकर वास्तु कला के कलात्मक स्वरुप के साथ माँडना स्वरुप का समायोजन किया गया है। चित्र में मूल रंगों व आकारों में बाह्य प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। माँडना की ऊपरी सतह पर दो रेखाओं के मध्य अर्द्धगोलाकार तथा एक रेखा को दूसरी रेखा पर लगाकर काटते हुए क्रम में लगाकर जाली स्वरुप प्रदान किया गया है। इस प्रकार मूल स्वरुप में अन्य आकृतियों का समायोजन कर तथा रंगों में बाह्य रंगों का प्रयोग बदलते परिवेश को प्रकट करता है।

चित्र सं. 66, माँडना का अधुरा स्वरुप

उपरोक्त चित्र में सफेद दीवार पर गेरु से रेखाओं द्वारा माँडना स्वरुप को देखा गया है। यहाँ माँडना को रेखीय रुप में ढाँचा बनाते हुए व्यक्त किया गया है। जो माँडना के प्रारम्भिक स्वरूप को दिखाता है।

चित्र सं. 67, ग्रामीण दृश्य

चित्र में गांव का एक दृश्य दर्शाया गया है। जिसमें ग्रामीण माँडनों से सुसज्जित कच्ची दीवारों को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान किया गया है। ग्रामीण परिवेश की संस्कृति का एक हिस्सा ये माँडना स्वरुप अलग–अलग घरों को एकसा रुप देते हुए प्रकट होते है।

चित्र सं. 68, द्वार सज्जा का एक रुप

उपरोक्त चित्र में पट्टीनुमा आकृति में रंगीन फूल पट्टियों से सज्जा की गई है तथा द्वार के दोनों ओर रंगों से दीपक बनाया गया है। ये रंग माँडना के मूल रंग न होकर बाजार में उपलब्ध आधुनिक रंग है। इस प्रकार घर के द्वार आंगन में आधुनिकता का प्रवेश होता जा रहा है।

चित्र सं. 69, माँडना रहित एक घर

चित्र में दर्शाया घर माँडना रहित लिपा हुआ है। यहाँ की वास्तुकला में माँडना जैसी आकृतियों का संयोजन दृश्यमान होता है। जो माँडना लोक अलंकरण का प्रभाव इन लोगों की सोच के साथ जुड़े होने को दर्शाता है।

उपरोक्त चित्र में सूनी दीवारें माँडना की शुभ उपस्थिति के बिना अधुरी सी लगती है। गाँव के ये घर माँडना के बिना व अपूर्ण दृश्यमान होते है।

चित्र सं. 70, रंगीन माँडनों से अलंकृत एक घर

चित्र में आधुनिक व मूल रंगों के संगम से माँडना का अंकन किया गया है। खड़ीया से रंगीन सफेद दीवार पर नीले व गेरू रंगों से अलंकरणात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है।

यहाँ मोर, फूल पत्तियाँ तथा पोधों को अलंकरण के रुप में प्रयुक्त किया गया है। जो मूल माँडना स्वरुपों से भिन्न होते हुए भी आकर्षित करने वाले है।

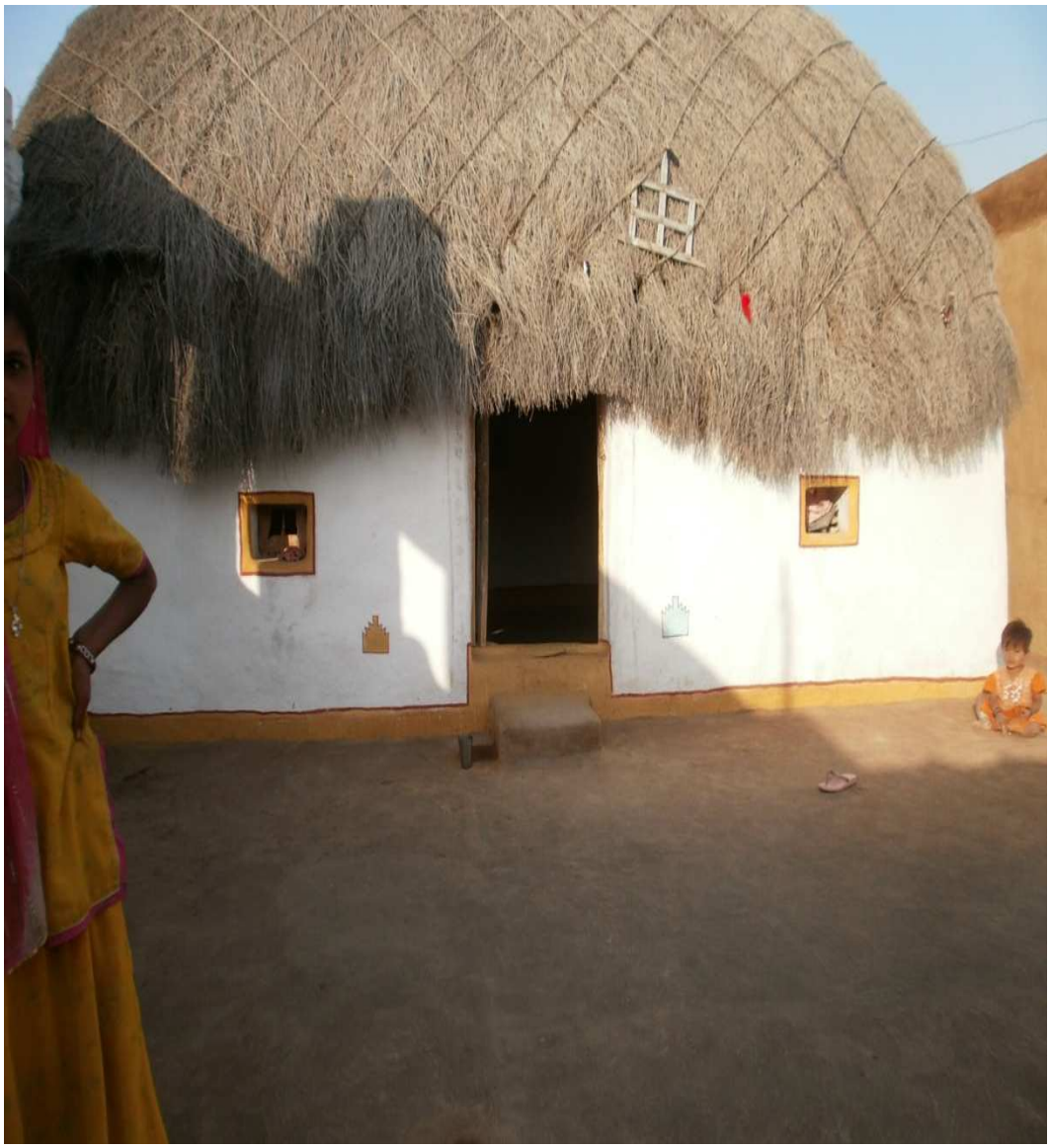

चित्र सं. 71, ग्रामीण परिवेश का एक घर

चित्र में एक कच्चे घर को दर्शाया गया है। जिसकी छत जाल वृक्ष से बनी हुई है तथा उसे रस्सीयों से बाँधा गया है। सम्पूर्ण चित्र में सफेद रंग की आभा विद्यमान है तथा द्वार के समीप एक छोटा सा माँडना रुप प्रकट किया गया है। उपरोक्त चित्र में शान्त, सौम्य, स्वेत रुपों का सामंजस्य कर आकृति को आकर्षण के साथ प्रसन्नता की अनुभूति कराने वाला बनाया गया है।

चित्र सं. 72, बाह्य प्रभाव से युक्त माँडना स्वरुप

चित्र में सम्पूर्ण भित्ति को माँडना स्वरुप के माध्यम से अलंकरणात्मक रुप दिया गया है। यहाँ गेरु, पीली मिट्टी तथा सफेद चुना मिट्टी का प्रयोग एक साथ किया गया है। माँडना में प्रयुक्त मूल स्वरुपों को कुछ अलग व सरलतम रुप में बनाकर उसके मध्य में बेल, फूल, पत्ते, मोर आदि आकृतियों का संयोजन किया गया है। जो यहाँ के मूल माँडना स्वरुपों से अलग होते हुए भी मूल माँडनों के मध्य एक रुप में व्यक्त होते है।

चित्र सं. 73, जैसलमेर के माँडने का छोटा सा एक स्वरुप

लाल रंग से बना उपरोक्त माँडना का यह स्वरुप एक समतल दीवार को ज्यामितीय अलंकरण द्वारा सौन्दर्य प्रदान करता प्रतीत होता है। कोणीय तथा वर्ग से मिलकर बना यह आकार जैसलमेर क्षेत्र की जटिल स्थियों व सरल सामाजिक जीवन का परिचय देता हुआ प्रतीत होता है।

चित्र सं. 74, आन्तरिक रुप को सुसज्जित करता माँडना स्वरुप

घर को शान्ति व सुख का आभास देते ये माँडने जैसलमेर की कठिन परिस्थितियों में भी संस्कृति का एक हिस्सा बना हुआ है। यह माँडना ज्यामितीय रुपों से सृजित होते हुए भी सौन्दर्य पूर्ण सरलतम रुप में व्यक्त होता है। घर की दीवार सीढ़ियों को श्वेत रंग से रंग कर सम्पूर्ण दीवार के समरुप वास्तु के प्रत्येक भाग को रंगा गया है।

चित्र सं. 75, आन्तरिक सज्जा से अलंकृत गृह

वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य को प्रकट करने वाले ये भित्ति अलंकरण सफेद व गेरु रंग से सम्पूर्ण घर को सुसज्जित रुप देते है। यहाँ सफेद आवरण से झाँकते गेरु रंग जो रिक्त छोड़े हुए घरातल में स्वतः ही रुप प्राप्त कर प्रकट होते है। जिन्हें सजृनकर्त्ता अपनी समझ से रुपायित करता है।

ये रुप नैसर्गिक स्वरुपों से मेल न खाते हुए भी मन में अद्‌भुत संवेदनाओं व भावों को प्रदान करते है। लाल व सफेद रंग को राजस्थान के गाँव की माँडना कला का आधार माना गया है। जो माँडना के रुपों को अद्‌भुत व सौम्य रुप प्रदान करते है।

चित्र सं. 76, ग्रामीण घर का एक दृश्य

शान्त वातावरणीय सांस्कृतिक परिदृश्य को व्यक्त करते ये घर मन का अनौखा सुकून प्रदान करने वाले होते है। चित्र में बाह्य दीवार पर वास्तु व माँडना के रुपों का संयोजन प्रतीत होता है। फूल, चक्र व मयूर आकृति बाह्य प्रभाव के रुप में दृष्टिगत होकर भी इन दीवार के माण्डनों से एक समरुपता प्रकट करती है।

चित्र सं. 77, आँगन का एक दृश्य

चित्र में दीवार के निचली सतह पर नीला रंग की एक पट्टी से बना एक माँडना दीवार के आधार को व्यक्त करता प्रतीत होता है। जो आधुनिकता के आगमन का सूचक होते हुए भी घर का सौन्दर्य प्रदान कर रहा है। इन कच्चे घरों में अब सूचना व संचार के सभी यंत्र उपस्थित है। जिनका प्रभाव सांस्कृतिक व लौकिक रुपों पर परिवर्तन स्वरुप दृश्यमान प्रतीत होता है।

तृतीय अध्याय

रिलीफ चित्रण

1. रिलीफ चित्रण का स्वरूप
2. तकनीकी पक्ष
3. अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व
4. सृजनात्मक पक्ष

रिलीफ चित्रण का स्वरुप

रिलीफ वह कला है, जिसमें कलात्मक अभिव्यक्ति किसी ठोस आधार पर व्यक्त की जाती है, इस प्रकार की कला में उभार सबसे महत्वपूर्ण होते है तथा आकृतियों, संकेतों आदि को विभिन्न पदार्थों द्वारा उभार प्रधान किया जाता है, यह किसी आकृति व संकेतों को सजीवता प्रदान करता है तथा अभिव्यक्ति को प्रभावी बनाता है।

जिस भी आधार पर इस प्रकार का चित्रण या कला अभिव्यक्त की जाती है, अभिव्यक्त कला उभार द्वारा प्रदर्शित होती है।

इस प्रकार की कला में किस भाग का प्रभाव अधिकतम तथा किसका मध्यम व किसका निम्न स्थान पर रहेगा, वह महत्वपूर्ण होता है। विषयवस्तु के अनुसार कलाकर यह निर्धारित करता है, कि उस कलाकृति पर प्रदर्शित विभिन्न भागों की दिशा, कोण, ऊँचाई, लम्बाई, उभार का आधार, उभार का कोण, विषयवस्तु की अन्य भागों से तुलनात्मक अभिव्यक्ति सम्पूर्णता लिए हुए हो, जो उसे एक निष्कर्ष प्रधान कर सकते है, जिसका उद्देश्य सरल तथा आसानी से अभिव्यक्त हो सकें।

इस प्रकार के चित्रण की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है तथा वर्तमान में भी निरन्तरता लिये हुए है, प्राचीन काल में इस परम्परा या कला के अवशेष प्राचीन काल की प्रतिमाओं, मूर्तियों, सिक्कों आदि से प्राप्त होते है। प्राचीन काल में यह कार्य श्रमयुक्त तथा कठिन होता था, तथा शिल्पकार या पारखी निपूर्ण होते थे, इस प्रकार की कला मिटटी, धातुओं, प्लास्टर ऑफ पेरिस, सिरेमिक आदि के उपयोग द्वारा इस कला का विकास किया जा रहा है, विभिन्न प्रकार के अनुभव प्रयोग यादगार पलों में, भविष्य के लिए समेट कर रखने के लिए तथा विशिष्ट पलों को संजाने के लिए इस कला की अपनी एक विशिष्टता रही है, जो सदैव से मनुष्य को आकर्षित करती रहती है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा, पद, सम्मान, गर्व, प्रशंसा आदि को मनुष्य इस प्रकार से समाज के दृष्टिपटल पर अंकित कर देना चाहता हैं ताकि सदियों तक समाज उसे पहचाने । इस कारण से राजा–महाराजाओं तथा बादशाहों के समय इस कला को प्रसिद्वि प्राप्त हुई।

शासकों तथा अन्यों ने अपने कार्यों को विभिन्न प्रकार के सिक्कों, मोहरों, तश्तरियों या अन्य प्रकार की सामग्रियों पर आकृति प्रदान की थी। यह कला आज भी सजीवता से परिपूर्ण है, तथा हमें रोमाचिंत व आश्चर्यचकित करती है, कि जिस युग में मनुष्य के पास संसाधनों तथा तकनीकी ज्ञान आदि की कमी थी। उस युग में मनुष्य ने जिस प्रकार की

कलाकृतियों का निर्माण जितनी खूबसूरती, समर्पण तथा बारीकी के साथ किया है। वह अपने आप में अनुठा तथा अविस्मरणीय है।

इस प्रकार की कलाकृति का निर्माण जिस शिल्पकार या कलाकार द्वारा किया जाता है, उससे तीव्रबुद्धि, पारखी नजर, अनुभव, कला का पूर्ण ज्ञान, आभास, दिशा, कोण, परिमेय, तीक्ष्ण नजर, अनुपात आदि का विशिष्ट ज्ञान होना आवश्यक हो जाता है।

एक कलाकार में केवल कलाकृति के सृजन का गुण ही पर्याप्त नहीं है, वस्तुत: उसमें भावात्मक, सौन्दर्यात्मक, कल्पनात्मक आदि गुणों का समावेश भी अतिआवश्यक है। कलाकार कृति में केवल अपने स्वयं के भावों को ही प्रदर्शित नहीं करता वरन् वह समाज तथा मनुष्य के रुप में होने वाले क्रियाकलापों को भी अभिव्यक्ति करता है।

चित्र सं. 78, जैन मन्दिर शिल्प, जैसलमेर

कलाकार प्रकृति द्वारा प्रदत सौन्दर्य तथा प्राकृतिक दृश्यों को अपने अन्तर्मन द्वारा ग्रहण कर उसे मूर्तरुप प्रदान करने की कोशिश करता है तथा अपनी सृजनात्मक क्षमता के द्वारा अन्यों को समान भाव प्रदान करने तथा उनके अन्तर्मन को भेदने, उसे जागृत कर क्रियाशीलता प्रधान करने की कोशिश करता है। रिलीफ कला में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष प्रस्तुत कलाकृति में प्रयुक्त विषयवस्तु के विभिन्न भागों के कोण पर निर्भर करती है। उभार तथा कोणों के आधार पर इसे मुख्य रुप से दो भागों में बांटा गया है।

(अ) उभरा हुआ रिलीफ –

जब कलाकृति का 50 प्रतिशत भाग आधार भाग से उठा हुआ या उभार लिए हुए होता है, तो वह उभरे हुऐं रिलीफ के अन्तर्गत आता है।

(ब) डूबा हुआ रिलीफ –

जब कलाकृति का उभार बहुत ही निम्नतम स्तर का होता है, उसे डूबा हुआ रिलीफ कहते है, अर्थात् कृति का भाग उसके आधार के समान ही होता है।

इसी प्रकार किसी कृति को यदि रेखाओं के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। उसे **'शंकन रिलीफ'** कहते है। यदि कृति का कुछ भाग आधार भाग के अन्दर की ओर तथा कुछ भाग आधार के ऊपर की ओर उभार प्रधान करता हुआ प्रतीत होता है। तो उसे **'कांउटररिलीफ'** की संज्ञा प्रधान की जाती है।

इस प्रकार की कृतियाँ भारत के अजन्ता, एलोरा की गुफाओं, चटटानों, पाषाणों, भारतीय मंदिरों, भवनों, इमारतों, गढ़, महलों, हवेलियों आदि में देखी जा सकती है। इसी प्रकार सांस्कृतिक धरोहरों के रुप में विद्यमान स्तम्भों, इमारतों में इन्हें आसानी से देखा जा सकता है, जो कला का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते है तथा उनकी बनावट, कारीगरी, बारीकी, सौन्दर्य को स्वयं ही बयां करती हुई प्रतीत होती है।

चित्र सं. 79, जैन मन्दिर शिल्प, जैसलमेर

जैसलमेर की रिलीफ लोक कला

जैसलमेर में बील कला के उत्थान के साथ–साथ रिलीफ कला का भी उत्थान समकक्ष हुआ। बील के निर्माण के पश्चात् उसमें सौन्दर्यात्मक व अलंकरणात्मक सौन्दर्य उत्पन्न करने के लिए रिलीफ का प्रयोग किया गया है। रिलीफ का अंकन मिट्टी को आकार प्रदान कर कोणीय रेखाओं, आड़ी–तिरछी रेखाओं के समायोजन द्वारा आकृतियाँ बनाई जाती है। आकृतियों के मध्य या आस–पास मिट्टी से बनी टिपकियों का प्रयोग देखा गया है।

चित्र सं. 80, सिरावा गाँव की तिजौरी पर उभरा रिलीफ

रेखीय रुप में ही कुछ पत्तियाँ जिन्हें जाल वृक्ष की पत्तियों जैसा बनाया गया है। रिलीफ रुप में अंकित किया गया है तथा वृत्ताकार पर टिपकियों आदि द्वारा फूल अलंकरण बनाया गया है। कहीं–कहीं फूलों से रेखाओं का संयोजन कर पौधे का स्वरुप देते हुए अंकित किया गया है।

ज्यामितीय आकृतियों के समूह व सामंजस्य द्वारा बील की सम्पूर्ण आकृति को पूर्णता प्रदान की जाती है। रिलीफ की आकृतियों में फूल, पत्ती की आकृतियों के साथ–साथ काँच, चूड़ियों के टुकड़ों का उपयोग भी सौन्दर्यपरक रचना में मनमोहक बनाने के लिए किया जाता है।

काँच व चूड़ियों द्वारा उभरी हुई आकृतियाँ जब सूर्य या प्रकाश से प्रकाशित होती है, तो वह घर के सौन्दर्य को बढ़ा देते है।

चित्र सं. 81, मिट्टी से निर्मित रिलीफ से अलंकृत मन्दिर, देवरा गाँव

रिलीफ का स्वरुप

रिलीफ प्राकृतिक तथा मानवीय स्वरुप में अधिकांशतः प्राप्त होते हैं। मानवीय स्वरुप अर्थात् मनुष्य व प्रकृति के विभिन्न रुपों का प्रदर्शन इस कला द्वारा किया जाता है। रिलीफ का स्वरुप कलाकार की स्वंय की सृजनशीलता, कल्पनाशीलता तथा उसका स्वयं का दृष्टिकोण समग्र एवं रूचि के क्षेत्र के अनुसार निर्धारित होता है।

आधार के अनुसार कलाकार आकार का चयन करता है जैसे – पत्थर पर नक्काशी करना, प्लास्टर ऑफ पेरिस का प्रयोग, लकड़ी पर नक्काशी, धातु पर नक्काशी, कच्ची भित्ति पर मिट्टी के द्वारा या रिलीफ का निर्माण किया जाता है। विषयवस्तु क्या है, उसे किस पर बनाया जाना है, उसकी आकृति कितनी होगी। आकृति तथा बनावट किस प्रकार की होनी चाहिए, आकृति एक है या अनेक आकृतियों का सम्मिश्रण है। किस आकृति के किस भाग को कितना उभार प्रदान करता है तथा मानवीय संवेदनाऐं, दृष्टिकोण किस पर कितना निर्भर करता है। अतः इस प्रकार के विश्लेषण तथा विवेचना द्वारा निर्णय किया जाता है तथा कलाकार कला का निर्माण करने को तैयार होता है।

चित्र सं. 82, स्तम्भ पर कोणीय निर्मित रिलीफ

राजस्थान में जैसलमेर में रिलीफ के स्वरुप राजा, महाराजाओं तथा शासकों द्वारा अंकित सिक्कों तथा मोहरों पर मिलते है। इसी के साथ मंदिरों की दीवारों, मुख्य कक्ष की छत ,गुम्बद, गर्भगृह आदि में भी इस प्रकार के रिलीफ मिलते है। जैसलमेर में जैन मंदिर इसका प्रमुख उदाहरण है। राजाओं के समय के सिक्के तथा उनके लिए तैयार करने वाले छापेखाने की मोहरों आदि भी रिलीफ उदाहरण है।

जैसलमेर में लोककला रिलीफ के स्वरुपों के मिट्टी की भित्तियों को अलंकरणात्मक स्वरुप देने के लिए किया जाता है। रिलीफ चित्रण के मुख्य आधार के रुप में कोठियों, तिजोरियों तथा मन्दिरों की भित्तियों पर देखा जा सकता है। कोठियों तथा तिजोरियों को सम्पूर्ण जैसलमेर में रिलीफ अलंकरण से सजाया गया है। ये अलंकरण मिट्टी की भित्ति पर मिट्टी से भी निर्मित रेखीय रुप में बनाये गये है तथा जैसलमेर के माँडना स्वरुपों जैसे ही ज्यामितीय, कोणीय, समान्तर आकारों का संयोजन रिलीफ चित्रण में देखा जाता है। उभारदार रेखीयरुप में ही कुछ फूल वृत्त टिपकीयों, पौधे जैसे रुपों का संयोजन देखा जा सकता है।

चित्र सं. 83, पौधे के आकार में काँच व काँच की चूड़ियों के टुकड़ों से अंलकृत रिलीफ, जैसलमेर

तकनीकी पक्ष

रिलीफ चूँकि किसी ठोस आधार पर उभार या उकेर कर बनायी गयी कृति होती है, अतः इसमें सावधानी की आवश्यकता होती है। उभार कितना, कोण, दिशा आदि के साथ ठोस आधार किस प्रकार का बना हुआ है तथा उस पर कार्य करने के लिए किस प्रकार के उपकरण औजारों की आवश्यकता होगी। उसकी प्रकृति के अनुसार उसके निर्माण के समय उसके विभिन्न पक्षों के छायांकन भाग, उभार की स्थिति आदि को सम्मिलित करते हुए सम्पूर्ण कृति का समरुपता प्रदान करना जटिल कार्य है।

तालाब की मिट्टी, ऊँट/गधे/घोड़े की लीद के प्लास्टर से ही रिलीफ स्वरुप बनाये गये है। रिलीफ को आधार क्षेत्र से ही प्लास्टर द्वारा उभार कर बनाया जाता है। जो दीवार आदि के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाता है, मिट्टी से ही उभार कर आकृतियों को स्वरुप दिया जाता है तथा कहीं–कहीं काँच आदि का प्रयोग कर रिलीफ बनाए गये है। बील भी उभरी हुई एक आकृति है, इसमें मिट्टी व खपच्चियों को गिली दीवार पर ही निर्मित करते हुए अलंकर्णात्मक स्वरुप प्रदान किया जाता है। रिलीफ में उभरे हुए तथा डूबे हुए तल का समान महत्व इन लोक अलंकरण में देखा गया है, क्योंकि गहरे तथा उभरे हुए तल से ही आकृतियों का सृजन होता है।

चित्र सं. 84, रेखीय स्वरुप में कोठी पर निर्मित रिलीफ

अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व

अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व में रिलीफ के अन्तर्गत आधारभूत कृति के निर्माण के पश्चात् उसे सुन्दर अनुभूति प्रदान करने तथा उसके सौन्दर्यात्मक पक्ष को उजागर करने के लिए जिस प्रकार की अभिव्यक्ति उसे प्रदान की जाती है, वह अन्तःनिहित अलंकरण के तत्व कहलाती है।

मानवीय संवेदनाओं को उजागर करने के लिए बनाई गई कृति के मुखमंडल, आँख, कान, केश, शरीर तथा उसके हाव–भाव, भाव–भंगिमाओं का विशेष ध्यान रखा जाता है। इसी प्रकार विषयवस्तु के अनुसार अलंकरण प्रदान किया जाता है।

एक नवविवाहित स्त्री को रिलिफ में रंगीन साड़ी, आभूषणः शृंगार तथा शरीर में लोच, आँखों की स्थिति, भौहों की स्थिति, आकार, लम्बाई, चौडाई, और अनुभव आदि सभी पक्षों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है जिससे उस कृति में मानवीय संवेदनाओं के पक्ष को देखा जा सके।

चित्र सं. 85, मिट्टी के मन्दिर पर रिलीफ

लोक अलंकार के इन स्वरुपों में रेखीय रुप में रिलीफ अलंकरण प्राप्त हुए है, इन्हें क्रम में संयोजित कर एक तारत्मयता में प्रस्तुत किया है। कोठी तथा तिजौरी की भित्तियों में कोणीय व आढ़े तीरछे, क्रम में रेखीय संयोजन है। ये रेखीय आकृतियाँ कभी उभरी हुई आकृति को तो कभी मध्य छुटे गहरे तल को स्वरुप प्रदान करती प्रतीत होती है। फूल आदि अलंकरण में रिलीफ रुप के उभरे हुए आकृति से ज्यादा महत्व गहरे तल का होता है। क्योंकि डुबे हुए तल में प्रकट छाया से पत्तियों को स्वरुप प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार रिलीफ के दोनों तलों उभरे व डूबें हुए तल का महत्व यहाँ समान प्रकट होता है। क्योंकि दोनों ही तल आकृति का निर्माण करते प्रतीत होते है। इसी प्रकार बील जो उभरी हुई आकृति है और इसमें प्रयुक्त अलंकरण व स्वयं बील भी रिलीफ माना जा सकता है। इसमें भी उभरी व डूबी आकृतियाँ साथ जुड़ी हुई होते हुए भी अलग–अलग दो रुपों को प्रकट करती है।

सृजनात्मक पक्ष

कृति के निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष स्वयं कलाकार होता है। उसकी स्वयं की सोच, क्षेत्र, विषयवस्तु तथा विषयवस्तु के साथ उसका सम्बन्ध, ज्ञान आदि का प्रभाव सृजनात्मकता के स्वर को उच्च बनाता है। एक कलाकार किसी कृति की बनावट करने से पहले उसके प्रति कितना संवेदनाशील है तथा उसके मस्तिक में तथा स्वयं के भावों में कितना तालमेल व सामंजस्य है उस पर कृति की वास्तविकता की स्थिति निर्भर करती है। यदि कलाकार पूर्णरुप से उस कृति के प्रति समर्पित है, तो वह आभास उसकी सजीवता का प्रमाण होता है। मुख्य कृति के साथ उसके विभिन्न पक्षों का मुख्य कृति के साथ सम्बन्ध तथा समन्वय, तारत्मयता, निकटता आदि सृजनात्मकता के स्तर को उच्च करती है।

जैसलमेर के लोककलात्मक रुपों में सृजित रि लीफ में उभरे हुए तल व रिक्त समतल आधार का महत्व समान दृष्टिगत होता है। समतल आधार पर उभारी गई आकृतियों से रिक्त छोड़े गये धरातल पर सृजनात्मक पक्ष स्वतः ही प्रकट हो जाता है।

चित्र सं. 86, काँच के टुकड़ों से अलंकृत रिलीफ

चित्र सं. 87, कोठी पर रिलीफ अलंकरण

रिलीफ चित्रण मुख्यतः कोठियों या तिजौरियों की भित्तियों को अलंकरणात्मक रुप देने के लिए किया जाता है। यहाँ कभी–कभी काँच के टुकड़ों का भी प्रयोग किया जाता है। रिलीफ में उपरोक्त चित्र में कोठी पर कोणीय रेखाओं को समान्तर दो रेखाओं के मध्य संयोजित कर सम्पूर्ण भित्ति को अलंकरणात्मक स्वरुप दिया गया है। इस प्रकार यहाँ की लोक कला में वास्तु, रिलीफ व मॉडना में ज्यामितीय कोणीय आकृतियों का संयोजन सामान्यतः देखा जा सकता है।

चित्र सं. 88, कोठी पर डूबा हुआ रिलीफ चित्रण

उपरोक्त चित्र में कच्ची भित्ति पर डूबे हुए रिलीफ का चित्रण नागर बेल के रुप में किया गया है। लहरदार दोहरी रेखाओं के मध्य में पत्तीयों का अंकन किया गया है। जो सम्पूर्ण भित्ति को अलंकरणात्मक सौन्दर्य प्रदान करता है।

चित्र सं. 89, अंगुलियों से बनाया हुआ रिलीफ चित्रण

जैसलमेर के ''बड़ा दऊ'' गाँव में व आस–पास के गाँव में कुछ घरों में इस प्रकार के रिलीफ अलंकरण घर की बाहरी बिना पुति कच्ची दिवार पर हाथ की अंगुलियों से इस प्रकार का अंकन किया जाता है। यह अंकन सम्पूर्ण दीवार को भरते हुए बनाये जाते है। यहाँ सीधी रेखाओं व फुल–पत्तियों को अंगुलियों के उपरी भाग से छूते हुए रेखीय रुप प्रदान कर सम्पूर्ण भित्ति को अलंकृत किया गया है। यह कार्य श्रमयुक्त है। यह सीधी समतल रेखा न बनकर छोटे–छोटे ' (' आकृति से निर्मित की जाती है।

चित्र सं. 90, दीवार पर बना रिलीफ अंकन

यह रिलीफ घर की अलमारियों के मध्य बनी दीवार पर बनाया गया है। रिलीफ को यहाँ डूबी हुई। रेखाओं के माध्यम से फूल–पत्तियों तथा कोणीय, लहरदार व सरल उभारयुक्त रेखाओं के प्रयोग यहाँ दृष्टिगत होता है।

चित्र सं. 91, दीवार पर बना रिलीफ अंकन

बील के एक ओर लहरदार रेखा को मिट्टी द्वारा ही स्वरूप दिया गया है। इसमें फूल–पत्तियों को उभारदार दर्शाया गया है। साधारण रुपों से बनाई गई यह उभारदार आकृति वास्तविक बेल के स्वरुप सी प्रतीत होती है तथा दीवार पर चढ़ती हुई बेल का रुप व्यक्त करती है।

चित्र सं. 92, चौखट पर रिलीफ अंकन

कुछ स्थानों पर इस प्रकार के रिलीफ भी प्राप्त हुए है यहाँ लहरदार उभरी हुई रेखा तथा फूल को चपटे स्वरुप में अंकित किया गया है तथा इस बेल को दो उभारदार रेखाओं के मध्य में बनाया गया है। इसी प्रकार आल्यों को भी चारों ओर से चैन की कड़ियों या पत्तियों के क्रम में व्यवस्थित करते हुए दो रेखाओं के मध्य अंकित कर अलंकरणात्मक स्वरूप दिया गया है। ये रुप द्वार व आल्ये के स्वरूप को बाँधते हुए सौन्दर्य प्रदान करते है।

चित्र सं. 93, तिजौरी पर बने रिलीफ चित्रण

तिजौरी पर एक अण्डाकार काँच के आस–पास उभारदार अलंकरण में दो मयूर आकृतियों का संयोजन किया गया है तथा इनके चारों ओर त्रिभुजों व रेखीय अलंकरणों द्वारा सज्जात्मक रुपों का संयोजन किया गया है। उपरी हिस्से पर नागर बेल का अंकन किया गया है।

नागर बेल (स्थानीय भाषा का शब्द)लहरदार रेखा के दोनों और पत्तों को बनाते हुए बनाई जाती है। तिजोरी के दोनों ओर उभारदार बेल व फूल अलंकरण से सम्पूर्ण तिजोरी को सज्जात्मक रुप दिया गया है तथा उपर से सफेद सेड़ी मिट्टी में अभ्रक का प्रयोग कर लगाया गया है। जो इसे आभा युक्त बनाता है।

चित्र सं. 94, अलंकृत तिजौरी का एक स्वरुप

चित्र में रिलीफ आकृतियों से सुसज्जित तिजौरी को दर्शाया गया है। जिसके निचली सतह पर अर्द्ध चन्द्राकार रुपों से स्तम्भ लगाकर आधार प्रदान किया गया है। कोठीयों को फूल पत्ती बेल बूटे व लहरदार रेखाओं के माध्यम से अलंकरणात्मक स्वरुप दिया गया है। इस क्षेत्र में कोठीयों व तिजौरियों के इस प्रकार के अलंकरण से सुसज्जित बनाने की प्रथा है तथा इस क्षेत्र के सम्पूर्ण ग्रामीण अंचल में अलंकरण रहित कोठी या तिजौरी प्राप्त नहीं होती है।

चित्र सं. 95, बील में रिलीफ प्रयोग

बील में भी रिलीफ के ज्यामितीय अलंकरण स्वरुप दृश्यमान होते है। ये ज्यामितीय अलंकरण रिलीफ बील पर अंकित हो कर इसे ओर अधिक सौन्दर्य प्रदान करते है। इस प्रकार बील, रिलीफ व माँडना आपस में जुड़े हुए समरुपों में दृश्यमान होते है तथा बील के सम्पूर्ण स्वरुप में माँडना व रिलीफ को देखा जा सकता है।

चित्र सं. 96, तिजौरी पर रिलीफ अंकन

तिजौरी कही जाने वाली यह मिट्टी का एक आल्या जिसे कोणीय एवं सरल रेखाओं द्वारा अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान किया जाता है। यहाँ शुभ संकेतों के रुप में स्वास्तिक एवं त्रिशुल का भी अंकन किया गया है। जो इन अलंकरणों में इनकी आस्था को व्यक्त करता हुआ प्रतीत होता है तथा सम्पूर्ण तिजौरी को कोणीय आकृतियों से सजाया गया है।

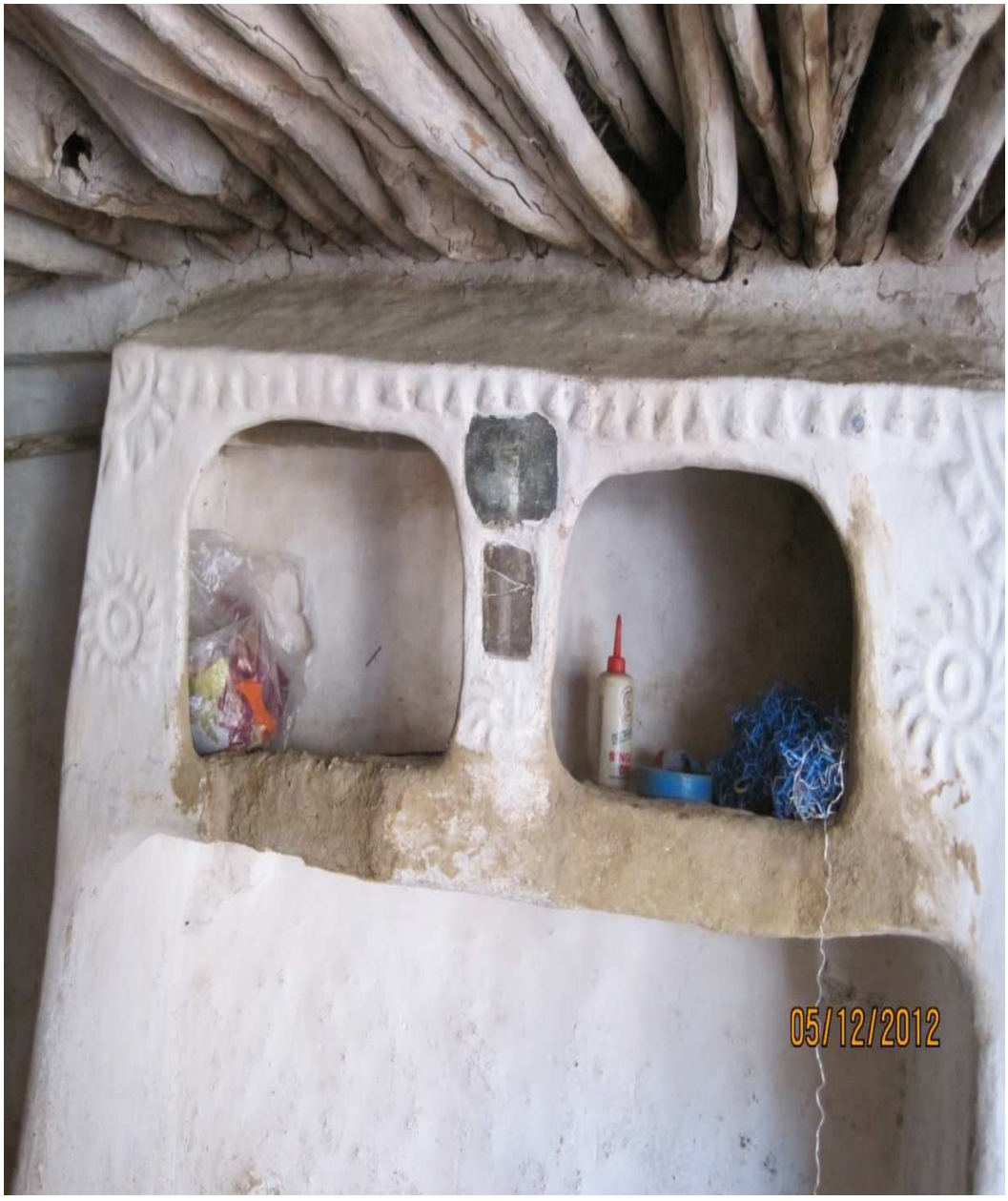

चित्र सं. 97, घर के दो आल्ये स्वरुप

घर के छोटे आल्यों पर त्रिभुज, फूल व चक्र की आकृतियों से रिलीफ अंकन कर इन छोटे–छोटे रुपों को भी अलंकरणात्मक स्वरुप देने का प्रयत्न किया गया है। सरल आकारों से व्यक्त इन कच्चे घरों के प्रत्येक क्षेत्र में कलात्मक रुपों का संयोजन देखा जा सकता है।

चित्र सं. 98, रिलीफ से अलंकृत तिजौरी

तिजौरी पर बील की उभरी आकृतियों का संयोजन कर अलमारीनुमा स्वरुप प्रदान किया गया है तथा सम्पूर्ण तिजौरी की भित्तियों का ज्यामितीय आकृतियों से सुसज्जित किया गया है। तिजौरी के आधार व उससे जुड़े स्तम्भों पर भी उभरी हुए कोणीय रेखाओं का क्रम देखा जा सकता है, जो सम्पूर्ण कोठी को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान करता है।

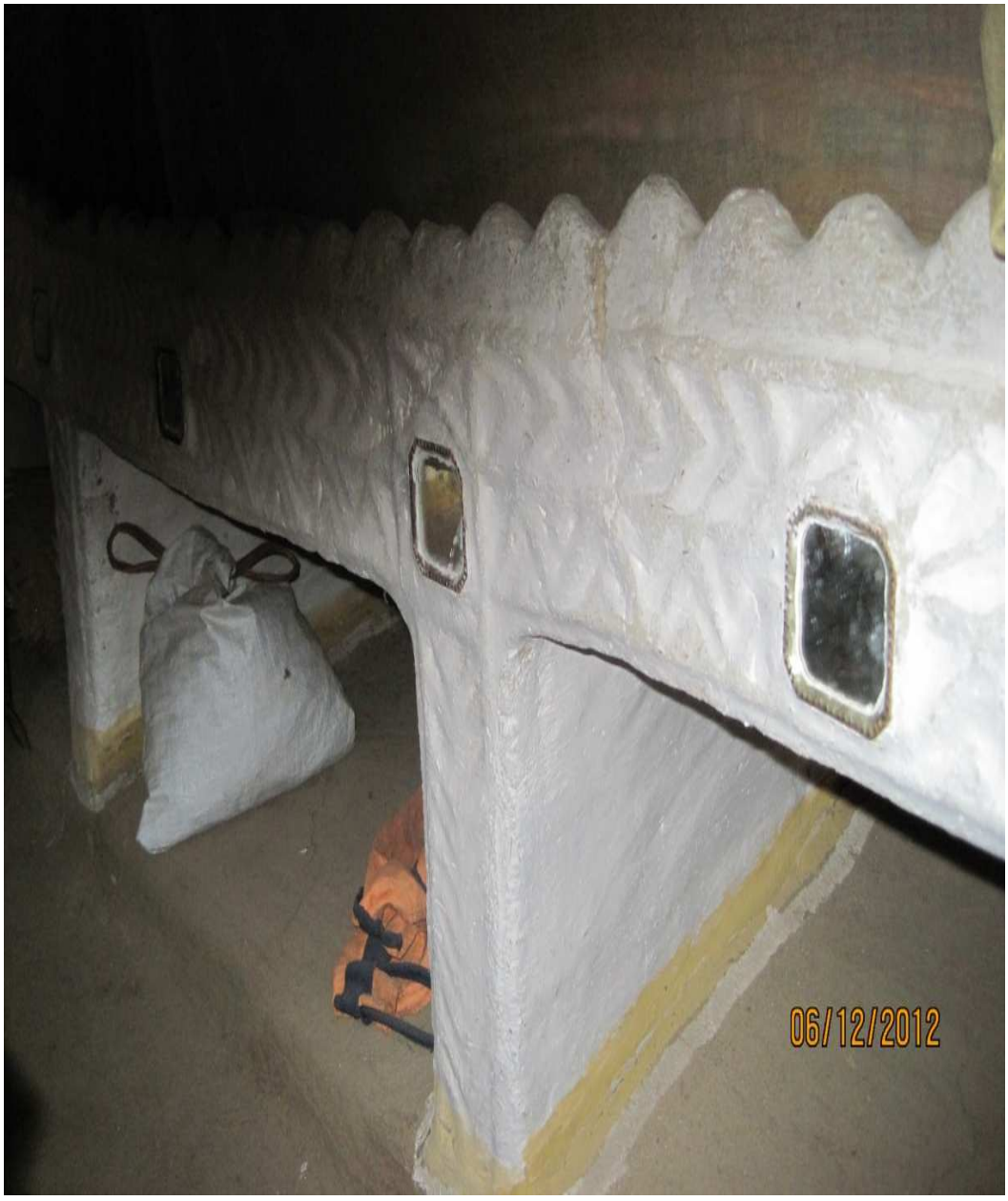

चित्र सं. 99, वास्तु के स्वरूपों में रिलीफ का अंकन

घर के निचली अलमारियों का प्रयोग बिस्तर व अन्य बड़े सामानों के संग्रहण के लिए किया जाता है। इन पर भी उभारदार रेखाओं द्वारा कोणीय आकृतियों को संयोजन कर अलंकरणात्मक रुप प्रदान किया गया है तथा मध्य में काँच का प्रयोग कर इसे और अधिक आभायुक्त बनाया गया है। जो इन साधारण दैनिक प्रयोग की वस्तुओं को विशिष्ट रुप प्रदान करते प्रतीत होते है।

चित्र सं. 100, अंगुलियों से बनाए गये रिलीफ

कच्ची दीवारों को अगुलियों से इस प्रकार की आकृतियाँ देकर छोड़ दिया जाता है। यह सूनी दीवार से अशुभ होने की मान्यता के कारण किया जाता है। इस प्रकार का रिलीफ सम्पूर्ण दिवार पर बनाया जाता है। यह कार्य करते समय दीवार कच्चे प्लास्टर युक्त होती है। जिससे अंगुलियों से उपरोक्त आकार प्रदान कर दिये जाते है।

चित्र सं. 101, तिजौरी पर रिलीफ अंकन

समय के साथ पुरानी पड़ रही यह कोठी उभरे हुए तलों से अपने स्वेत रंग को खोते हुए प्रतीत होती है। यह सम्पूर्ण तिजौरी रेखाओं को उभार कर कोणीय आकृतियों के संयोजन से तथा बीच–बीच में टीपकीनुमा अलंकरणात्मक स्वरुप में व्यक्त की गई है। साधारण से इन रुपों द्वारा दैनिक उपयोग की इन वस्तुओं को कलात्मक स्वरूप प्रदान कर दिया जाता है। जो इन लोगों के कला के प्रति रुची तथा संस्कृति से जुड़े कलात्मक पक्षों का उजागर करती है।

चतुर्थ अध्याय

बील : अलंकरणात्मक लोक सृजन

1. परिचय : स्वरूप – परिचय
2. ज्यामितीय सौन्दर्य सृजन
3. वर्ण प्रयोग

परिचयः स्वरूप–परिचय

राजस्थान का वह भू–भाग, जहाँ रेतीलें टीलें, बरखान, अपनी अनुपम छवि तथा परिवर्तनशील रुप के कारण विशिष्टता रखता है, जो अपने रेतीलें धोरों तथा सूर्य की तरह चमकते दुर्ग के लिए प्रसिद्ध है, वह है **जैसलमेर।**

अपनी अद्‌भूत व अद्वितीय पारिवारिक, पारम्परिक कलाओं को संजोयें हुए है, जो इसके लोककला संस्कृति की एक कला, अपनी पारम्परिक छवि को बनाये रख उसे संजोने की कोशिश में संलग्न है **''बील''**

चित्र सं.102, खुरी ग्राम में सरपंच के घर में बना बील

बील एक रचनात्मक हस्तशिल्प कला है, जो कच्चे घरों की दीवारों पर अलंकरणात्मक रुपों द्वारा उभार को स्वरुप प्रदान करती है। वस्तुतः इसका निर्माण दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं, सामग्रियों को संग्रहित करने के लिए किया जाता रहा है, परन्तु इसके मध्य भाग का उपयोग ईश्वर या आराध्य के स्थान के रुप में भी किया जाता है।

बील का निर्माण घर के मुख्य कक्ष में दरवाजे से जब अन्दर की ओर प्रवेश किया जाता है, तो सम्मुख दिवार पर किया जाता है।

राजस्थान के मरुक्षेत्र का एक भाग जैसलमेर है, जिसकी लोक संस्कृति हस्त कलाओं से अलंकृत हैं, इसी संस्कृति का विशिष्ठ कला रुप है ''बील''। बील कच्चे घरों की दीवारों को अलंकरणात्मक स्वरुप देने वाली एक रचनात्मक हस्तशिल्प कला है। जिसके निर्माण का उद्धेश्य गृह सज्जा के साथ–साथ दैनिक जीवन के उपयोग की वस्तुओं को

संग्रहित करने से जुड़ा है। बील सदियों से चली आ रही एक हस्तशिल्प कला होते हुए भी जनसामान्य व कला प्रेमियों की दृष्टि से अछूति हैं, जिसके फलस्वरुप प्रकाश में आने से पहले ही यह कला शहरीकरण व विकासवाद के चलते अपने मूल स्वरुप को खोते हुए मृतप्रायः होने की कगार पर है।

''बील'' कच्ची भित्तियों पर अलमारियों या छोटे बड़े बहुसंख्य आल्यों का समूह है। जिसका उपयोग उसी प्रकार से किया जाता है, जैसे अलमारियों या शोकेस को दैनिक उपयोग की वस्तुओं को सुव्यवस्थित रुप से रखने हेतु किया जाता है। इसकी रचना अलंकरणात्मक ज्यामितीय रुपों के माध्यम से की गई है, जिसका प्रमुख आधार बांस की खपच्चियाँ है। बील का निर्माण वर्ग या आयत के रुप में किया जाता है। सर्वप्रथम सुनिश्चित स्थान व आकार का निर्धारण कर बांस की खपच्चियों को निश्चित दूरी व क्रम से व्यवस्थित किया जाता है, इन्हें दीवार में अन्दर तक धंसा कर इस प्रकार लगाया जाता है, कि वह आसानी से हिले नहीं और लम्बे समय तक मजबूत बने रहें। खपच्चियों को दीवार से बाहर की ओर उतना निकला हुआ लगाया जाता है, जितना लम्बा व चौड़ा आल्या हमें बनाना है। इस प्रकार खड़ी खपच्चियों पर आड़ी खपच्चियों को जमाते हुए पहले अलमारियों या आल्यों का ढाँचा तैयार किया जाता है। फिर उस पर कच्चे पलस्तर की परत चड़ाई जाती है।

यह कच्चा पलस्तर स्थानीय तालाबों से प्राप्त मिट्टी तथा घोड़े, गधे, ऊँट की लीद को मिलाकर तैयार किया जाता है। जब यह ढाँचा कच्चा होता है, तब ही बांस की अन्य खपच्चियों आड़े एवं खड़े रुपों में मिट्टी से जोड़ते हुए बाहरी खाँचों का निर्माण किया जाता है। ये अलमारियों के आधार से अलग ऊपर लगाई जाती है। इन खाँचों को अलंकरणात्मक रुप देने के लिये बारीक खपच्चियों को आड़े, खड़े एवं तिरछे क्रम में गुथते हुए ज्यामितीय अलंकरणात्मक रुपों का निर्माण करते हुए लगाया जाता है। जिससे जालियों, झरोखों के रुप परिलक्षित होने लगते है। इनको अधिक अलंकृत रुप देने हेतु इनमें झालर रुपी अलंकरण अभिप्राय का प्रयोग करते है, जिन्हें स्थानीय भाषा में 'जंजीर' कह कर परिभाषित किया जाता है। जंजीर में छोटे मोती जैसी लटकन लटकाई जाती है। जिसे 'घुघरा' कहा जाता है। ये मिट्टी से निर्मित 'घुघरे'' दो शंकुओं के जुड़े हुए आकार से प्रतीत होते है। ''बील'' के बाह्य स्वरुप की मिट्टी जब गीली होती है, तब ही आयताकार व त्रिभुजाकार कंगूरों का भी निर्माण किया जाता है। कंगूरे बील के दोनों ओर कतार में बनाये जाते है जो खूटियों के रुप में कुछ टांगने हेतु प्रयुक्त किये जाते है। यहाँ इन्हें अत्यधिक अलंकारिक रुप देने हेतु, बील के उपरी भाग पर खराब/फ्यूज़ बल्ब या गोलाकार व आयताकार कांच

को भी अलंकरण अभिप्राय के रुप में प्रयुक्त किया है, इन अभिप्रायों को एक क्रम में संयोजित सौन्दर्यपूर्ण रुप प्रदान किया जाता है।

जब मिट्टी सूख जाए तब बील पर पुताई या रंगाई का कार्य किया जाता है। मुख्यतः बील सफेद मिट्टी से ही रंगा जाता था, लेकिन अब बाह्य प्रभावों के चलते अन्य रंगों को प्रयोग में लाया जाने लगा है। यहाँ पुताई के लिये जिस सफेद मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। वह स्थानीय मिट्टी होती है। यहाँ दो प्रकार की मिट्टी को प्रयोग में लिया जाता है – सेड़ी एवं कलई। कलई मिट्टी को पकाकर प्रयोग में लिया जाता है, इस मिट्टी की सफेदी में चमक होती है जबकि सेड़ी मिट्टी को कच्चा ही पानी में गलाकर पोता जाता है और यह फीकी रंगत लिये होती है। कई महिलायें बील पर अभ्रक एवं तुही (ईसर घोल की भूसी) मिश्रित घोल का लेप चढ़ाती है, जिससे बील अधिक चमकीला प्रतीत होता है।

यहाँ अधिकाशतः कच्चे घरों को सफेद मिट्टी से ही रंगा जाता है, परन्तु बील की आन्तरिक भित्ति एवं माँडनों के लिये पीली या गेरू मिट्टी को प्रयोग में लिया जाता है। बील के नीचे रिक्त दीवार पर गेरू/पीली मिट्टी से ज्यामितीय रुप चित्रित कर बील के ज्यामितीय स्वरुप को और अधिक आकर्षण प्रदान कर दिया जाता है। इस प्रकार बील के निर्माण से लेकर रंगाई तक हर कार्य में अलंकरणात्मक एवं कलात्मक स्वरुप परिलक्षित होता है।

बील में अनेक ज्यामितीय रुप दृश्यमान है जैसे आयत, वर्ग, त्रिभुज, अर्द्धवृत, वृत्त, पंचकोण, षट्कोण आदि इन स्वरुपों को भी मिट्टी से बने अलंकरणों द्वारा नये स्वरुप प्रदान कर दिये जाते है। उदाहरण के लिए एक वर्ग में चार त्रिभुजाकार कंगूरों की सहायता से उसे चार पत्ती वाले फुल को प्रकट करने वाला आकार दे दिया जाता है। ये आकार छोड़े गये अन्तराल में दृश्यमान होते है, और इसको दोहराते हुए जालियों का रुप दे दिया जाता है। इस प्रकार खाँचों के मध्य में भी कंगूरों या तिरछी, खड़ी, आड़ी खपच्चियों से विभिन्न जालीयों का निर्माण किया जाता है। ये रुप कभी बनाई गई बील में दृश्यमान होते है, तो कभी छोड़े गये अन्तराल में। इन्हीं ज्यामितीय अलंकृत रुपों से बील के कई हिस्से रुपायित होते है और बील की उपयोगिता को बढ़ाते हुए बील को नये–नये स्वरुप देते है।

बील में अधिकांशतः दोनों और खूटियाँ निर्मित होती है। ये खूटियाँ ऊपर उठी हुए त्रिभुजाकार होती है जिन्हे कई बार आगे से घुमाकर किसी पक्षी की गर्दन या कैरी या पेड़ की पत्ती जैसा आकार दे दिया जाता है इन आकृतियों को क्रम से ऊपर से नीचे तक

बनाया जाता है। ये खूटीयाँ वस्तुओं को टांगने के साथ बील को सौन्दर्य भी प्रदान करती है।

कहीं–कहीं बील से बाहर निकलते झरोखेनुमा खाँचों का भी निर्माण किया जाता है जिन्हें बनाने की प्रेरणा ये लोग महल के झरोखों से लेते है, ऐसा यहाँ के लोगों की बातों से प्रतीत होता है। इन झरोखों का अलंकरण रुप भी बील जैसा ही होता है।

''बील'' के उपरी हिस्से को ''बारी'' कहते है, बारी को भी अन्य हिस्सों की तरह ही अलंकरणात्मक रुप दिया जाता है, जिसे कहीं खराब बल्ब की पंक्ति द्वारा, तो कहीं आयताकार या त्रिभुजाकार कंगूरों द्वारा, कहीं बील के ही किसी अलंकरण रुप को दोहराकर, कहीं त्रिभुजाकार आकृति में टिपकियों के बढ़ते/घटते क्रम को दर्शाकर और कहीं मुर्गे या अन्य जीवों को मिट्टी से आकार देकर पंक्ति बना दी जाती है। हर एक स्वरुप अपने अलग आकर्षण के साथ, उसे बनाने वाले कलाकर की कलात्मक प्रवृति का परिचय देता है।

बील के दोनों ओर, इसकी निचली सतह से जुड़े हुई बाहर निकलती पट्टीनुमा अलमारी का निर्माण किया जाता है जिसे स्थानीय लोग 'गोखड़ा' कहते है। इसे कंगूरों से अलंकृत किया जाता है और यह घर में इस्तेमाल आने वाली छोटी–छोटी वस्तुओं को रखने के उपयोग ली जाती है।

बील में संतुलन व आकर्षण प्रदान करने के लिये इसे भिन्न–भिन्न प्रकार से संयोजित किया जाता है। अधिकाशतः बील के केन्द्र में एक बड़ा आल्या बनाकर या मध्यवर्ती खाँचों की पंक्ति को बड़ा एवं भिन्न बनाकर दोनों ओर वाली पक्तियों में आकारों की पुनरावर्ती की जाती है। केन्द्र के बड़े भाग को झालर या अन्य अलंकरण से आकर्षण प्रदान किया जाता है। इससे केन्द्र वाला हिस्सा प्रथम आकर्षण प्राप्त करता है। कई स्थानों पर केन्द्रियता के नियम को छोड़ लम्बवत् सभी खाँचों की पुनरावर्ती कर दी जाती है। बील इतना अलंकृत होता है कि उसमें रखी वस्तुऐं उसकी आभा में एक रुप हो जाती है एवम् दर्शक की दृष्टि केवल बील पर ही केन्द्रित होकर रह जाती है।

''बील'' पीढ़ियों से चली आ रही लोक अलंकरण का वह अद्भुत आयाम है, जहाँ जो बनाया गया है वही नहीं दिखता बल्कि जो छोड़ा गया अन्तराल है वह आकृति को रुपायित कर रहा होता है। उस अन्तराल को ही भिन्न–भिन्न रुप देते हुए आकृति निर्मित की जाती है। इस तरह अन्तराल व आकार दोनों से बने कई अलंकरणों से अलंकृत ये कलात्मक रुप साधारण दैनिक उपयोग की वस्तु होकर भी असाधारण कलात्मक रुप लिये कच्चे घरों को शोभा प्रदान करते है, और कच्चे घरों की कम रोशनी में अपने श्वेत

द्विप्तीमान ज्यामितीय रुपों में अद्‌भुत स्वरुप लिये प्रकट होते है। इसके उपरी आवरण की छांव में रखी सभी वस्तुऐं औझल हो जाती है, और नजर आता है, ज्यामितीय रुपों में संयोजित एक अद्‌भुत अलंकरणात्मक स्वरुप। जिसमें कई ज्यामितीय आकार इस प्रकार सुव्यवस्थित कर दिये जाते हैं जैसे एक धागे में पीरोने पर कई मोती एक ही रुप हो जाते है और माला को उसका स्वरुप प्रदान करते है।

जैसलमेर के कुलधरा व कामा गाँव की कहानी जो बील की प्राचीनता के कुछ साक्ष्य प्रकट करते है। यहाँ कुलधरा के 84 गाँव जो रातों–रात ही वीरान हो गये तथा यहाँ निवास करने वाले पालीवाल ब्राह्मण पलायन कर गये। ऐसा माना जाता है कि इस क्षेत्र की रियासत का एक मंत्री सालम सिंह, कुलधरा गाँव के 16 वर्षीय कन्या से विवाह करना चाहता था । इसके लिए उसने गाँव वालों पर बहुत दबाव डाला और संदेश भिजवाया कि यदि आगामी पूर्णिमा तक कन्या का दीवान से विवाह सम्पन्न नहीं होने की स्थिति में कन्या को बल पूर्वक उठाकर ले जायेगा।

चित्र सं. 103, काठोरी गाँव की हरकू देवी कुलघरा गाँव की कहानी बताते हुए

पालीवाल ब्राह्मण अपनी पुत्री का विवाह उस क्रूर दीवान से नहीं करना चाहते थे। उन्होंने इस कारण उन्होंने कुलधरा गाँव के कृष्ण मन्दिर में पंचायत बुलाई तथा पंचायत द्वारा फैसले के अनुसार कुलधरा सहित समीपवर्ती 84 गाँवों ने रातों–रात पलायन करने की मन्दिर के सामने शपथ ली। यह किंवदन्ती हमें काठौरी गाँव के बुजुर्गों द्वारा बताई गई।

खाली हुए गाँवों में से कुलधरा को छोड़कर अधिकांश गाँव में दूसरे परिवार आकर बस गये तथा उन्हें घर जिस अवस्था में बील से सुशोभित मिले थे उन्होंने उन घरों को यथावत् संचित किया है। जिनमें से कुछ बील 100 से 150 वर्ष पुराने भी है।

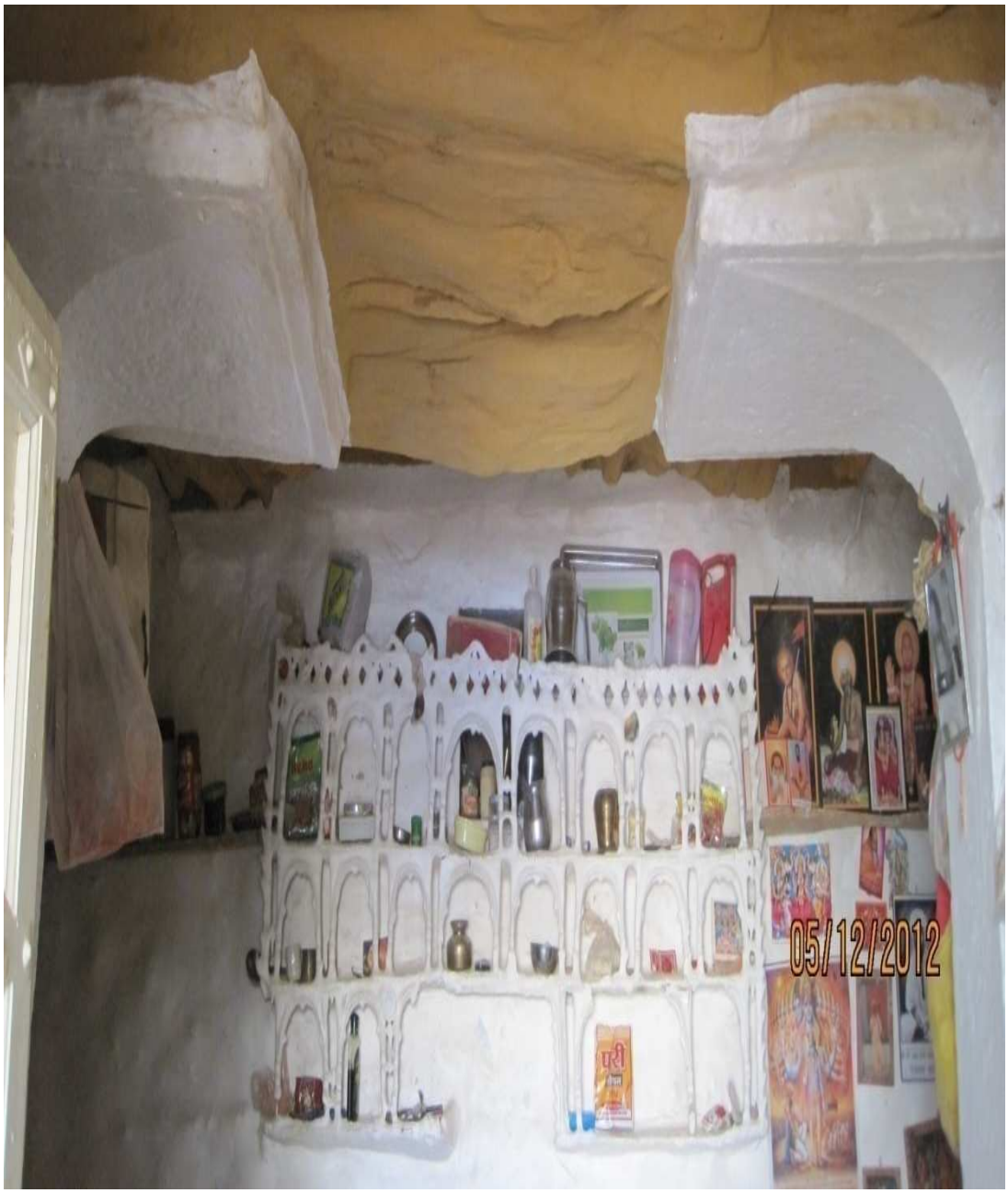

चित्र सं. 104, पालीवाल ब्राह्मणों द्वारा निर्मित, काठोरी ग्राम का 150 साल पुराना बील

ज्यामितीय सौन्दर्य सृजन

बील की अधिकांशः आकृतियों का बाहरी स्वरुप चतुर्भुजाकार होता है, परन्तु इसके मध्य में बनने वाले आकृतियाँ विभिन्न स्वरुपों में पाई जाती है तथा प्रत्येक बील की अपनी एक विशिष्टता होती है, जो मानवीय क्रियाकलापों तथा सृजनशीलता का द्योतक होती है। प्रत्येक स्वरुप की विशिष्टता, शिल्पकार की दक्षता, अनुभव, सृजनता, रचनाशीलता पर निर्भर करती है।

बील का निर्माण मुख्य रुप से तीन भागों पर आधारित होता है। जो दिशा पर निर्भर करता है। उर्ध्वाधर तथा पार्श्विक भागों में तथा मध्य भाग में स्पष्ट अन्तर होता है। बील में बनाये जाने वाले आल्यों का स्वरुप मध्य में बनाये जाने वाले आल्यों से विशिष्ट होता है। मध्य आल्यों के निर्माण में आकार का विशेष ध्यान रखकर उसे कुछ बड़ा बनाया जाता है।

जब स्थान का चुनाव बील के निर्माण के लिए किया जाता है, वह घर का मुख्य कक्ष होता है तथा मुख्य कक्ष के दरवाजे को खोलने पर सम्मुख बील को प्रदर्शित किया गया होता है।

चित्र सं. 105, नरसिंहों की धाणी ग्राम का नख्खू देवी द्वारा निर्मित बील

जब प्रातःकाल सूर्योदय होता है तथा मुख्य कक्ष के द्वार को खोला जाता है तो सूर्य की अनुभूति प्रदान करने वाली प्राणवायु के संचार के साथ सूर्य की चमकीली किरणें बील के विभिन्न भागों को दीप्तीमान बनाती है। जैसे–जैसे सूर्य की रोशनी की आभा बढ़ती है, बील पर उपस्थित काँच अलंकरण तथा श्वेत रंग उसे अद्‌भूत छवि प्रदान करते है तथा

कक्ष में रोशनी का संचार होता है। मध्याह्न पश्चात् किरणों की शिथिलता भी इस कलाकृति की छायांकन भाग की विशिष्टता को बढ़ाती है, तथा किरणों की शिथिलता के साथ उसकी छवि में परिवर्तन होते है, जो मनमोहक तथा सौन्दर्यात्मक बोध से परिपूर्ण होते है।

बील के स्वरुप में उसके छायांकन भाग की अपनी एक विशिष्टता है, जो रोशनी के साथ बील की छायांकन भाग की आकृति को परिवर्तनशीलता के साथ भिन्नता प्रदान करते हुए। प्रत्येक अन्तराल के पश्चात् छायांकन भाग की छवि में निश्चित परिवर्तन दृष्टिगत होता है, जो मनोभावों की स्थितियाँ व इसके सौन्दर्यात्मक अनुभूति को बढ़ाता है।

बील के आल्यों का आधार रेखीय पद्धति पर होता है, जबकि ऊपर की ओर अर्द्धवृताकार या अर्द्धचन्द्राकार रुप प्रदान किया जाता है। कई आकृतियों या आल्यों के ऊपर का स्वरूप त्रिभुजाकार रुप भी बनाया गया है। साथ ही अर्द्धचन्द्राकार, त्रिभुजाकार, आकृतियों में कंगुरेनुमा अलंकरण का प्रयोग किया जाता है, जो उसकी छँटा को अनुपम सौन्दर्य प्रदान करते है। आल्यों के मध्य स्थान जो आल्यों को पृथकता प्रदान करता है। मानवीय रचनात्मकता के अनुसार विशिष्ट व विभिन्न स्वरुप में दिखाई देता है। इस भाग में रेखाओं, तीर के निशान, सीढ़ीनुमा, पत्ती की संरचना, फूलों की आकृति, तारेनुमा संरचनाऐ प्रदर्शित की गई है। आल्यों में दोहरी कंगुरेनुमा अलंकरण का अधिक प्रयोग किया गया हैं।

आल्यों की संरचना के समीपस्थ भागों में काँच का प्रयोग भी अधिकांशतः किया गया है तथा शंकु के आधे भागों को जोड़ते मोती आदि का भी प्रयोग किया जाता है, जो प्रकाश की स्थिति, उसकी तीव्रता, आवृति के अनुरुप कलाकृति को अनुपम व अद्‌भूत सौन्दर्य प्रदान करता है।

कंगुरेनुमा आकृतियों में चतुर्भुज, त्रिभुज आकृतियों के साथ–साथ पत्तियों, पशु–पक्षियों के आकृतियों को भी निर्मित किया जाता है, जो क्षेत्र विशेष की विशिष्टता का परिचायक होता है। बील को विशिष्टता प्रदान करने के लिए अर्द्धगोलाकार ठोस आकृतियों द्वारा अलंकरण प्रदान किया जाता है।

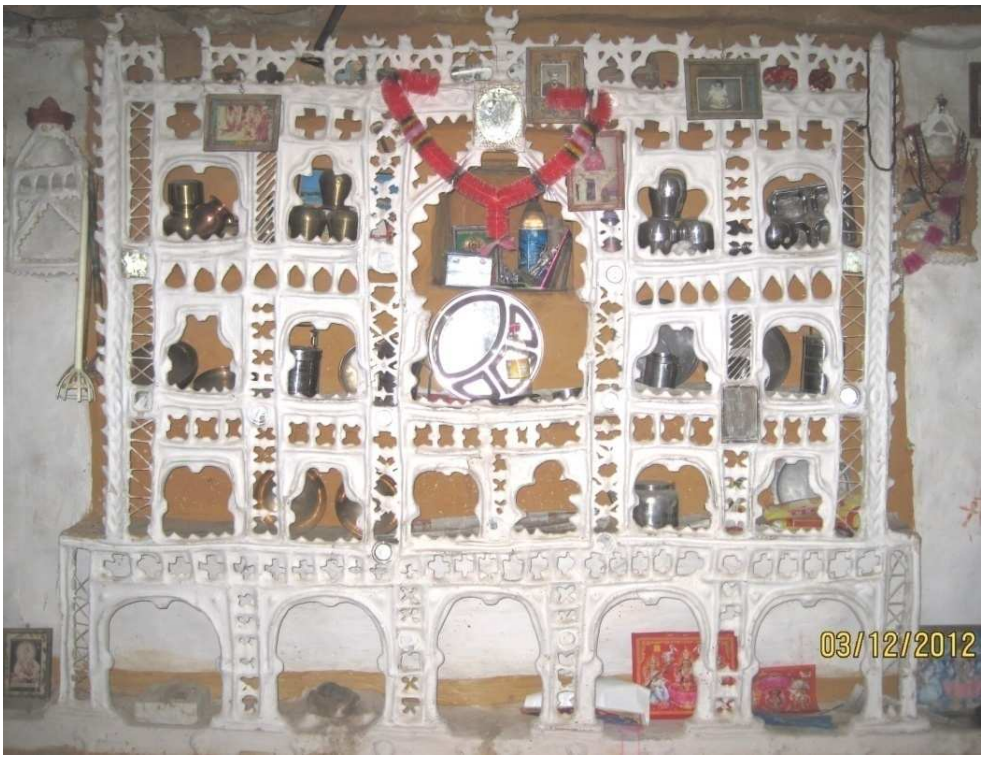

चित्र सं. 106, बील अलंकरण स्वरुप, ग्राम मन्धा

बील के इस स्वरुप में एक तारतम्यता को स्पष्ट देखा जा सकता है तथा एक समान समावेश दृष्टिगत होता है। प्रथम आधार पंक्ति में अर्द्ध चन्द्राकार आकृति का स्वरुप प्रदान किया गया है, तथा इसी प्रकार झरोखों में ही अर्द्ध चन्द्रकार आकृति के झरोखों का स्वरुप प्रदान किया गया है। मध्यम पक्ति के झरोखों की आकृति में बोतल या ढक्कन वाले डिब्बें की आकृति बाह्य स्वरुप को उजागर किया गया है, अर्द्ध चन्द्रकार छोटी आकृतियों के मध्य एक उभार प्रदान किया गया है, तथा उससे ऊपर कुछ अन्तराल प्रदान करते हुए पुनः आधार आकृति के स्वरुप का आकार अनुसार बड़ा बनाया गया है। झरोकें मध्य भाग में 'X' जैसी आकृति को पंक्ति में बनाया गया है, जो मध्य के झरोंके आकार में अन्तर लिऐ हुए है यह जाली का एक स्वरुप है तथा उसी रुप से झरोकों को दो भागों में बांटा गया है। इस प्रकार की कलाकृति सौन्दर्यात्मक के साथ मन को प्रफुल्लित करती है।

चित्र सं. 107, पारेवर ग्राम की पठानी देवी द्वारा निर्मित 55 वर्ष पुराना बील

बील का उपरोक्त स्वरुप रोमांचित, प्रफुल्लित करता है तथा इसका अवलोकन अद्‌भुत, अनुभव प्रदान करता है। केवल सरलतम रुपों से सृजित यह विशिष्ट बील सरलतम आकृत्ति भी अद्‌भूत प्रतीत करने वाली है जो कि अब ज़र–ज़र अवस्थित है।

चित्र सं. 108, डाबला ग्राम से प्राप्त बील

बील का यह स्वरुप विशिष्ट व अद्भुत स्वरुप लिऐ हुए है जिसमें ज्यामितीय आकृतियों का समावेश कुशलता के साथ किया गया है। प्रत्येक आल्य के मध्य जिस प्रकार की पंक्ति दी गई है, वह सधे हुए हाथों की कारीगरी ही हो सकती है। यह कला का बेजोड़ नमूना है जो पारम्परिक बील की निरन्तरता को संजोये हुए हैं।

चित्र सं. 109, बील का उपरी भाग 'बारी' पर पक्षी अलंकरण व जाली का प्रदर्शन एक स्वरुप

इस प्रकार के बील अंलकरण व सौन्दर्यात्मक हस्तकला के परिचायक होते है, जो मानवीय प्रकृति को अनुभूति के रुप में प्रस्तुत करता है। उपरोक्त बील विभिन्न आकृतियों व अंलकरणों का सम्मिश्रण है, जो रोमांचित तथा मन में उन्माद का आभास प्रदान करता है तथा जिससे मन प्रफुल्लित हो जाता है। बील के ऊपरी भाग को चौड़ी पट्टी के रुप में दिया गया है तथा उस पर उभार स्वरुप त्रिभुजों का निर्माण किया गया हैं। इस प्रकार जालीनुमा खपच्चियों के प्रयोग द्वारा झरोखे स्वरुप प्रदान करने की अद्भुत समन्वय को स्पष्ट दृष्टिगोचर करता है। उपरोक्त बील के स्वरुप क्षेत्र विशेष की स्थिति के अनुसार अंलकरण के रुप में बनाया गया है। कलाकृति के ऊपर की और सुन्दरता प्रदान काने के लिए पशु–पक्षी की आकृतियों का निर्माण किया गया है।

चित्र सं. 110, काठोरी ग्राम में सरसों देवी द्वारा निर्मित 60 वर्ष पुराना बील

बील के इस स्वरुप में अन्य स्वरुपों से भिन्नता का आभास होता है। इस प्रकार की बील संरचना में महत्वपूर्ण बील के मध्य भाग में दीवार के अन्दर की ओर बने हुए छोटी सी कोठीनुमी संरचना है, जो दो कपाटों के छोटे से द्वारों द्वारा अपनी अद्‌भुत छवि को दर्शाती है।

सम्पूर्ण कलाकृति को चार मुख्य भागों में बांटा गया है, मध्य भाग आधार से ऊर्ध्वाधर अन्य आल्यों से आकार में बड़े बनाये गये है, तथा ऊपर वाले आल्यों में एक छोटी कोठीनुमा संरचना दी गई है। मध्य भाग पूर्व से पश्चिम एक समानता को प्रदर्शित करता है, जबकि आधार स्तम्भ पर पूर्व से पश्चिम की ओर में मध्य आल्यों में अन्य आल्यों से बढ़ा है। मध्य के ऊपर व नीचे वाले आल्य में ऊपर की ओर झरोखेनुमा आकृतियों का एक रंग निर्मित किया गया है। जबकि यहाँ सभी आकृतियों में ऊपर की और 'V' आकार के उल्टे अंलकरण व कगुरों का प्रयोग किया गया है। आल्यों के मध्य पट्‌टी को दो भागों में अंलकरणात्मक आकृतियों के सम्मिश्रण द्वारा संगम प्रदान किया गया है, जो इसे अंलकारणात्मक सौन्दर्य युक्त आभा प्रदान करती हैं।

बील को अलंकरणात्मक स्वरुप देने के लिए जालियों का प्रयोग किया जाता है। ये जालियाँ खपच्चियों द्वारा बनाई जाती है। उपरोक्त जाली आकृति में दो पतली खपच्चियों को एक दूसरे से काटते हुए व मध्य में एक क्षितिजाकार या आड़ी खपच्ची को लगाकर जाली अलंकरण बनाया गया। जिसे मिट्टी के कंगुरों द्वारा अलंकरण स्वरुप प्रदान किया गया।

चित्र सं. 111, बील को अलंकृत स्वरुप देती जाली का प्रारुप

उपरोक्त जाली मिट्टी से बने कंगूरों द्वारा मध्य भाग को चार पत्तियों के फूल के रुप को प्रकट करती हुई दर्शायी गयी है। यहाँ रिक्त छोड़े हुए स्थान पर फूल का स्वरुप लिया हुआ है।

इस प्रकार से बील में विभिन्न प्रकार की जालियों व अलंकरणों का प्रयोग कर इसे अद्‌भुत स्वरुप प्रदान किया जाता है।

चित्र सं. 112, बील को अलंकृत स्वरुप देती जाली का प्रारुप

चित्र सं. 113, बील के घूघरों से बनी जंजीर का अलंकरण

बील के कलात्मक स्वरुप को ओर अधिक अलंकरणात्मक रुप प्रदान करने के लिए, बील में मिट्टी से बने मोतियों का प्रयोग किया जाता है। ये मोती दो शंकुवाकारों के मध्य से जुड़े आकार जैसे प्रतीत होते है। इन मोतियों को सामान्य भाषा में ये लोग 'घूघरा' कहते है तथा इन्हें उपर से दो धागों द्वारा मोती को बील के झरोके के अलंकरण की उपरी सतह से मिट्टी के सहारे जोड़ते हुए बनाया जाता है। इसमें धागों को अंग्रेजी के V के आकार की एक चेन बनाते दर्शाया जाता है। धागे से बनी चेन को 'जंजीर' नाम से यहाँ के लोंगो द्वारा सम्बोधित किया जाता है। यह जंजीर जिसमें घूंघरे लटके होते है। बड़ी ही सावधानी से बनायी जाती है। इसमें सभी घूघरे समान आकार के बनाये जाते है तथा सभी घूघरों को समान ऊँचाई पर लटकाया जाता है। इसका समान क्रम ऊँचाई व आकार सभी सम्मिलित रुप से बील के सौन्दर्य आयामों को ओर अधिक बढ़ा देते है।

चित्र सं. 114, रुपसी ग्राम, जर्जर अवस्था 90 वर्ष पुराना बील

बील का उपरोक्त रुप जर्जर अवस्थाओं में प्राप्त हुआ है परन्तु इस रुप में स्पष्ट है कि बील दोनों और (दांयी व बायीं) से यह स्थान खुला हुआ रहता है। साथ ही बील के सामने का भाग जिसमें आल्यें बने हुए होते है। अलंकरणों व आकृतियों के साथ कुछ स्थान खुला रखा जाता है। जिससे सामान व सामग्रियों को यथा स्थान पर आसानी से रखा जा सकता है।

इससे स्पष्ट होता है कि खप्पच्चियों का पीछे का सिरा दीवार के अन्दर की ओर दीवार में स्थापित किया जाता है। जिससे उसमें दृढ़ता है।

चित्र सं. 115, लानेडा ग्राम का बील मन्दिर

बील का यह स्वरुप केवल दो आल्यों युक्त है, जो ईश्वरीय वन्दना या देवता के स्थान के रुप में प्रयुक्त किया जाता है। इसका स्वरुप मंदिर के स्वरुप पर आधारित होता है। अतः आकृतियों व अलंकरण मन्दिर के अनुरुप ही प्रदान किये गये है। जो मन्दिर का ही एक प्रतिरुप मालूम होते है।

चित्र सं. 116, स्तम्भ पर बनाई गयी छोटी बील आकृति

यह स्वरुप बील के सम्पूर्ण स्वरुप को प्रदर्शित करता है। यह बील अद्‌भुत व अविस्मरणीय स्तम्भाकार आकृति का स्वरुप है जो धरातल के आधार से कच्छे मकान की छत तक आधार स्तम्भ के रुप में बनाया गया है। यह अपने आप में विशिष्ट है। आधार भाग से ऊपर की ओर फूल–पत्तियों की छोटी–छोटी आकृतियों का समायोजन कर एक रुप प्रदान किया गया है तथा इनके ऊपर की ओर पान के पत्तों के समान आकृतियों में रिलीफ का चित्रण कर उन्हें अलंकारित व सौन्दर्यात्मक स्वरूप प्रदान किया गया है। यह खम्भा पत्थर द्वारा निर्मित है। जो शायद किसी पुरानी इमारत का खंड़ित भाग है। जिसे कच्चे घर में स्तम्भ रुप में स्थापित किया गया है तथा ऊपर रंगों का प्रयोग कर अलंकरणात्मक स्वरुप दिया गया है।

इसके ऊपरी भाग को कुछ बड़ा कर तथा छत के भाग के मध्य जालीनुमा स्वरूप प्रदान कर खाली स्थान प्रदान किया गया है। जालियों में त्रिभुज आकार के कगूरों का उपयोग अलंकरण में किया गया है। यह भी बील का एक स्वरूप है।

चित्र सं. 117, रुपसी ग्राम से प्राप्त 1 वर्ष पुराना सीमेण्ट से निर्मित बील का आधुनिक स्वरुप

बील की इस कला में आधुनिकता की झलक साफ दृष्टिगत हो रही है। बील का आधार परम्परागत पद्धति पर ही आधारित है तथा इसका उपयोग भी परम्परागत रुप में ही किया जा रहा है, परन्तु इसमें प्राकृतिक रंगो का प्रयोग न करके आधुनिक पेण्ट का उपयोग किया गया है तथा गोबर आदि के स्थान पर सीमेन्ट आदि का उपयोग किया गया है । इसे पारम्परिक शैली का विकृत स्वरुप भी कहा जा सकता है, जो पारम्परिक शैली को छिन्न–भिन्न कर रही है। परन्तु एक और समयाभाव तथा प्राकृतिक संसाधनो की कमी के कारण आधुनिकता की ओर जाना भी सही प्रतीत होता है। आवश्यकतानुसार शैलियों में हमेशा से परिवर्तन होते आया है। यह उसी का परिणाम है।

अलमारीनुमा बील की लम्बाई लगभग 4 से 5 मीटर तथा ऊँचाई 2.5 से 3.5 मीटर तक ही होती है। सामग्रियों को आसानी से रखने के लिए प्रत्येक खाँचे के ऊपर की ओर महराव या कंगूरे बनाये जाते है, जिससे सामान आसानी से अन्दर चला जाये। आकर्षण के लिए काँचों का प्रयोग किया जाता हैं।

वर्ण प्रयोग

किसी भी कलाकृति की महत्ता उसके वर्ण प्रयोग पर निर्भर करती है तथा उस कृति के मनोभावों, संवेदनाओं की अभिव्यक्ति वर्ण प्रयोग पर निर्भर करती है। वर्ण प्रयोग में विभिन्न रंगों का सम्मिश्रण, एकरुपता, भिन्नता, विभिन्नता, रंग की उत्कृष्टता, निम्नतम, गहरापन, हल्कापन आदि पर भी कृति का स्वरुप निर्धारित होता है।

किसी भी कलाकृति में मुख्य रंग के साथ गौण रंगों का प्रयोग किया जाता है, जिससे कृति में आभा जागृत होती है, तथा मानवीय दृष्टिकोण से भावात्मक संवेदनाऐं उत्पन्न होकर अन्तरमन को भेदती है। वर्ण प्रयोग में रंगों के साथ–साथ उभार, उच्चावच, निम्नावच, रंगों का अन्तर, विभिन्न भागों व पक्षों के मध्य अन्तर व उतार–चढ़ाव पर निर्भर करता है।

लोक कलाकृतियों में अधिकांश कृतियों में एक ही रंग या अधिक से अधिक दो रंगों के संयोजन को महत्वपूर्ण माना जाता है। जिस उद्देश्य या प्रकृति के अनुसार कृति का निर्माण किया जाता है, वह रंगों के आधार पर उनकी पूर्ण पूर्ति करती हुई प्रतीत होनी चाहिए।

बील के जो भिन्न प्रकार जैसलमेर क्षेत्र में बने हुए दिखते है। अधिकांशतः सभी में सफेद रंग का प्रयोग किया गया है। सफेद रंग इस क्षेत्र में अधिकता से पाया जाता है। इसलिए भी इसका प्रयोग अधिक होता है तथा सफेद रंग हमेशा से प्रसन्नता, सौन्दर्य, प्रेम, मित्रता को प्रदर्शित करता है। सफेद रंग के साथ गेंहूऐ रंग या लाल रंग का प्रयोग भी कहीं–कहीं बील पर मिलता है।

दीवार अर्थात् आधार भाग या फिर बील के पूरे भाग को पहले ऊँट, गधे, घोड़े के गोबर या मिंगड़ी को पानी के साथ घोल बनाकर लिपा जाता है आभा के लिए सफेद रंग से रंगा जाता है, तत्पश्चात् इस पर अन्य कार्य किया जाता है। रंगों के प्रभाव को अधिक करने के लिए बील पर विभिन्न अलंकरणों का प्रयोग किया जाता है जो प्रकाश को फैलाते देता है, जो उसकी कलात्मकता व सुन्दरता की भव्यता को उच्च बनाता है तथा प्रकाश के प्रकीर्णन से उसके प्रकाश तथा छायांकन भागों का विभिन्न प्रभाव दिखाई

चित्र सं. 118, मोकला ग्राम से प्राप्त बील जिस पर आधुनिकता का प्रभाव परिलक्षित होता है।

वर्तमान स्वरुपों में कुछ भिन्नता, पांरम्परिक बील में स्पष्ट नजर आने लगी है। मनुष्य अब अन्य रंगों का भी प्रयोग करने लगे है तथा तकनीकी ज्ञान में विस्तृता उत्पन्न कर दी गई है।

चित्र सं. 119, बील का जाली अलंकरण

उपरोक्त चित्र में बील के अलंकरण को सौन्दर्य प्रदान करने वाली जालियों के साथ काँच का प्रयोग किया गया है। मध्य में अर्द्ध अण्डाकार रुपों को क्रम में लगा कर जाली का निर्माण किया गया है। जिनके बीच में त्रिभुजाकार में काँच लगाया गया है। सभी जालियाँ ज्यामितीय आकृतियों का संयोजन कर बील को अलंकरणात्मक रुप प्रदान करने के लिए प्रयुक्त की जाती है। ये जालियाँ अलग–अलग आकारों के संयोजन से बनायी जाती है।

चित्र सं. 120, बील का जाली अलंकरण तथा बारी स्वरूप

उपरोक्त चित्र में बील की बारी का विस्तृत रुप दर्शाया गया है। बील के ऊपरी भाग को यहाँ के लोगों द्वारा बारी शब्द से सम्बोधित किया जाता है । चित्र में खपच्चीयों को सीधे व कोणीय आकृतियों के रुप में संयोजित कर लगाया गया है। जिनके मध्य का स्थान त्रिभुजाकारों को प्रकट करने वाला रुप व्यक्त करता है। जाली के उपरी भाग में पक्षी जैसी आकृति बनायी गई है तथा बील के निचले हिस्सों पर जाली के भिन्न–भिन्न स्वरुपों द्वारा अलंकरणात्मक रुप प्रदान किया गया है।

चित्र सं. 121, सम्पूर्ण दीवार को अलंकृत स्वरुप देता बील, ग्रम सियाम्बर

यह बील पूरी दीवार पर सुसज्जित है जिसे काँच, जालीयाँ तथा घूघरों से बनी जंजीर से अलंकृत रुप दिया गया है। उपरोक्त बील में प्रत्येक खाँचे को अलग ज्यामितीय आकृतियों से बनाया गया है तथा विभिन्न जालियों के रुपों से सृजित कर सम्पूर्ण बील को अद्‌भुत सौन्दर्य प्रदान किया गया है। उपरी हिस्से पर बल्ब को क्रम में लगाकर संयोजित किया गया है तथा बील के मध्य में दो बड़े आल्यों को स्थापित किया गया है, जो ईश्वर की वन्दना के लिए बनाये गये है।

बील के प्रत्येक भाग का प्रयोग करते हुए। बर्तनों व अन्य सामग्रियों को बील में रखा गया है।

चित्र सं. 122, बील का एक स्वरुप, ग्राम डाबला

चित्र दर्शाये बील के मध्य में एक आयताकार आल्या भगवान की स्थापना के लिए स्थापित है तथा उसके नीचे कुछ तस्वीरों के संग्रहण के लिए एक अन्य बड़ा आल्या बनाया गया है। मध्य के इन आल्यों के अलावा सभी खाँचों की आकृतियाँ लगभग समान है। ये सभी पंचकोणीय रुप में सृजित है। 'बारी' पर कोणीय आकृति को संयोजित कर अलंकरणात्मक रुप दिया गया है। सम्पूर्ण को काँच व जालीय स्वरुपों द्वारा सुसज्जित रुप दिया गया है। सम्पूर्ण भित्ति को अलंकरण स्वरुप देता यह बील दैनिक उपयोगिता व कलात्मक स्वरुप का अद्‌भुत संगम है।

चित्र सं. 123, नाणेला गाँव से प्राप्त विभिन्न अलंकरण युक्त बील

उपरोक्त बील में ऊपरी हिस्से पर हरा बल्ब को क्रम में लगाया गया है तथा सम्पूर्ण बील को दैनिक वस्तुओं से भरा हुआ दर्शाया गया है। जिसमें बर्तन मालाएँ व अन्य सजावटी सामग्री टाँगी व रखी गयी है। अलंकरणात्मक स्वरुप में उपस्थित यह बील अपने हर एक हिस्से के उपयोगी पक्ष को उजागर करता है, जो इसके सौन्दर्य एवं उपयोगी पक्ष को उजागर कर्त्ता है।

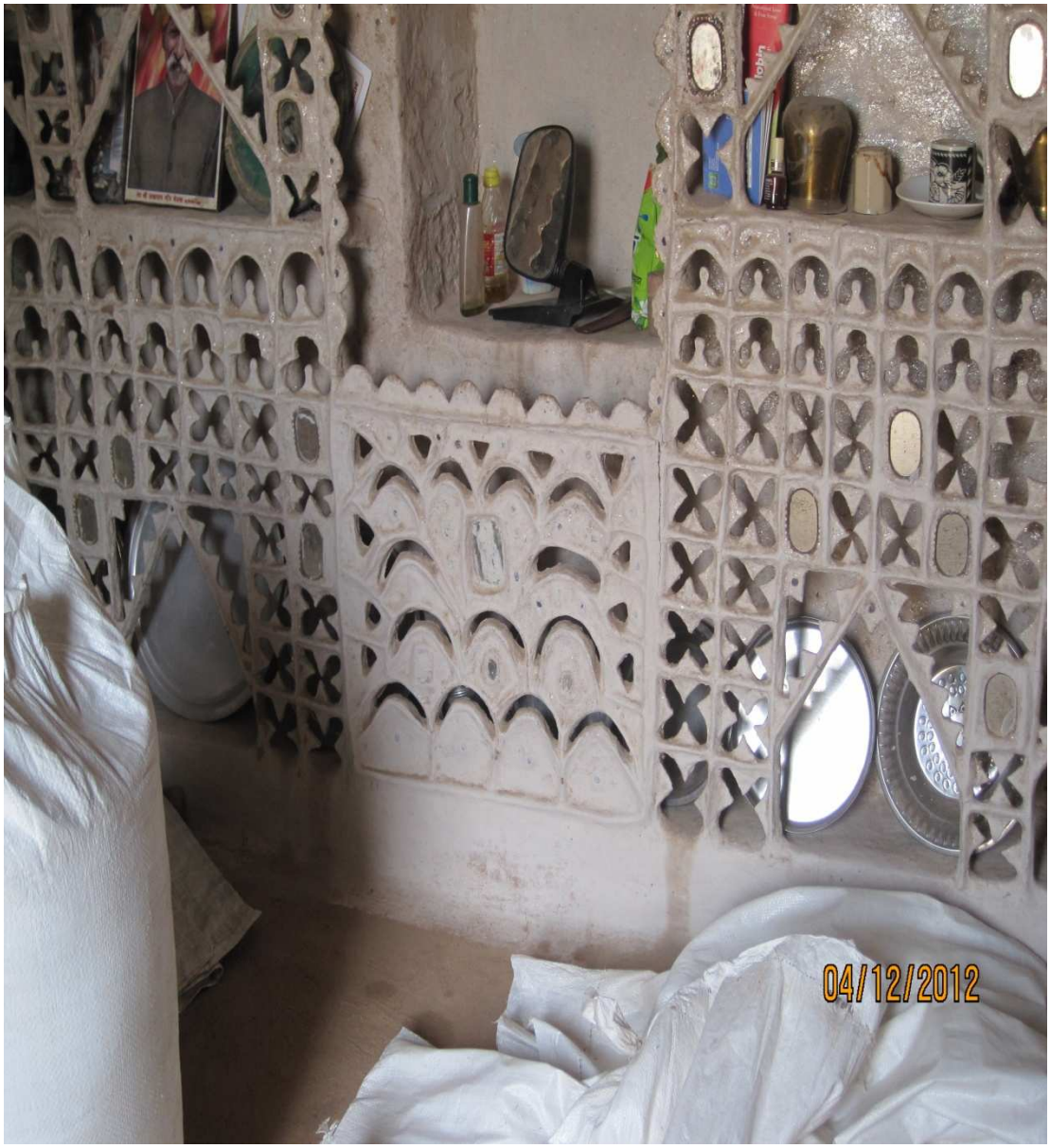

चित्र सं. 124, जालीदार अलंकृत बील की आकृति

बील के अलंकृत जालीय भाग को विस्तृत रुप से दिखाने के लिए उपरोक्त चित्र लिया गया है। जालीयों के विभिन्न प्रकार को खपच्चियों व मिट्टी के प्रयोग से स्वरुप दिया गया है। मध्य में प्रयुक्त जाली अन्तराल से रेखाीय स्वरुप में अर्द्ध चन्द्र सी दृश्यमान है तथा कोणीय कंगूरों से मध्य को फूल रुप में छोड़ते हुए अन्य जालियों का निर्माण किया गया है। इस प्रकार भिन्न–भिन्न प्रकार की जालियों को रुपायित कर सम्पूर्ण बील को अलंकृत रुप दिया जाता है। यह बनाये गये तथा छोड़े गये अन्तराल से आकृतियों को निर्माण करती हुई सुसज्जित रुप में बील को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान करती है।

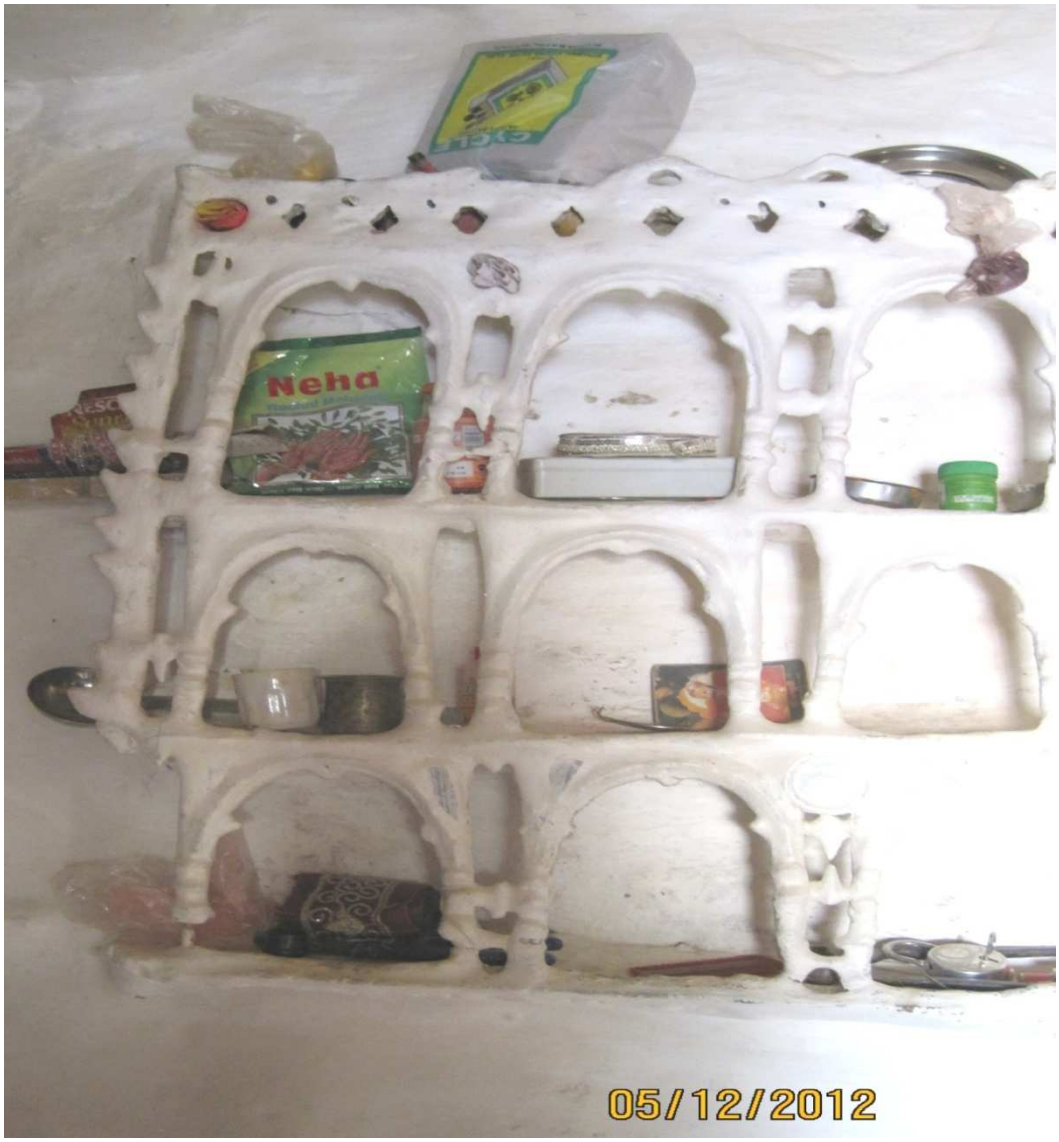

चित्र सं. 125, साधारण स्वरुप में एक पुराना बील

खण्डित रुप में उपस्थित उपरोक्त बील में एक ही प्रकार के खाँचे बनाया गये हैं तथा जालियों का स्थान भी यहाँ खाली हो गया है। जो शायद इसके खण्डित स्वरुप के कारण है। सादगी से पूर्ण होता हुए भी बील सुन्दर प्रतीत होता है ।

चित्र सं. 126, कपाट युक्त छोटा बील स्वरुप

मध्य में कपाट युक्त बील छोटे से स्वरुप में उपरोक्त भित्ति पर विद्यमान है। कपाट के चारों ओर रिलीफ आकृतियों से इसे सज्जा प्रदान की गई है तथा छोटे मन्दिर जैसी आकृति में सम्पूर्ण बील को बनाया गया है। जो सफेद दीवार पर सफेद ही रंग से सुसज्जित है। यह बील सदियों से चली आ रही संस्कृति के रुप में उपस्थित होते हुए अपने पारम्परिक स्वरुप को व्यक्त करता है।

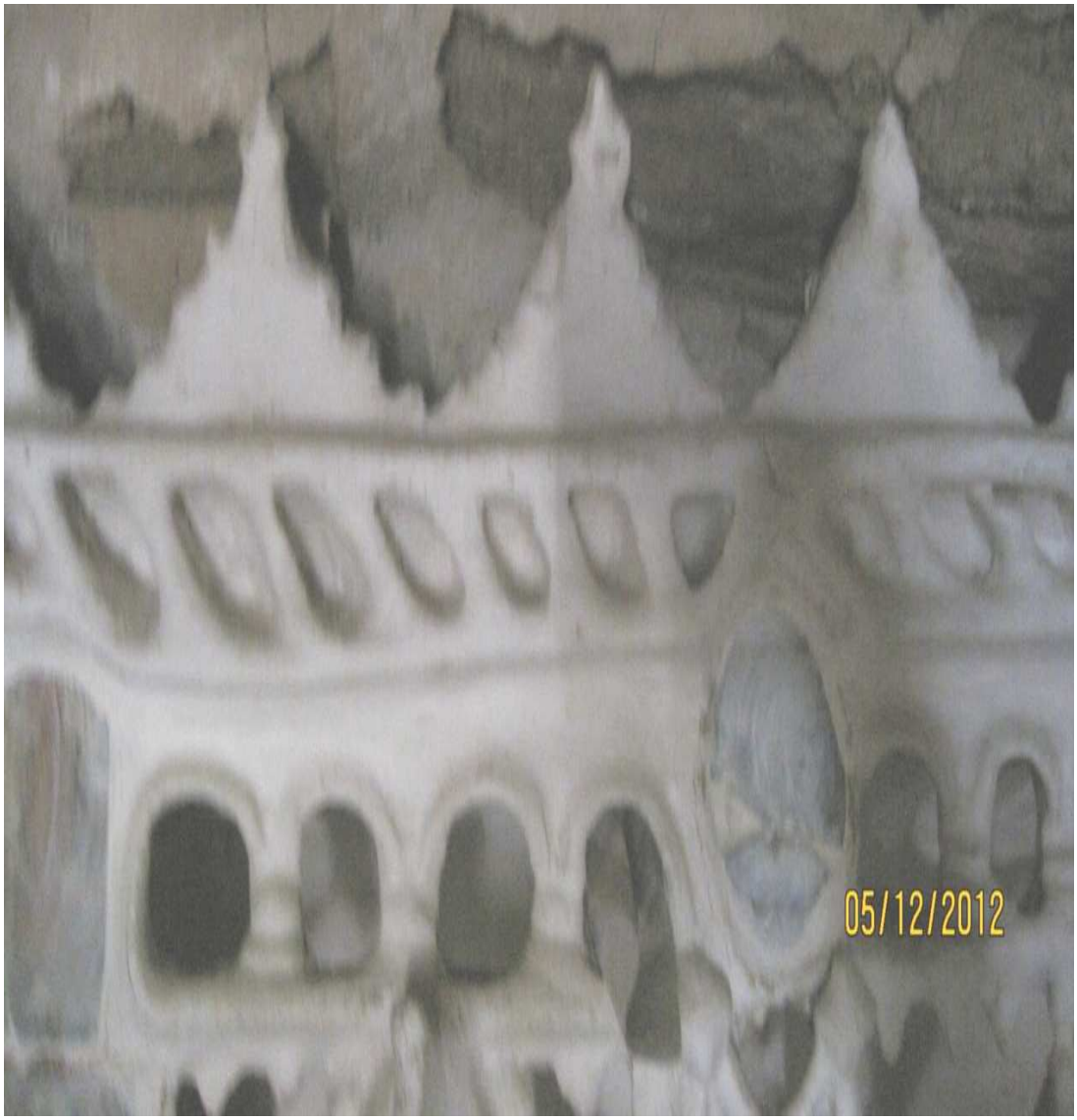

चित्र सं. 127, बील की 'बारी' एक स्वरूप

यह बील के ऊपरी हिस्से 'बारी' के भाग को उजागरकर्त्ता एक चित्र है। जिसमें 'बारी' व जाली वाला भाग मिलकर मन्दिरों की एक पंक्ति के रुप में प्रदर्शित हो रहा है। उपरोक्त चित्र में जाली को छोटे–छोटे आयताकार रुपों द्वारा सृजित किया गया है। इस प्रकार बील का हर एक भाग अलग कर घ्यान से देखने पर कई नये–नये रुपों में प्रकट होता है।

चित्र सं. 128, दीवार के मध्य बीलाकार स्वरूप

दीवार के मध्य में बना छोटा सा आयताकार पर एक छोटा से पंच कोणीय आकार बनाया गया है। यह बील छोटे से मन्दिर जैसा दृश्यमान होकर अलंकरण रहित यह आल्ये का एक रुप रह गया है। जो बील के खण्डित अवशेष के रुप में बचा हुआ दीवार पर उपस्थित है।

चित्र सं. 129, बील पर बनी खूटियाँ तथा छोटा मन्दिर स्वरूप

बील की आंतरिक भित्ति के रंग से ही रंगा एक ओर बना यह छोटा से बील मन्दिर जैसा प्रतीत होता है। जिसे कंगूरों व छोटे खाँचों से अलंकृत स्वरूप दिया गया है। उपरोक्त कंगूरें कटीली झाड़ियों से प्रतीत होते है, जो क्षेत्रीय प्रभाव को व्यक्त करते है। बील के एक तरफ उपर उठी कोणीय कंगूरों की श्रृंखला बनाई गयी है। जो खूटियों के रुप में प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार बील का प्रत्येक हिस्सा घर के दैनिक उपयोग की वस्तुओं को संगृहित करने के उद्देश्य से बनाया जाता है।

चित्र संख्या 130, बील का एक खण्डित स्वरूप

अपनी जर–जर आवस्था में उपस्थित उपरोक्त बील रिक्त खाली स्थानों के आधार से आकार लेते हुए प्रतीत हो रहा है तथा आधार से झाँकती हुई पीली मिट्टी की आभा स्वेत झरोखों से इन बील अलंकरणों को अद्भुत स्वरुप प्रदान करती है। जो बनाई हुई आकृति से अधिक छोड़ी हुई आकृति को प्रकट करने वाली होती है। ये सृजित व रिक्त छोड़े गये आधार अपने अलग–अलग रुप प्रकट करते हुए अद्भुत सौन्दर्य रुपों को रुपायित करते है। जो इन साधारण ग्रामीण लोगों की अद्भुत कलात्मक सोच को प्रमाणित करते है।

चित्र सं. 131, बील के जालीय अलंकरण

अस्त–व्यस्त सामग्रीयों द्वारा भरा हुआ उपरोक्त बील केवल उपरी भाग में ही बचा हुआ है तथा इसका निचला भाग खण्डित हो चुका है। शेष बचा भाग जालीय स्वरुपों से अलंकृत व संग्रहित स्वरुप में प्रकट होता है। यह बील निचली सतह से अलमारीनुमा दृश्यमान हो रहा है। जो इसके आधार स्वरुप को व्यक्त करता है।

चित्र सं. 132, बील अलंकरण

वर्गाकार एक समान आकारों से बने खाँचों से बनाया गया उपरोक्त बील जालीय अलंकरण से सौन्दर्यपूर्ण अद्‌भुत संयोजन को प्रकट करने वाला है। यह बील एक जैसी जालियों से बनाया गया है। जो सामंजस्य व संतुलन को व्यक्त करने वाला है। इस प्रकार बील का यह स्वरूप उपयोगी सरल रुप में होते हुए भी विशिष्ट स्वरूप में प्रकट होता है।

चित्र सं. 133, खण्डित अवस्था में बील, लाणेला ग्राम

भित्ति के ऊपरी हिस्से को अलंकरणात्म स्वरुप प्रदान करती यह बील आकृति नीचे से खण्डित अवस्था में है। कोणीय आकृति से बने एक समान खाँचे से निर्मित यह बील खण्डित होते हुए भी अलंकृत रुप में प्रकट हो रहा है। इसमें जालीय अलंकरण सम्पूर्ण रुप को प्रभावी बनाता है। एक आयताकार खाँचे को दो खपच्चीयों के संयोजन से त्रिभुजाकार रूप प्रदान कर दिया जाता है।

चित्र सं. 134, बील अलंकरण, ग्राम बोआ

उपरोक्त बील मध्य में छोड़े हुए बड़े आल्या आकृति को छोड़ अन्य सभी ओर से जाली अलंकरण से भरा हुआ है, और इन जालीय अलंकरण में बील के खाँचे भी जाली जैसे ही प्रतीत होते है। यह बील आकृति पूर्ण सुरक्षित अवस्था में है तथा सम्पूर्ण भित्ति को जालीय आवरण से अलंकरणात्मक सौन्दर्य प्रदान करता प्रतीत कर रहा है।

चित्र सं. 136, बील का अद्भुत स्वरूप

उपरोक्त बील आकृति में बाहर निकले या उभरे हुए झरोखे बने है जो महलों की छतरियों से प्रतीत हो रहे है यहाँ ऊपर के भाग को भी झरोखे सा बनाया गया है। जो महल के वास्तु से प्रेरणा लेकर बनाया सा प्रतीत होता है।

चित्र सं. 137, गृह सज्जा में प्रयुक्त बील अलंकरण, ग्राम पारेवर

उपरोक्त बील सम्पूर्ण कमरे के हिस्सों को अलंकरणात्मक रुप प्रदान कर रहा है। तिजौरी के नीचे सामान संग्रहण के स्थान पर भी बील में प्रयुक्त जालीय स्वरुप को लगाया गया है तथा उसी के बगल वाली भित्ति पर बील बना हुआ है।

चित्र सं. 138, बील अलंकरण, ग्राम बरमसर

उपरोक्त बील एक ही प्रकार के आल्यों के रूपों से निर्मित है तथा जाली व कंगूरों से अलंकृत यह बील जिसमें चतुष्कोणीय खाँचों को जालीयों व खपच्चियों को कोणीय रुप में लगाकर उन पर कंगूरेनुमा आकृतियों से सुसज्जीत कर उन्हें त्रिभुजाकार रुप दिया गया है दोनों तरफ की बगलों पर उपर उठे कंगुरो को वस्तुए टांगने के लिए बनाया है। उपरोक्त बील कच्चे घर की भित्ति को विशिष्ट बनाता है तथा घर को कलात्मक परम्परा से सुशोभित करता है।

चित्र सं. 139, बील अलंकरण, ग्राम बोआ

उपरोक्त बील अपनी प्राचीनता के कारण टूटी–फूटी अवस्था में है, क्योंकि बील घर के निर्माण के समय पर ही बना दिये जाते है तथा समय–समय पर मरम्मत कर इन्हें सौन्दर्यपूर्ण रुप में संजोये रखा जाता है। ये कुछ खण्डित अवस्था में फिर भी वस्तु संग्रहण का उद्देश्यपूर्ण करने की अवस्था में है। मरम्मत के अभाव में भी यह सौन्दर्यपूर्ण है।

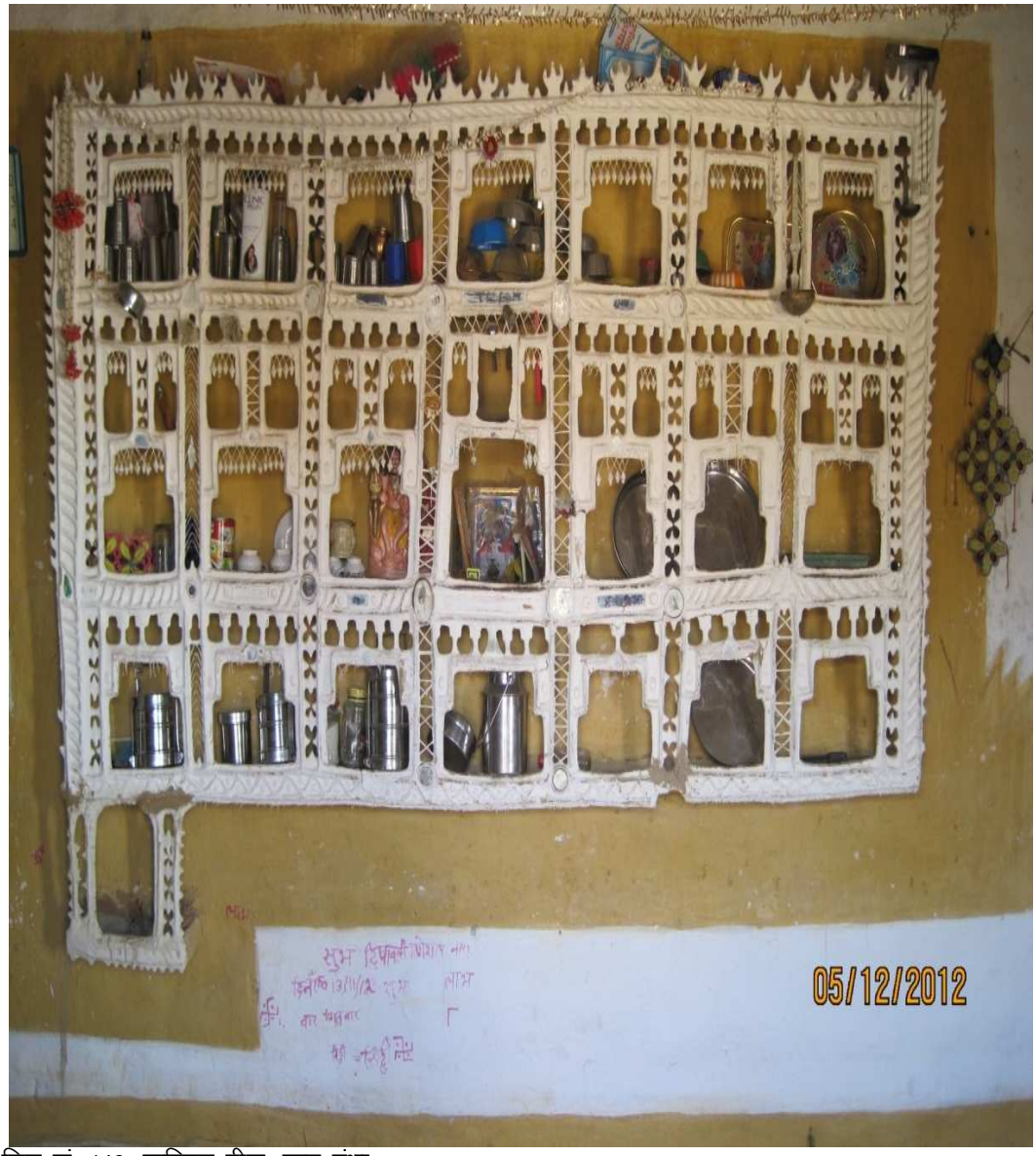

चित्र सं. 140, खण्डित बील, ग्राम मंधा

उपरोक्त बील भित्ति के मध्य में अवस्थित है। सभी खाँचे एक समान क्रम में बनाये गये है। नीचे की ओर एक खाँचा अलग बना हुआ है। जो उस प्रकार का आखरी खाँचा है। जो खण्डित हो चुका है। मोतियों व जालियों से अलंकृत यह बील बारम्बारता के नियमों का पालन करते हुए बना प्रतीत होता है। सम्पूर्ण बील में खाँचों की आकृति व जालिय अलंकरण को एक समान बनाया गया है। रुपों की आवृत्ति होने पर भी यह नीरस न होकर सौन्दर्यपूर्ण दृष्टिगत होता है।

चित्र सं. 141, बील अलंकरण, ग्राम कोठारी

जर–जर हुआ यह बील अपनी उपयोगिता के कारण इस भित्ति का हिस्सा है। कई प्रकार के आल्यों के स्वरुपों से अलंकृत है। इसके हर एक हिस्से का उपयुक्त प्रयोग किया गया है और प्राचीनता व अत्यधिक प्रयोग किये जाने तथा मरम्मत के अभाव में यह बील खण्डित अवस्था में है।

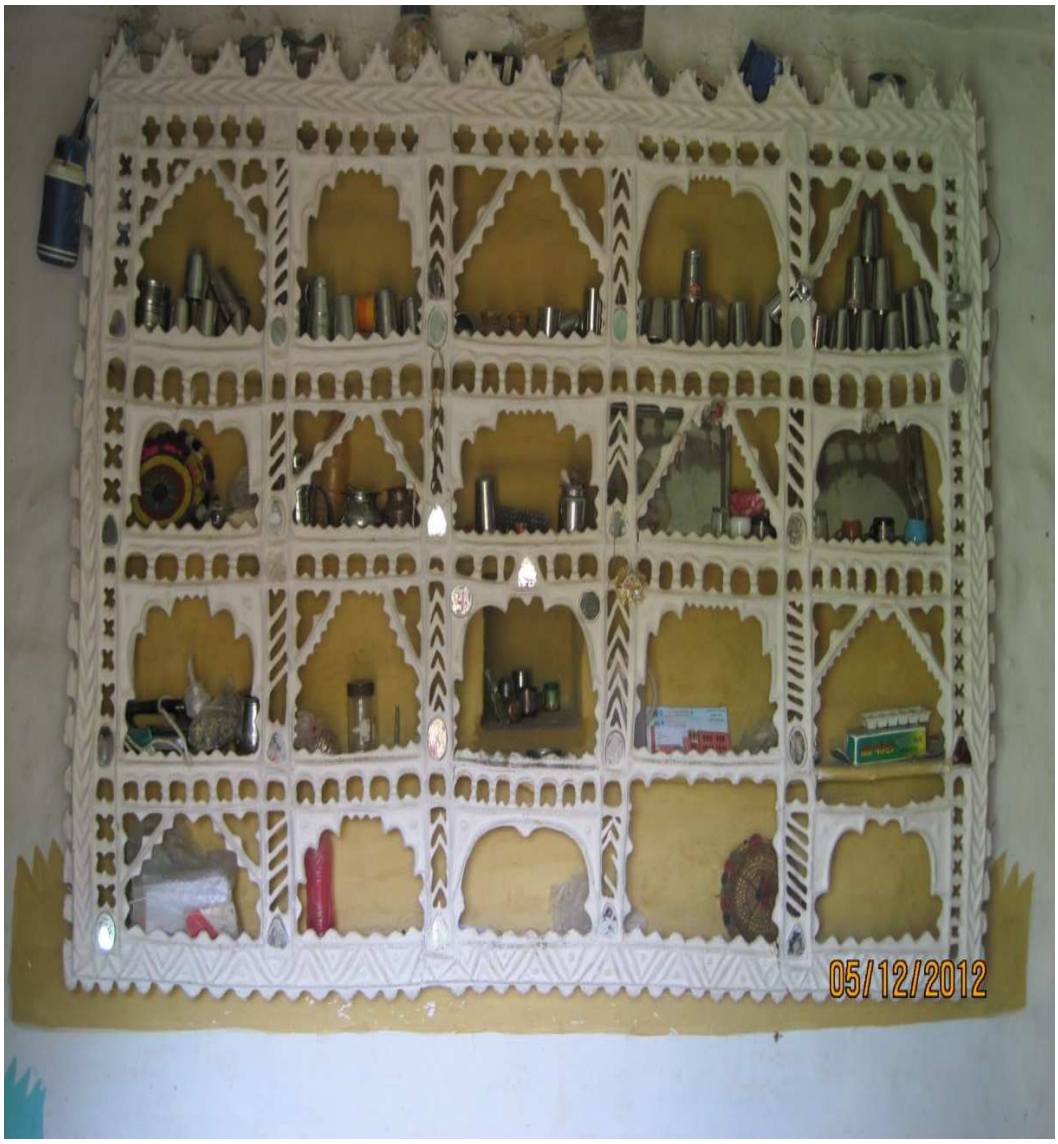

चित्र सं. 142, बील अलंकरण, कोठारी ग्राम

बील एक आयत में कई ज्यामितीय रुपों का संयोजन है। उपरोक्त बील में प्रत्येक कतार में एक छोड़ एक खाँचे या अल्या स्वरुप को दौहराया गया है। उपरी बारी पर यहाँ पर त्रिभुजाकार में दोनों ओर छोटी–छोटी कंगूरे बना कर अलंकारित रुप दिया गया है, इस प्रकार के रुपों को माँण्डना में बील के श्वेत रंग में दीप्ती मान हो इन का घरों को अद्‌भुत स्वरुप प्रदान करते है।

चित्र सं. 143, कोठी पर बील अलंकरण

इसमें तीजोरी के उपरी भागों में छोटी बील की आकृति को संयोजित कर इसे और अधिक सौन्दर्यपूर्ण एवं विशिष्ट रुप दिया गया है। बील की आकृति में भी कोणीय आकृतियों का संयोजन किया गया है। उसी प्रकार की आकृतियों का प्रयोग तिजोरी पर प्रयुक्त रिलीफ आकृतियों में किया गया है। इस प्रकार दोनों को समान अलंकरणों के प्रयोग से संयोजित रुप दिया गया है।

चित्र सं. 144, बील की 'बारी' का अलंकरणात्मक स्वरूप

उपरी हिस्से 'बारी' को दोनों ओर कंगलो से युक्त त्रिभुजाकर रुपों को लगाया गया है। जिन के मध्य उभारी बिन्दियों व कहीं वृताकर छिद्र बनाये गये है। इन त्रिभुजों के उपर पक्षी जैसी आकृति बनायी गई है। इस प्रकार बील के हर एक हिस्सो को अद्‌भुत अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान कर इस दैनिक उपयोग की वस्तु को विशिष्ट सौन्दर्य प्रदान किया जाता है।

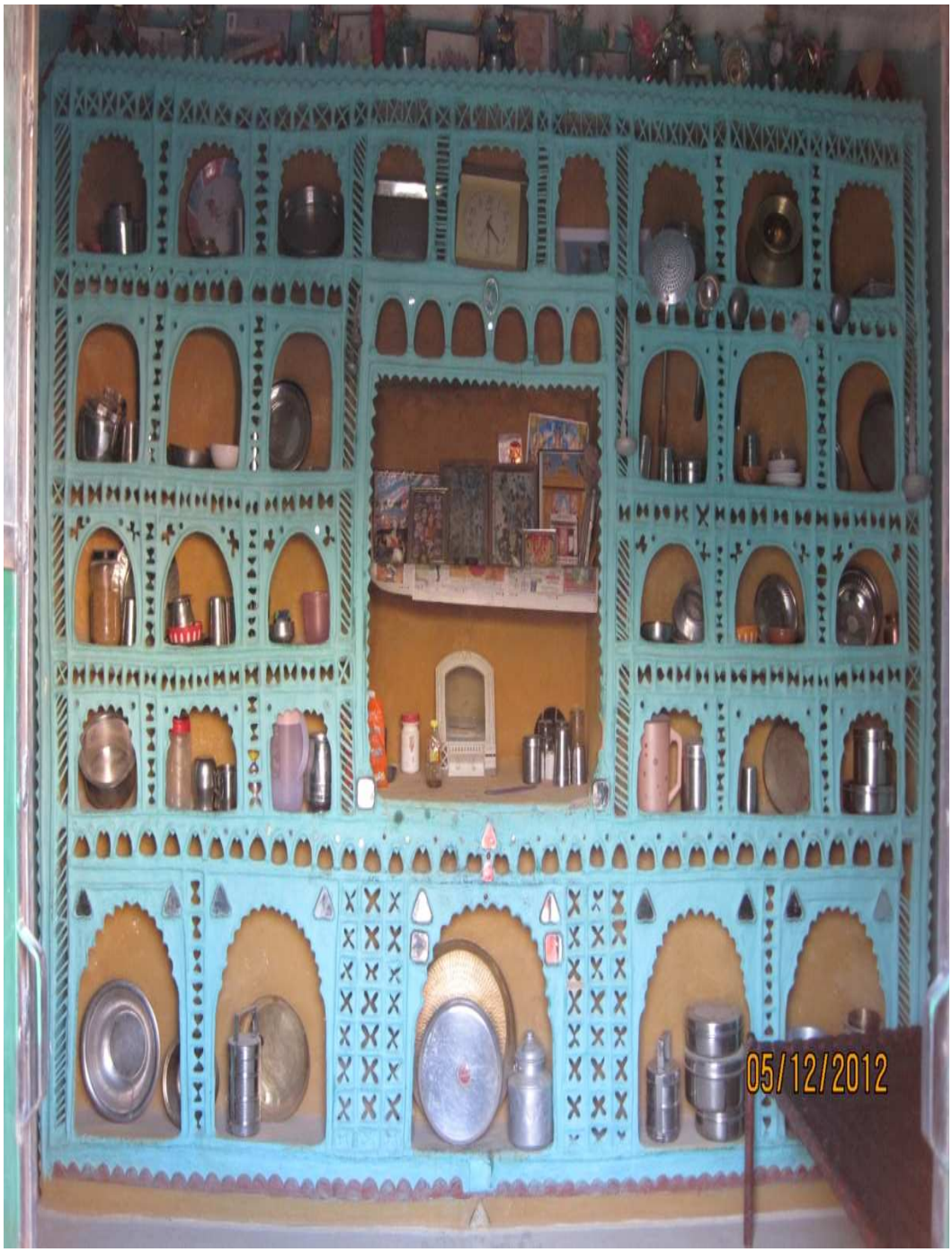

चित्र सं. 145, बील अलंकरण, ग्राम बरमसर

आयताकार रुप में संयोजित बील में अर्द्ध आण्डाकार रुपों कर सभी खाँचों में रुपायित कर, क्रम में लगाकर सामजस्य का प्रयोग कर बील के लोक सन्तुलन व सांमजस्य का प्रयोग कर बील के लोक अलंकरण के पीछे कलात्मक समझ को व्यक्त किया गया है। ये स्वरुप उद्‌भुत है। ये बील मूल रंगों के प्रयोग से न बन कर भी मूल आकारों में प्रस्तुत है।

चित्र सं. 146, छोटा बील स्वरूप

घर की आन्तरिक भित्ति का यह अलंकरण यहाँ दीवार की ऊपरी सतह पर बनाया गया है। जो छत की लकड़ी से कटा हुआ दृश्य मान है। उपरोक्त बील सम्भवतः पुराना है और कई बार रंगाकन व लीपे जाने से इसकी जालीयों का आकार कहीं–कहीं ही व्यक्त हो पा रहा है। बील की मरम्मत व रंग समय–समय पर कर इसे सम्भाला जाता है। परन्तु कई बार रंगाकर की परत में जाली रुप दब जाते है।

चित्र सं.147, बील अलंकरण, ग्राम बोआ

बील घर के वास्तु का एक हिस्सा है। यहाँ वस्तु संग्रह के इस अप्रतीम सौन्दर्य युक्त अलंकरण को घर के सदस्यों की तस्वीरों से सजा कर उसे इन लोगों से जोड़ दिया गया है। बील पर चमक युक्त डोरी आदि से सजाया गया है। मध्य में घड़ी लगाई गई है। ये उनके लिए अलंकरण की एक वस्तु होने के साथ घर की एक दीवार का हिस्सा है। जो सामान रखने, सजाने व टांगने के प्रयोग में लिया जाता है। इस प्रकार यह दीवार, खूँटी व अलमारी तीनों का संग्रहित रुप है। जो मुख्य कक्ष की शोभा बढ़ाता है।

चित्र सं. 148, खण्डित बील स्वरुप, ग्राम सलम्बर

उपरोक्त बील दीवार पर उपरी हिस्से में संरक्षित है, परन्तु निचली सतह का बील खण्डित अवस्था में है। आधुनिक समाज में इन लोक अलंकरणों का रुप व परम्पराओं का स्वरुप इस प्रकार खण्डित होते जा रहे है। जिससे इनकी नींव कमजोर होती जा रही है तथा ये अलंकरण लुप्त होने की कगार पर है।

चित्र सं. 149, खण्डित बील स्वरुप

जर–जर अवस्था में यह बील स्वरुप लुप्त होने की कगार पर है, उपरोक्त चित्र में बील जो सौन्दर्यपूर्ण जालियों से अलंकृत है, अपनी खण्डित अवस्था में अपने अस्तित्व को खोने की कगार पर है। लोग आधुनिकता की व्यस्तता में इन लोकरुपों को भूलते जा रहे है तथा इनकी देख–रेख तथा संभाल नहीं कर पा रहे है। इसके कारण ये रुप इन घरों से दूर होते जा रहे है।

चित्र सं. 150, बील अंलकरण, ग्राम नाणेला

वास्तु का एक सौन्दर्यपूर्ण अलंकरण बील यहाँ एक आयताकार रुप में कई छोटे–बड़े भिन्न–भिन्न खाँचों के रुप में व्यक्त है। यह बील स्वरुप अधिक अलंकरण से युक्त न होकर भी अद्‌भुत आकारों का संयोजन कर सौम्यता, सरलता को व्यक्त करता प्रतीत होता है।

चित्र सं. 151, बील संयोजन, ग्राम हाबूर

यहाँ बील को दो भागों में बनाया गया है। जो आपस में जुड़े हुए है। एक तरफ बील को बर्तनों के संग्रहण के लिए प्रयुक्त किया गया है तथा इसी से निकलते हुए दो खाँचों को अलग बनाते हुए पूजा का स्थान बनाया गया है। सम्पूर्ण बील एक ही प्रकार की जाली स्वरुप में बनाया गया है, परन्तु ऊपरी बारी का जाली अलंकरण कुछ भिन्न व्यक्त किया गया है।

चित्र सं. 152, बील में रिलीफ का प्रयोग, ग्राम सोरावा

उपरोक्त बील में जाली के स्थान को समतल बनाकर उस पर उभारदार रेखाओं व काँच से रिलीफ अलंकरण दिया गया है तथा मध्य में एक जाली द्वारा खाँचों को पृथक किया गया है। रिलीफ को रेखीय रुप में फूल व कोणीय आकृतियों से संयोजित किया गया है। इस प्रकार रिलीफ युक्त बील बहुत ही कम प्राप्त हुए है।

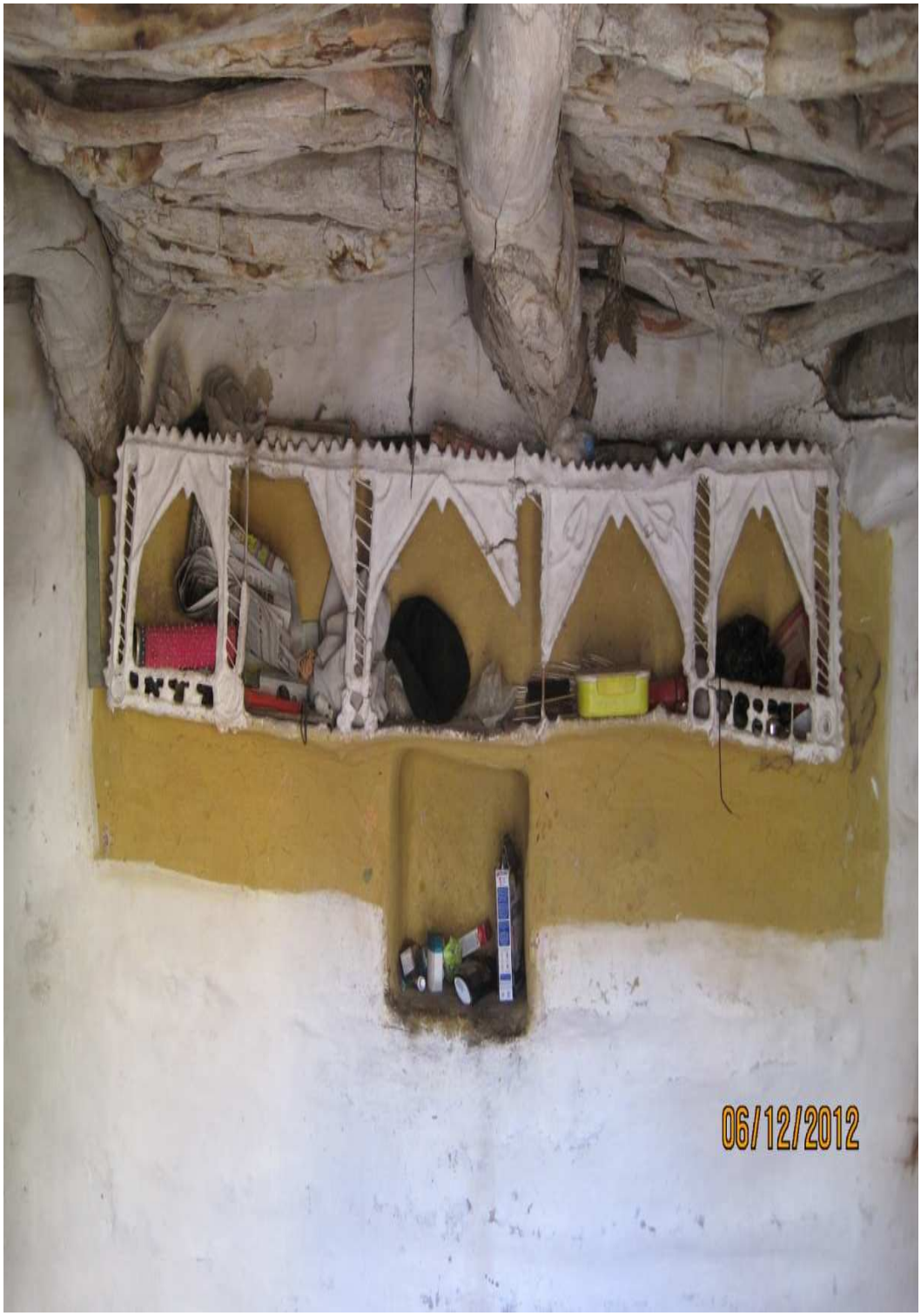

चित्र सं. 153, लुप्त होता स्वरुप, ग्राम कुच्छड़ी

बील जो सम्पूर्ण दीवार पर बनाया जाता है। यहाँ सिमट कर उपरी सतह पर रह गया है और एक अलमारी के रुप में बचा यह बील खण्डित बील का एक हिस्सा है। जो लुप्त होने की कगार पर है।

चित्र सं. 154, बील का जाली स्वरूप

यहाँ बील की जाली को दर्शाया गया है। जिस पर काँच का प्रयोग कर उसे ओर अधिक सौन्दर्य प्रदान किया गया है। निचली सतह पर केरीनुमा आकार देते हुए कंगूरों को संयोजित किया गया है।

पंचम अध्याय

सम्पूर्ण अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष

1. जैसलमेर क्षेत्र के भित्ति अलंकरण, उपयोगिता एवं सौन्दर्यात्मक–पक्ष
2. जैसलमेर के भौगोलिक परिदृश्य में प्रयुक्त कला का चाक्षुष आकर्षण
3. भित्ति अलंकरण परम्परा के रुप–विधान, अन्तराल प्रयोग एवं सृजनात्मक–पक्ष
4. जैसलमेर के निकटवर्ती क्षेत्रों एवं समीपवर्ती राज्य से आयातित कला प्रभाव
5. जैसलमेर भित्ति अलंकरण का वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य

जैसलमेर क्षेत्र के भित्ति अलंकरण, उपयोगिता एवं सौन्दर्यात्मक पक्ष भित्ति अलंकरण

जैसलमेर से प्राप्त प्रदत्तों तथा चित्रों आदि के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है, उपरोक्त परम्परा दशकों से अधिक से चली आ रही है, यहाँ से प्राप्त कई बील इस प्रकार के है, जो 100 वर्ष से भी अधिक पुराने है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जिन गांवों में यह बील घरों के अन्दर बने हुए है, परिवार के सदस्यों से साक्षात्कार लेने तथा उस क्षेत्र के उम्रदराज या बुजुर्ग व्यक्तियों से लिये गये, साक्षात्कार से यह स्पष्ट होता है कि उनके पूर्वज इस परम्परा या कला को निरतंरता के साथ लाये तथा उस कला को पारम्परिक धरोहर के रुप में आज भी संभाला जा रहा है।

जिस भी घर परिवार में बील देखा गया सभी के बीलों में एक समानता यह थी कि सभी बहुत सालों पुराने बने हुए थे तथा उसका निर्माण दो या तीन पीढ़ी पहले किया गया था। जिसमें बांस की खप्पचियाँ का प्रयोग, गोबर या मिंगड़ी का प्रयोग किया गया। सफेद मिट्टी या खड़िया का प्रयोग तथा गेरू को लाल रंग के रुप में लिया गया है।

चित्र सं. 155, बील का अलंकरणात्मक स्वरुप

चमक उत्पन्न करने के लिए अभ्रक का उपयोग किया जाता है। सभी बीलों की बनावट, उभार आल्यों की स्थिति तथा आल्यों के मध्य आधार, ऊपरी आधार, निचला आधार में परिवर्तन स्पष्ट नजर आता है। सभी का स्वरुप एक है तथा एकरुपता पर आधारित है, परन्तु फिर भी कलाकृतियों में कलाकार की सोच एवं सृजनात्मकता का प्रभाव पड़ता है, अतः बीलों में भिन्नता दिखाई देती है। बीलों में खपच्चियों का प्रयोग मुख्यतः किया गया है, इसी प्रकार से काँच, धागे व मिटट्ी से बने मोतीयों से अलंकृत स्वरुप प्रदान करने के लिए किया गया है।

बील के दांयी तथा बांयी ओर एवं मध्य के स्थान पर उभार स्वरुप पेड़, पक्षी आदि से आकारों का अंकन किया गया है। कलाकृति में उसकी ऊँचाई अल्यों का आकार आदि के अनुसार अलंकरण भी विभिन्न प्रकार से प्रदान किया गया है। कहीं–कहीं जालिनुमा आकृति तो एक त्रिभुजाकार तों कहीं तिरछी रेखाओं द्वारा आकृतियां या अलंकरण किया गया है। इसी प्रकार माँडना के सरल व ज्यामितीय स्वरूप भित्तियों को चूना मिट्टी व गेरू से अद्भुत स्वरुप प्रदान करते है और रिलीफ कोठियों, तिजौरियों को तथा बील घरों की भित्तियों को अलंकरणात्क सौन्दर्य प्रदान करती है।

चित्र सं. 156, माँडना का भित्तिय अलंकरण

उपयोगिता –

बील का अधिकांशतः उपयोग घर में प्रयुक्त होने वाली दैनिक उपयोग की सामग्री को रखने के लिए किया जाता है। जिनका अधिकाशः प्रयोग रसोई कार्य में होता है तथा भोजन के लिए प्रयुक्त की जाने वाले सामग्रियों व घर की छोटी–छोटी वस्तुओं में सहेज कर रखने के लिए इस प्रकार के बील का निर्माण किया जाता है।

बील को आधार प्रदान करने के लिए इसका निर्माण घर के निर्माण के साथ ही किया जाता है। जिससे बांस के जो हिस्से दीवार के अन्दर लाये जाने है तथा जो आधार एवं ऊपरी भाग की नींव का कार्य करते है।

उसी प्रकार माँडना इन कच्चे मकानों की बाह्य भित्तियों एवं जमीन को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान करती है। साथ ही घरों में शुभ संकेतों के रुप में प्रस्तुत किये जाते है। घर में सुख–शान्ति व मंगल कामना के रुप में महिलाओं द्वारा बनाये जाते है। उसी प्रकार रिलीफ कोठियों व तिजोरियों के आधार को अलंकरणात्मक प्रारुप प्रदान करने के उद्देश्य से बनाये जाते है।

सौन्दर्यात्मक पक्ष –

बील जैसी अद्‌भूत व अद्वितीय रचना का निर्माण पक्ष सरल होते हुए भी अवस्मरणीय बन जाता है। जिस प्रकार की अलंकरण तथा निर्माण बील का किया गया है, यह कहना कि यह घर के साधारण मनुष्यों ने या परिवार के सदस्यों द्वारा ही बनाया गया है, विश्वास करने योग्य नही रहता परन्तु यह सत्य है, कि इस प्रकार की सौन्दर्यपूर्ण कलाकृति या कलाकारी ग्रामीण क्षेत्र के साधारण व्यक्तियों द्वारा ही की गई है।

बील में प्रयुक्त होने वाले कंगूरे, मोती एवं जंजीर इसके सौन्दर्य को अद्‌भूत रुप प्रदान करते है। साथ ही छोटे–छोटे काँच के टुकड़ों का प्रयोग इसके उभरे हुए तल का और अधिक प्रकाशित कर देता है। बील का निर्माण उभारदार किया जाता है, परन्तु उसका अस्तित्व उसके पीछे की समतल दीवार के बिना नगण्य है, क्योंकि आधार का गहरा तल ही उभरे हुए तल को सौन्दर्य प्रदान करता है।

प्रकाश में धीरे–धीरे इसकी आभा को चार गुना बढ़ जाती है। जिस प्रकार चांद की विभिन्न कलाऐं होती है तथा अपनी एक कला का सौन्दर्य, दूसरे से भिन्न तथा अद्‌भूत होता है, उसी कला से बील पर प्रकाश के प्रभाव की प्रभाविता का भी प्रभाव भिन्न–भिन्न दृष्टिगत होता है। हर बील अपने आप में विशिष्ट व अनुठा होता है। जो सृजनकर्त्ता की रुचि अनुभव को अभिव्यक्त करता है।

जैसलमेर क्षेत्र में बील, माँडना व रिलीफ द्वारा इन घरों को कलात्मक सौन्दर्य प्रदान किया जाता है ये साधारण ज्यामितीय स्वरुपों में व्यक्त होते हुए भी अद्‌भुत सौन्दर्यपूर्ण अलंकरणात्मक रुप में प्रकट होते है।

जैसलमेर के भौगोलिक परिदृश्य में प्रयुक्त कला का चाक्षुष आकर्षण

जैसलमेर की पीली मिट्टी तथा रेल के सोने जैसे धोरों में किसी भी कलाकृति का रंग उसके जैसा ही प्रतीत होता है। यहाँ की भौगोलिक स्थिति के कारण प्रातःकाल, मध्यकाल, संध्या काल एवं रात्रि के समय में परिवर्तन के साथ प्रकृति में भी परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है तथा उसका अनुभव प्रत्यक्ष रुप से ही किया जा सकता है, प्रकृति के बीच शांति तथा सुकुन के साथ विभिन्न रंगों के समन्वय से मन को एक सुखद आभास व अनुभूति प्राप्त होती है, जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता है। चारों ओर रेत के टिलें तथा कहीं–कहीं पेड़ों की छावं सुखद अनुभूति को जागृत करती है, मन में शान्ति का भाव उत्पन्न होता है। यहाँ के जीवन शैली सरल व साधारण है।

जैसलमेर की रेत पर बनने वाले बरखान बरबस ही आकर्षित करते है, तथा उनके बनने तथा बिगड़ने एवं एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने का अनुभव अद्‌भुत व अविस्मरणीय रहता है। यहाँ के ग्रामीण क्षेत्र के घरों को लीप–पोत कर सुन्दर व आकर्षक रुप प्रदान किया जाता है, जो दर्शक की दृष्टि को अद्‌भूत अनुभव कराता है। महिलाओं द्वारा धारण किये जाने वाले आभूषण तथा रंग–बिरंगा पहनावा अलंकारिता से परिपूर्ण है। उसी प्रकार यहाँ पशुओं जैसे ऊँट को भी रंग–बिरंगें पलान (ऊँट सज्जा के लिए प्रयुक्त होने वाला अलंकृत वस्त्र) व मस्तक आभूषण तथा पैरों में घूँघरु, गले में माला इत्यादि से सुशोभित किया जाता है।

जैसलमेर के सांस्कृतिक परिदृश्य में गृह सज्जा माँडना, बील इत्यादि, इस क्षेत्र विशेष को अद्‌भूत व अलौकिक रुप में प्रस्तुत करते है। ये रुप सरल व साधारण होते हुए भी आकर्षक व मन मोहक होते है। जो सम्पूर्ण रुप में इस क्षेत्र की संस्कृति का परिचय देते हुए यहाँ के लोगों की कलात्मक सूझ का द्योतक है। यह रुप प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं के प्रयोग से निर्मित होने से इनका प्रकृति से जुड़ाव व्यक्त करती है तथा दर्शन को प्रकृति के ओर नजदीक पहुँचाती है।

भित्ति अलंकरण परम्परा के रुप–विधान, अन्तराल प्रयोग एवं सृजनात्मक–पक्ष

भित्ति अलंकरण के इस स्वरुप में अधिकाशः चतुर्भुज या आयताकार रुप का समावेश किया गया है तथा सामग्रियों को रखने के लिए विभिन्न आल्यों में उसका विभाजन किया गया है। कुछ बील के स्वरूपों में विशेष प्रकार की छोटी कोठी का प्रयोग, मध्य भाग में दीवार के अन्दरुनी भाग में किया गया है। जबकि विशेष रुप से आल्यों का निर्माण देवता या भगवान की प्रतिष्ठा या घर के पूर्वजों के दीपक के स्थान के रुप में भी होता है। आयताकार व चतुर्भुज आल्य के साथ मध्य भागों में त्रिभुज, पंचभुज, त्रिकोण, तारा या सूर्य आकृति, रेखाओं के विन्यास का प्रयोग किया गया है। रेतीली माटी में उत्पन्न पेड़–पोधों व जीव जन्तुओं की रेखाकृतियाँ या उभारनुमा आकृतियों का प्रयोग किया गया है।

लोककला में इस क्षेत्र के अलंकरणों में अधिकांशतः ज्यामितीय रुपों से सृजन किया गया है। यहाँ वास्तुकला में बाहरी दीवारों पर कहीं–कहीं त्रिभुजाकार आकारों में वृत्ताकार छिद्रों का निर्माण किया गया है, जिसका प्रभाव इस क्षेत्र के माँडना में भी त्रिभुज, आयताकार व पट्टिनुमा आकृतियों के रुप में देखा जा सकता है। जो सम्पूर्ण रुप में अद्भुत कलात्मक स्वरुप को प्रस्तुत करता है तथा रिलीफ के लौकिक रुपों में ज्यामितीय रेखीय आकृतियों का संयोजन साधारण दैनिक वस्तुओं को अलंकरणात्मक प्रारुप प्रदान करता है।

घर के आन्तिरिक भाग में कच्ची मिट्टी की दीवरों पर एक आल्य का दूसरे आल्य के साथ अन्तर तथा एक पक्ष या भाग का दूसरे भाग के साथ विभिन्नता, समानता, उतार–चढ़ाव आदि अन्तराल को सन्तुलित करता है।

जब एक आकृति का विभिन्न दूरियों से देखा जाता है, तो दूरियों के साथ उसके स्वरुप में आने वाले अन्तर तथा स्वरुप में अन्तर की प्रभाविता मनुष्य के अन्तरमन पर अपना अलग–अलग प्रभाव डालती है। आल्यों का मध्य जो अन्तर होता हैं उस अन्तर को विभिन्न अलंकरण द्वारा या उसकी मोटाई, चौडाई, कितनी रखनी है तथा उसे विभिन्न प्रकार की आकृति द्वारा पृथक रखा जाता है, अन्तराल प्रयोग कहलाता है।

यहा अन्तराल व कृति दोनों ही स्वरूपों का सृजन करती प्रतीत होती है। बील व माँडना रुपों में जितना महत्व बनाई गई आकृति का है उतना ही महत्व अन्तराल का भी है। अन्तराल आकृति द्वारा छोड़े गये स्थान का एक नया रुप प्रदान करता है। छोड़ा गया अन्तराल कभी सृजनकर्त्ता की सूझबूझ से रुपायित होता है तो कभी स्वतः ही रुपों का

निर्माण कर लेता है। इस प्रकार कच्ची भित्ति का अन्तराल कलात्मक रुपों का अद्‌भुत संयोजन प्रस्तुत करता है।

इस क्षेत्र विशेष के लोग साधारण जीवन यापन करते है तथा ग्रामीण परिवेश का प्रभाव स्पष्ट नजर आता है। अतः यहाँ के लोग प्रकृति को सर्वोपरि मानते है, प्रकृति या यहाँ की मिटट्ी उनके लिए माता स्वरुप है। अतः प्रकृति के अदभूत नजारों का समावेश उनके जनजीवन में स्पष्ट दिखाई देता है। पेड़–पौधे की सीमितता, ऊँटों की उपलब्धता, रेत की अधिकता एवं पीलेपन की अधिकता यहाँ स्पष्ट दिखाई देती है।

सृजनात्मकता के लिए यहाँ दो पक्ष मुक्त रुप से दृष्टिगत होते है। एक कच्चे मकान के तथा दूसरा ऊँट व रेतीले मैदान। कच्चे मकान उनके निवास स्थान होते है। अतः व्यक्ति अपने प्रकृति का अनुभव अपने घर से ही करता है। उसकी सृजनात्मक घर की चौखट व बाहरी आवरण से मुख्य कक्ष तक जाती है।

बाहरी आवरण पर माँडनों का प्रयोग उसकी शोभा के साथ प्रसन्नता का अहसास प्रदान करता है, जबकि चौक व दहलीज के अन्दर माँडने पुनः सृजनात्मकता को जागृत करते है। इसके पश्चात् मुख्य कक्ष में बील जैसे आकृतियों का निर्माण अंधकार युक्त कक्षों को सफेद अलंकरणात्मक रुप में आभा युक्त आश्चर्यचकित स्वरुप में प्रकट होते है।

इसी प्रकार से ऊँट यहाँ का प्रमुख साधन होने के कारण जनजीवन का आधार है। अतः ऊँट पर भी सृजनात्मकता का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है तथा ऊँट सज्जा के आधार पर ऊँट महोत्सव मनाया जाता है।

जैसलमेर के निकटवर्ती क्षेत्रों एवं समीपवर्ती राज्य से आयातित कला प्रभाव

जैसलमेर में सदियों से परम्पराओं, रीति–रिवाजों के साथ–साथ लोक कलाओं का निर्वाह होता आ रहा है। जैसलमेर की माटी से उपजी कलाओं में हस्तकला के अन्तर्गत पोकरण कला जो टेराकोटा कला का ही एक रुप है। इसी प्रकार माँडना कला जो सदियों से यहाँ रची बसी है। बील कला का जो एक प्रकार से जैसलमेर, बाड़मेर में दिखाई देता है तथा अन्यत्र कहीं दिखाई नहीं देता है। इस क्षेत्र में वस्त्रों पर कसीदाकारी, रंगाई, पेचवर्क इस क्षेत्र की हस्तशिल्प जैसलमेर की माटी को समृद्ध बनाती है।

यहाँ की लोक कलाओं पर सर्वाधिक प्रभाव पाकिस्तान की सीमा पर अवस्थित ग्रामीण क्षेत्रों का तथा भारत–पाकिस्तान के विभाजन के पश्चात् कुछ मुस्लिम परिवारों का भारत की ओर स्थापित हो जाना तथा एक बड़े परिवार का दो मुल्कों में विभाजित हो जाने के कारण जैसलमेर की संस्कृति तथा लोककलाओं पर मुस्लिम प्रथाओं, संस्कृति पर स्पष्ट रुप से प्रभाव दिखाई देता है।

गुजरात राज्य से निकटता होने के कारण इस क्षेत्र की कला व जीवन शैली पर गुजराती प्रभाव स्पष्ट रुप से प्रदर्शित होता है। जैसलमेर से संलग्न जोधपुर, बाड़मेर, बीकानेर की संस्कृति व परम्पराओं में राजपूती संस्कृति व परम्पराओं की अधिकता होने से इसका स्पष्ट प्रभाव जैसलमेर की लोककलाओं पर स्पष्ट देखा जा सकता है।

जैसलमेर भित्ति अलंकरण का वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य

सुन्दर वहीं है, जो कल्याणकारी है जिसका दर्शन आनन्द का अनुभव दें। कोई भी वस्तु रुप या दृश्य जो आनन्द प्रदान करें, जो मन को सुखद भावों से रसाभूत करे वह सुन्दर है। सरल सादगीपूर्ण रुप जो जटिलता रहित हों, जो मन व मस्तिष्क को प्रसन्नता, आनन्द की अनुभूति दें, सौन्दर्य प्रकट करता है।

जैसलमेर क्षेत्र के सादगीपूर्ण जीवन सरल, शान्त वातावरण मन को सुखद अनुभूति देने वाले है। ग्रामीण परिवेश के माँडणा युक्त कच्चे घर सरल जीवन, अपनी सादगी पूर्ण, परिवेश के कारण स्वतः ही मन को आन्दन व दृष्टि को सुखद अनुभव प्रदान करते है। यहाँ की जीवन शैली सादगी पूर्ण पारम्परिक स्वरुप में अवस्थित है। इनका पहनावा हाव–भाव, व्यवहार, सरल आडम्बर रहित है।

राजस्थान के रंगों में रचे बसे वातावरण की जटिल परिस्थितियों में भी सरल शान्त सौम्य व्यवहार से युक्त जीवन व्यतीत करते है। इस प्रकार के वातावरण व जीवन का दृश्य आनन्द का अनुभव प्रदान करता है। इस क्षेत्र के ग्रामीण परिवेश के घरों का वास्तु, शिल्प अद्‌भूत दृश्य का सृजन करता है। बाहरी दीवारों पर गेरु, खड़िया या पीली मिट्‌टी से सपाट रंगाकंन व सरल रुपों का सृजन प्रस्तुत कर सौन्दर्य पूर्ण सृष्टि को रुप प्रदान करता है। ये रुप और रंग मन व मस्तिष्क को अद्‌भूत आनन्द की प्राप्ति देने वाले होते है।

चित्र सं. 157, जैसलमेर के वास्तु स्वरुप का प्रतिबिम्ब

यहाँ के वास्तु में प्रवेश द्वार के ऊपरी भाग में अलग ही प्रकार की कुछ आकृतियां सृजित की गई है, जो सरल होते हुए भी आश्चर्यजनक है। यह आकृतियाँ सृजनकर्त्ता की सृजनात्मक प्रवृति का घोतक है, जिसमें एक त्रिभुजाकार को बाहर की उपरी दीवार पर वृत्ताकार छिद्रों सहित संयोजित किया गया है। इन छिद्रों के वृत्ताकार अवकाश से आकाश का दृश्य अद्‌भूत आश्चर्य से रसाभूत करता है और ऐसे ही छोटे–छोटे अलंकरण ग्रामीण घरों को अद्‌भूत आश्चर्य से युक्त करते है। जिनका सृजन ये लोग अनजाने में ही कर देते है। जो इनके जीवन को अदम्य आकर्षण प्रदान करते है। इनके वस्त्रों के रंग, वेशभूषा तथा सम्पूर्ण ग्रामीण दृश्य संयोजित रुप में प्रकट होकर अप्रतीम आकर्षक दृश्य को रुपायित करता है।

सादा जीवन शैली से युक्त यह ग्रामीण कच्चे घरों की भित्तियों को अलंकरणात्मक स्वरुप प्रदान करने के अभिप्राय से अपनी संस्कृति के पारम्परिक लोक कलात्मक रुपों का सृजन करते है। जो सीमित प्रकृति प्रदत्त साधनों से निर्मित वस्तुनिरपेक्ष कला को प्रकट करने वाले होते है।

इसी प्रकार 'बील' जो इनके वास्तु का एक अभिन्न अंग होते हुए उपयोगी व कलात्मक स्वरुप को प्रकट करता है। इसमें कई ज्यामितीय रुपों का सृजन किया जाता है। यह भित्ति पर, भित्ति से जुड़ी हुई अलमारियों का एक संग्रह है। जो सम्पूर्ण रुप में ज्यामितीय सरल रुपों के संयोजन से अद्‌भूत स्वरुप में प्रकट होता है। 'बील' सफेद रंग से रंगा होता है, तथा उभरे हुए तल की आंतरिक भित्ति छाया युक्त होती है। जिससे बील में छोड़े गये स्थान गहरी सतह के आधार से रुपों का सृजन करते है तथा बनाई गयी आकृति तथा छोड़ा गया आधार संयोजित रुप में अलंकरणात्मक अद्‌भुत स्वरुप को प्रकट करता है। जो दृष्टि व मस्तिष्क को आश्चर्यचकित करने वाला होता है।

चित्र सं. 158, घर के प्रवेश द्वार पर वास्तु का अद्‌भुत स्वरुप

इस क्षेत्र में अधिकांशतः लोक कला के स्वरुपों में ज्यामितीय आकृति व कोणीयता का समावेश दृष्टिगत होता है, शायद यहाँ की भौगोलिक व कटीली वनस्पति का प्रभाव है। क्योंकि कलाकृति पर कलाकार की वातावरणीय प्रभाव पड़ना स्वभाविक है, जो इन कलाकृतियों से अभिव्यक्त होता है।

इस मरु प्रदेश में बनाये जाने वाले माँडनों में भी सरल, सपाट, ज्यामितीय रुपों का सृजन किया गया है। जो लाल गेरू या पीली मिट्टी पर सफेद रंग द्वारा अंकित किये जाते है। यहाँ आकृतियों का सृजन सफेद रंग करता है। परन्तु छोड़े गये लाल या पीला आधार स्वतः ही आकार को प्राप्त कर नये रुपों का सृजन करता है। जो कभी कलाकार की सूझ का परिणाम होता है तो कभी अनजाने में ही सृजन का रुप होता है। यह आकार लाल व सफेद रुपों का अद्‌भूत दृश्य प्रकट करते है।

इसी प्रकार मिट्टी से निर्मित कोठियों एवं तिजोरियों पर रिलीफ व लोककला के अद्‌भुत अलंकरण प्राप्त होते है। यहाँ प्राप्त से प्राप्त पकी हुई मिट्टी के खिलौने जो वास्तविक स्वरुपों से अलग होते हुए साधारण बाल सुलभ रुपों को अभिव्यक्त करते है। सरल सुन्दर रुप में प्रकट लोक कलात्मक रुप वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य के अप्रतीम दृश्यों का सृजन करते है। कलात्मक रुपों को प्रकट करते हुए ग्रामीण संस्कृति परिदृश्य को अद्‌भुत स्वरुप प्रदान करते है। जो दर्शक को आनन्द की प्राप्ति कराने वाले होते है तथा इन कलात्मक रुपों का स्वरुप पारम्परिक व सांस्कृतिक होते हुए भी कलात्मक गुणों से ओत–प्रोत है।

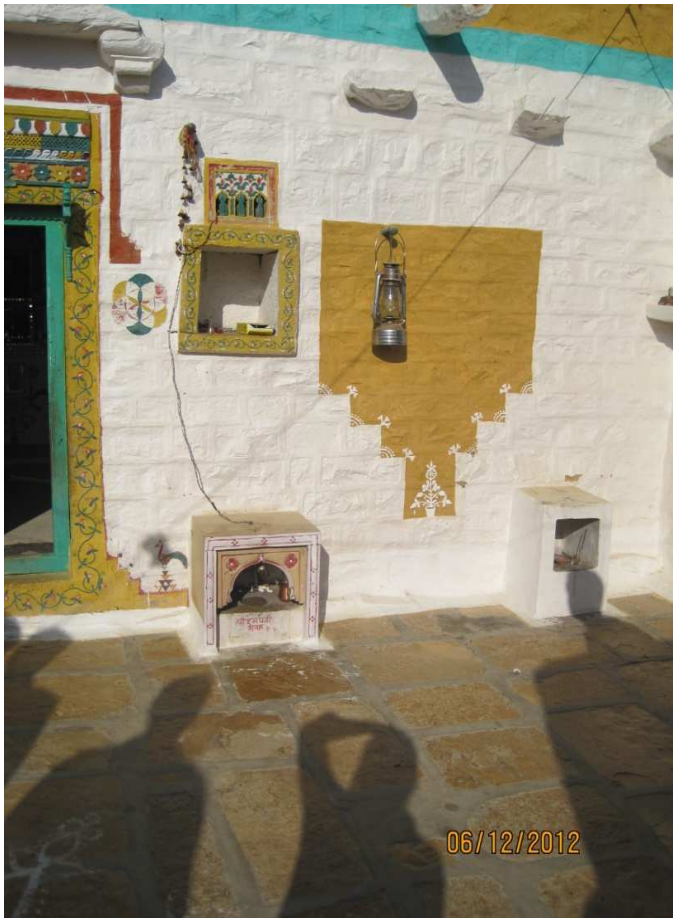

चित्र सं. 159, वस्तुनिरपेक्ष को प्रदृशित करता जैसलमेर के घर का एक दृश्य

षष्टम् अध्याय

उपसंहार

1. अध्ययन से प्राप्त उपलब्धियाँ
2. नवीन स्थापनाऐं
3. परवर्ती शोध की नवीन सम्भावनाऐं।

अध्ययन से प्राप्त उपलब्धियाँ

लोक कला के रुप में स्थापित माँडना कला ने इस क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। पर्यटन क्षेत्र को भी आकर्षित करने में इस कला की भूमिका अहम् रही है। विदेशी पर्यटक जब जैसलमेर का अवलोकन करते है तो यहाँ की सांस्कृति को महसूस करते है। पयर्टक जब इस क्षेत्र की ओर अपना पहला कदम बढ़ाते है तो सर्वप्रथम उन्हें विभिन्न प्रकार के माँडनों को इस परिवेश में पाते है, हालांकि यह माँडने पारम्परिक माँडनों से भिन्नता प्रदर्शित करते है, क्योंकि यह माँडने पारम्परिक तकनीक, रंगों, आकृतियों में वर्तमान सांमजस्य के साथ तालमेल कर बनाये जाते है, तथा यह केवल आकर्षक की एक विषयवस्तु के रुप में उनके सम्मुख प्रस्तुत की जाती है।

जबकि पारम्परिक परम्पराओं के अनुसार माँडना का मूल स्वरुप ग्रामीण क्षेत्र के कस्बों, घरों की ओर उन्मुख करने को ही प्राप्त होते है। सैलानी इस बेहतरीन व खूबसूरत कला को निहारते है तथा उनकी बनावट, तकनीक, रुप, सौन्दर्य, रस आदि को मनोभावों द्वारा गृहण कर जिज्ञासा को बढ़ाते है। जिसके प्रभाव के कारण यह कला उन्हें ग्रामीण क्षेत्र की ओर ले जाती है। जहाँ जाकर वह इस कला की पारम्परिक परम्परा को जान व समझ पाते है, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र व शहरी क्षेत्र तथा आधुनिकता के कारण इस परम्परागत कला में परिवर्तन भी स्पष्ट देखे जा सकते है। परन्तु फिर भी यह जैसलमेर की संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है तथा सदियों से चली आ रही इस परम्परा का निर्वाह यहां के सभी व्यक्ति करते है। यह कला इस क्षेत्र में रची बसी है। क्योंकि सभी हिन्दु मन परम्परा से पीढ़ियों से जुड़े हुए है तथा इसकी एक ओर विशेषता यह रही है कि इस कला के विभिन्न पक्ष व आयाम है, जो विशेष त्यौहारों, पर्वों, उत्सवों से जुड़े हुए है। त्यौहार उत्सव व पर्व के अनुसार माँडनों का निर्माण किया जाता है। अतः पयर्टन के क्षेत्र को लुभाने के लिए तथा आकर्षण उत्पन करने के लिए विभिन्न प्रकार के माँडनों का प्रयोग किया जाता रहा है।

इसे इस प्रकार से भी कहा जा सकता है कि इस प्रकार की कला में जो नवीन परिवर्तन किये जा रहे है, वह इस कला को संरक्षण भी प्रधान कर रहा है। इस प्रकार से कला की वास्तविकता से दूरी तो बढ़ रही है। परन्तु विभिन्न समारोहों उत्सवों, पर्वों में इस प्रकार से माँडनों के प्रदर्शन से इस कला का फोटोग्राफी द्वारा संरक्षण भी हो रहा है। आज देश की ही नहीं विदेशों की कई पत्र–पत्रिकाओं में माँडनों के स्वरूप प्राप्त हो सकते है।

यह वास्तविकता स्वरूप से भिन्न तो होते है परन्तु हमारी परम्पराओं व संस्कृति के स्वरुप को प्रकट करते है। ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों को पर्यटन क्षेत्र में इस कला के प्रभाव को उजागर करने तथा उसके विकास के लिए आमंत्रित किया जाता है। महिलाओं द्वारा कई अवसरों पर उनके द्वारा परम्परागत पद्धति पर आधारित कला का प्रदर्शन किया जाता है। जिससे पयर्टक भावविभोर होकर इस कला का रसपान करते है, तथा मुनष्य की जिज्ञासा प्रवृति उन्हें भी इस कला की ओर आकर्षित करती है। जिसके फलस्वरुप कई विदेशी महिलाओं को भी रस कला में सम्मिलित होते हुए देखा गया है तथा उनके दिल व मन को उत्पन्न विभिन्न भावों को आनन्दतम् स्वरूप में स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है।

बांस की खप्पचियों द्वारा निर्मित ऊट की मिगड़ी या घोड़े की लीद के साथ मिट्टी का उपयोग कर खप्पचियों पर उसका लेपन कर बनाये गये अलमारीनुमा उपयोगी आकृति अद्भूत होती है विभिन्न अंलकरणों से युक्त यह कला कई पीढ़ियों से इस क्षेत्र की विशेषता रही है। विदेशी पयर्टक व सौलानियों के लिए यह एक कौतुहल का विषय है कि इसका निर्माण किस प्रकार से किया जाता है। प्रत्येक **'बील'** की आकृति अपने आप ने विशिष्ट व अलग महत्व को प्रदर्शित करती है। पयर्टकों द्वारा इस कला के सूर्य व प्रकाश के अन्तर के कारण तथा छायाकंन भाग से विभिन्न आकृतियों के निर्माण व रुप व आकृति में परिवर्तन को देखना रोमांचित करता है। यह कला के इस प्रकार के प्रदर्शन से ग्रामीण क्षेत्र का आय की प्राप्ति होती है। जिससे इस कला को प्रोत्साहन प्राप्त होता है तथा ग्रामीण इस क्षेत्र की इस विशेष लोक कला को संरक्षित रखने की कोशिश कर रही है। चूँकि यह कला पीढ़ियों से चली आ रही है। अतः उस परम्परा के अनुसार उसकी मरम्मत कर उसे संरक्षण प्रदान किया जा रहा है। इसलिए पयर्टन क्षेत्र का प्रभाव इस कला पर देखा जा सकता है।

चूँकि इस कला के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के विकास व उत्थान को एक दिशा प्राप्त होती है। अतः इससे ग्रामीण जन जीवन में इस कला की अहम् भूमिका है। इस कला में वर्तमान समय का प्रभाव भी स्पष्ट नजर आता है। वर्तमान समय में बनाये जाने वाले बील पारम्परिक बीलों से स्पष्ट रुप से भिन्न होते है। वर्तमान समय के बील में विभिन्न रंगों का प्रयोग तथा आकर्षित करने के लिए अन्य सामग्रियों का उपयोग अब किया जाने लगा है। जो परम्परागत बील के लुप्त का कारण भी है। कच्चे मकान समय के साथ धीरे–धीरे पक्के मकान व घरों में बदल रहे है। जिसके भाव के कारण जनजीवन के इस कला के प्रति मोह दिखाई नहीं देता है। इस कला में पहले निर्माण करने वाले समाज की

परम्पराओं, भावनाओं का जुड़ाव गहरा होता था। जबकि अब केवल पयर्टन को लुभाने के लिए इस कला का प्रदर्शन किया जाता है।

परन्तु नवीन विचारधाराओं, आस्थाओं के साथ इस कला के स्वरुप में भी भिन्नता तो आ रही है। साथ ही उनके इस स्वरुप को भी संरक्षण मिल रहा है तथा यह कला भी अब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर उत्थान भी सम्भव हो पाया है।

सैलानियों द्वारा तथा विदेशी पयर्टन के लिए जब इस प्रकार की कला का प्रदर्शन या उनके द्वारा अवलोकन किया जाता है तो वह हमारे सभ्यता, परम्पराओं से एक जुड़ाव महसूस करते है तथा भारतीय संस्कृति, राजस्थानी संस्कृति की धरोहरों, विरासतों पर आश्चर्यचकित होते है। इस प्रकार की कला से उन्हें अभिप्रेरणा भी प्राप्त होती है तथा जैसलमेर की यह कला विदेशी वस्त्रों तथा पत्र–पत्रिकाओं की शोभा भी बढ़ाती है।

यह कला प्रेरणा स्रोत का कार्य भी करती है। फोटोग्राफी फिल्म आदि द्वारा जो प्रदत्त संग्रहित किये जाते है। वह इस कला के प्रचार–प्रसार में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते है। माँडना, बील तथा बील के विभिन्न स्वरुपों के कलात्मकता प्रदान करने के लिए उन पर बनाई जाने वाले मिट्टी से आकृतियों चूड़ियों, कांच के टुकड़ों से रिलीफ कला का एक अंग है। जो उभार स्वरुप उसे अलंकारित, सौन्दर्यात्मक स्वरुप प्रदान करती है।

इस प्रकार की विभिन्न बीलों के विभिन्न स्वरुप, रिलीफ की विभिन्न आकृतियाँ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त करती है। माँडनों की यहाँ की परम्परा अधिकांश दीवारों पर भित्ति चित्रों के रुप में प्रदर्शित की जाती है तथा उसका अधिकांश स्वरुप सरल व स्पष्ट होता है। जो यहाँ की नीवन शैली में सरसता व निर्मलता तथा साधारण जीवन को स्पष्ट करता है।

माँडनों का अंकन जब भित्तियों पर किया जाता है तो यह व्यक्ति को स्वतः ही आकर्षित करता है पारम्परिक कला का अंकन कच्चे घरों की दीवारों को लीप कर उस पर ऊँट की मिगड़ी या घोड़े की लीद में मिट्टी से लीपी भित्तियों पर सफेद खड़ीन या गेरु से आकृतियों के निर्माण द्वारा किया जाता है। प्राकृतिक परिवेश व पद्धति द्वारा प्रदत्त वातावरण में इस प्रकार से गोल, त्रिभुजनुमा आकृतियों द्वारा, पशुपक्षी, पत्तियों तथा लोक देवताओं व देवियों को समर्पित आकृतियों व्यक्ति को लुभाती है तथा मन में सन्तोष व सुख के भावों को जागृत करती है।

विशेष महत्व व प्रायोजन को स्पष्ट रुप से आकृतियों, चित्रों रेखाओं द्वारा अंकित कर उसे माँडना के रुप में प्रदर्शन करना शुभ संकेत व सूचनाओं का मौन आदान–प्रदान है जो समाज व वातावरण में प्रचारित हो जाता है। मॉडने के स्वरूप में अनुसार उसने महत्व को महिलाऐं भलीभाँति समझ जाती है तथा अपने मन के भावों, विचारों, मनस्थिति आदि को इस प्रकार से प्रदर्शित करती है। इस प्रकार की विभिन्न आकृतियाँ व माँडने विदेशी पर्यटनों को अपनी और आकर्षित कर उन्हें अभिभूत करते है।

इस प्रकार की कला वर्तमान समय में नवीन पीढ़ी की ओर समर्पित होकर संरक्षण की दिशा में नवीन प्रयासों की ओर विस्थापित हो रही है। यह पारम्परागत् कला अब ग्रामीण क्षेत्र का अंग न होकर कम्प्यूटर तकनीकी व तकनीकी के साथ नवीन ज्ञान का सहारा लेकर विलुप्त होने वाली इस लोक कला को नवीन दिशा प्रदान कर रही है। नयी पीढ़ी अपने विचारों, भावों तथा सृजनात्मकता का प्रयोग कर परम्परागत कला कर अपनी अभिव्यक्ति का यर्थाथ के अनुसार प्रस्तुत करती हुई दिखाई देती है। नवीन पीढ़ी व्यावसायिकता के ओर उन्मुख होकर इस कला के महत्व को भुला रही है।

नवीन पीढ़ी के युवा इस कला को तकनीक तथा प्रयोगात्मक अनुभव द्वारा वस्त्रों, आभूषणों, समाग्रियों आदि पर अंकित कर परम्परागत लोककला शैली को विलुप्ति की ओर अग्रसर हो रहे है।

नवीन स्थापनाऐं

जैसलमेर के क्षेत्र में भित्ति अलंकरण परम्परा या शैली की जो विशिष्टता दृष्टिगत तथा अवलौकिक होती रही है। वह यहाँ के जनमानस के दृष्टिपटल पर सामाजिक परम्पराओं से जुड़ी हुई है। महिलाओं द्वारा सम्बन्धों में प्रमादता तथा पारिवारिक सम्बन्धों में दृढ़ता, स्त्री का परिवार के प्रति समर्पण, कर्त्तव्य, दायित्व इस कला से जुड़े हुए है। एक स्त्री द्वारा जब इस प्रकार की कला का सृजन अपने घर व परिवार के लिए किया जाता है तो उसके अर्न्तमन में व्याप्त खुशी, उल्लास सृजनता के रुप में मूर्तरूप द्वारा अपनी अभिव्यक्ति को 'बील', माँडना तथा रिलीफ ने रुप में अभिव्यक्त होता है।

पयर्टन के क्षेत्र में सैलानियों को आकर्षित करने तथा उन्हें जैसलमेर की पारम्परिक परम्पराओं, रीति–रिवाजों से रुबरु करने के लिए यह कला एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह भी कर रही है। 'बील' वास्तुकला का एक अप्रतीम उदाहरण है, जो महिलाओं की कुशलता, कुशाग्रता, एकाग्रता, लगन, परिश्रम तथा सर्मपण को अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

विदेशी पर्यटक जब जैसलमेर की रेतीली मिट्टी तथा बरखान को देखकर आश्चर्यचकित होते है, तो वहीं वह यहाँ की माँडना कला बील को देखकर भाव विभोर हो जाते है। इसी प्रकार इस कला का प्रयोग लकड़ी के सामान बनाने, वस्त्रों पर छपाई करने तथा अन्य सामग्रियों पर इस प्रकार के चित्रण पयर्टन क्षेत्र में नवीन आयामों का सृजन करते है। लोगों द्वारा कौतुहल पूर्वक इस कला को निहारना तथा उससे अभिप्रेरित होकर नवीन सृजन का प्रार्दुभाव होना स्वाभाविक है।

दीवारों पर बनाये गये माँडने, आंगन या चौक में बनाये गये माँडना, विशेष उत्सव या पर्व के अनुसार बनाये जाने वाले माँडने के विभिन्न स्वरुप यहां के जनमानस की जीवन शैली तथा प्रकृति व ईश्वर के प्रति आस्था को अभिव्यक्ति करते है।

जैसलमेर में माँडनों का स्वरुप सरल प्रतीत होता है। अधिकांश माँडनों में कच्चे घर की दीवार को आधार बनाकर एक पंक्ति के रुप में खड़ीन या सफेद मिट्टी का लेप बनाकर लीपा जाता है या पोता जाता है। इस पंक्ति की मोटाई अधिक होती है। इसी प्रकार से पंक्ति के मध्य में त्रिभुजाकार आकृति या चतुभुर्जाकार, आयताकार आकृति बनाकर फूल, पत्तियों का चित्रण किया जाता है। अधिकांश माँडनों में फूल, पत्तियों प्रतिबिम्ब ही स्पष्ट होता है। माँडनों में पशु जो आम जनमानस से सम्बन्धित है। माँडनों में प्रयुक्त कर उनका रेखांकन चित्रण किया जाता है। इस प्रकार की कला के चित्रण द्वारा पयर्टन क्षेत्र

द्वारा बढ़ावा भी दिया जा रहा है। जिससे इस क्षेत्र के विकास को प्रोत्साहन भी प्राप्त हो सकें। सरकार द्वारा विभिन्न एजेन्सियों संस्थाओं द्वारा इस प्रकार की कला के कार्यों के लिए प्रोत्साहन, प्रशिक्षण भी किया जा रहा है। सरकार द्वारा इसके प्रचार प्रसार के लिए निजी संस्थानों द्वारा प्रोजेक्ट बनाकर उन पर कार्य भी किये जा रहे है तथा सरकार द्वारा इस कला को संरक्षण प्रदान करने के लिए बजट की पारित करती है। इस क्षेत्र में नवीन संभावनाओं के लिए युवा पीढ़ी को प्रशिक्षण भी प्रदान किया जा रहा है। जिससे विलुप्त होती इस पारम्पारिक कला का युवा पीढ़ी का संरक्षण भी प्राप्त हो सकें तथा वह अपने गृह पर्यावरण के साथ सामंजस्य कर इस कला में अपना योगदान प्रदान कर सकें।

वर्तमान संदर्भ में पयर्टन व्यवसाय से जुड़ी हुए संस्थाऐं, हॉटल, संस्थान आदि के द्वारा इस कला का उपयोग अन्य सामग्रियों के निर्माण के साथ चित्रण के रुप में किया जाने लगा है जैसे वस्त्रों पर माँडनों की डिजाइन बनाये जाने लगे है जो आम संस्कृति की पहचान है तथा पहनने वाले का उस संस्कृति के साथ जुड़ाव को प्रदर्शित करता है, चाहे वह जुड़ाव आध्यात्मिक, सांस्कृतिक या व्यावसायिक ही क्यों न हो। इस प्रकार के चित्रण का प्रयोग अब विभिन्न सामग्रियों पर किया जाने लगा है तथा व्यक्तियों द्वारा इसे सराहा भी जा रहा है। विलुप्त होती जा रही परम्पराओं को इस प्रकार से एक सरंक्षण की प्राप्ति हो रही है। नवीन तकनीकों तथा रंगों के विभिन्न सामंजस्य, कम्प्यूटर तकनीकों के साथ होने लगे है। जिससे परम्परागत विधा या कला अब विलुप्त होने की कगार पर है। फिर भी सकारात्मक सोच के अनुसार इस कला में परिवर्तन से नवीन पीढ़ी इस कला को समझने की चेष्टा तथा उपयोग अवश्य कर रही है।

पारम्परिक कला में रोजगार के अवसर में बढ़ोतरी अवश्य हुई है। होटलों, रेस्टोरेस्टों के साथ–साथ सार्वजनिक स्थानों पर सरकार द्वारा इस प्रकार की कलाओं के प्रदर्शन से रोजगार के अवसर बढ़ रही है। इस प्रकार से इस कला के प्रति समर्पित व्यक्तियों को भी इस कला भी प्रति अपना जुड़ाव व समर्पण इसके संरक्षण में योगदान प्रदान कर रहा है।

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर जैसलमेर की धरोहर को सांस्कृतिक विरासत व धरोहरों का में सम्मिलित किये जाने से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस क्षेत्र को अमूर्त पूर्व लाभ की प्राप्ति हो रही है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई संस्थाऐं व शोधार्थी इस क्षेत्र से जुड़कर इसके विकास तथा नवीन दिशा में प्राप्त उपलब्धियों पर कार्य कर रहे है। जिससे इस क्षेत्र के विकास व उत्थान पर सकारात्मक प्रभाव नजर आता है।

विभिन्न प्रकार की कलाकृतियों, शिल्पकलाओं से सृजनात्मकता के साथ प्रस्तुत आकृतियों तथा उत्पादित वस्तुओं व सामग्रियों के द्वारा इस क्षेत्र के व्यापार व वाणिज्य को भी लाभ की प्राप्ति होती है।

नवीनतम तकनीकों के उपयोग से संरक्षण को लाभ तो प्राप्त नहीं होता है। परन्तु कहीं ना कहीं इसका संरक्षण तथा मूल भावों के प्रादुर्भाव से अन्य आकृतियों व आकार का स्वरुप परिवर्तित होने के पश्चात् भी जैसलमेर की संस्कृति व परम्पराओं की अमिट छाप छोड़ता है। जो इस क्षेत्र की विशिष्टता को प्रदर्शित करती है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग के साथ–साथ केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा भी इस प्रकार की कलाओं को जो लोककला से जुड़ी हुई है, संरक्षण प्रदान किया जा रहा है। जिससे हमारा हमारी परम्पराओं, संस्कृति से जुड़ाव बना रहे।

परिवर्ती शोध की नवीन सम्भावनाऐं

जैसलमेर के भित्ति अलंकरण परम्परा में 'बील' कला के साथ माँडना तथा रिलीफ के साथ सामंजस्य संस्कृति का तान–बाने को प्रदर्शित करती है। इस सांस्कृतिक परिश्रम का अहम् भाग है तथ इस क्षेत्र की वस्तु स्थिति का निरुपण व निर्धारण करता है।

किसी भी कला में समय के साथ परिवर्तन आवश्यम्भावी हो जाते है। क्योंकि समाज की आवश्यकताऐं तथा भविष्य की आवश्यकताओं में भिन्नता होने लगती है। समय तथा तकनीक के विकास व उन्नति के कारण समाज व देश में वस्तु स्थिति ने परिवर्तन होने लगता है। यह प्रकृति का नियम भी है जो समय के साथ बदलता रहता है। इसी प्रकार से सदियों पुरानी कलाऐं अपने मूल अस्तित्व से वर्तमान समय तक अपनी मूल स्वरुप को छोड़कर नवीन स्वरुप को धारण कर चुकी होती है।

वर्तमान समाज नवीन परम्पराओं का निर्वाह करता है तथा अपनी दैनिक दिनचर्या तथा समयानुसार कलाओं का उपयोग व उपभोग भी करता है। परन्तु यह आवश्यक है कि हम हमारी परम्परागत परम्पराओं के अस्तित्व को बचाकर रखें तथा उन्हें संरक्षण प्रदान करें, साथ ही नवीन पीढ़ी के आचार–विचारों को भी महत्व प्रदान करें। अतः इनके मध्य सामंजस्य होने अतिआवश्यक है।

आज भी जैसलमेर जैसे क्षेत्र भारत में बहुत है जहाँ के लोग अपनी जीवनचर्या का निर्वाह खेती–बाड़ी या अन्य छोटे उद्योगों, कलात्मक वस्तुओं के निर्माण, शिल्प कार्यों के द्वारा पूर्ण करते है तथा उनकी दैनिकचर्या बहुत ही साधारण सी होती है। अतः इस प्रकार की कलाऐं निन्म स्तर के लोगों के उत्थान के लिए अतिआवश्यक होती है। जिससे रोजगार का साधन प्राप्त हो सकें, साथ ही इसके लाभ से वह अपना योगदान इस क्षेत्र की प्रगति व विकास के लिए दे सकें।

समाज के द्वारा भी इस प्रकार की लोक कलाओं को अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता है तथा जनमानस से जुड़ी तथा परम्परा, आस्था से इन लोक कलाओं का जुड़ाव समाज में प्रतिष्ठा व मान–सम्मान में बढ़ोंत्तरी करवाता है। अतः समाज द्वारा इस प्रकार के कार्यों व कलाओं को प्रोत्साहन व सम्मान दिया जाना तथा इससे समाज को प्राप्त लाभ व उपलब्धियों को विश्लेषण भी किया जाना आवश्यक है।

'बील', माँडना, रिलीफ कला भावी समाज को क्या दें सकती है तथा इस समाज पर इस कला के क्या प्रभाव होंगे तथा क्या लाभ होंगे इस पर विश्लेषण व गहन चिंतन करने की आवश्यकता है।

विलुप्त होती इन लोक कलाओं को पाठ्यक्रम की विषय–वस्तुओं के साथ सम्बन्ध बनाते हुए नवीन पीढ़ी को परम्पराओं, संस्कृति का ज्ञान प्रदान कर इसका विकास किया जा सकता है तथा इस पर मनन की आवश्यकता है।

एक विद्यार्थी जब इस प्रकार की कला को ग्रहण करता है, तो उसकी सृजनात्मकता, रचनात्मकता का विकास होता है। उसकी रुचि जागृत होती है तथा वह जीवनपर्यन्त उस कला के प्रति समर्पण का भाव रखता है।

इस प्रकार की कला का प्रदर्शन विद्यालय, महाविद्यालय आदि स्तरों पर अध्यापकों, संगठनों, संस्थाओं द्वारा किया जाना चाहिए, जिससे इस अद्‌भूत कला से नवीन पीढ़ी का सम्बन्ध स्थापित हो सकें। उनमें हस्तशिल्प, वास्तुशिल्प तथा अपने वैयक्तिक गुणों के अनुसार गुण विकसित हो सकें। वह स्वयं आत्मनिर्भरता के गुण को पहचान कर कला के मर्मत्व को समझ सकें। उसके हृदय की भावनाऐं कला के प्रति समर्पित होकर समाज को नवीन दिशा प्रदान कर सकें। अध्यापक इस प्रकार समाज के उन्नति व विकास के साथ लोककलाओं को बहुत ही आसानी से संरक्षण प्रदान कर सकते है। क्योंकि बालक का प्रारम्भिक जीवन कौशल पूर्ण होता है तथा उसे इस प्रकार की कलाओं से सन्तुष्टि की प्राप्ति होती है।

शोधार्थी को इस प्रकार की कलाओं पर अधिक शोध करके उनकी सांस्कृतिक, सामाजिक महत्वों को उजागर करते हुए नवीन पीढ़ी के साथ उनके सम्बन्धों को जोड़ने के प्रयास नवीन पीढ़ी के साथ उनके सम्बन्धों को जोड़ने के प्रयास करने चाहिए जिससे लोक कलाओं का सरंक्षण के साथ–साथ विकास भी किया जाना सम्भव हो सकें।

शोध के दौरान कई गांवों में जाकर शोध के आंकड़ों को प्राप्त किया जाना सम्भव नहीं था। अतः इस प्रकार से अत्यन्त को पूर्णकर शोधकार्य किया जा सकता है। लोककलाओं का प्रयोग आधुनिक शैलियों के साथ सामंजस्य कर नवीनता प्रदान करते हुए भी शोध कार्य किया जा सकता है।

इस प्रकार की कलाओं से लोक मानस व क्षेत्र को आर्थिक लाभ के साथ व्यापारिक लाभ की भी प्राप्ति होती है, परन्तु व्यापारिक लाभ के लिए मनुष्य द्वारा कई बार इस प्रकार

की लोक कलाओं का प्रस्तुतीकरण गलत प्रकार से किया जाता है या वास्तविक कलाओं से उनकी दूरी हो जाती है। जिससे लोक कला का महत्व तथा इनकी औचित्य की भरपाई नहीं हो पाती है। इस प्रकार के कार्यों में मनुष्य मानवीय या संवेदनाओं रहित होकर केवल आर्थिक लाभ की प्राप्ति के लिए जानकारियाँ सूचनाऐं गलत प्रदान करता है। जिससे कला को भविष्य में नुकसान की प्राप्ति होती है।

व्यापार एवं वाणिज्य में इस प्रकार की लोक कलाओं से प्रभावित हो तथा अभिप्रेरित नवीन कलाओं के प्रति मार्ग प्रशस्त होता है तथा अन्य क्षेत्रों, उद्योगों की भी इससे लाभ की प्राप्ति होती है। अतः पर्यटन क्षेत्र के विकास की सम्भावनाऐं और अधिक बढ़ जाती है।

इस प्रकार से शोध में कई प्रकार की नवीन सम्भावनाऐं नयी पीढ़ी तथा भविष्य के लिए आतुर रहती है। केवल उन्हें खोज कर नवीन दिशा प्रदान करने की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष

शोध से सम्बन्धित क्षेत्र का भ्रमण करने तथा गाँव के व्यक्तियों से प्राप्त मौखिक साक्षात्कार व अवलोकन से प्राप्त तथ्यों द्वारा किये गये विभिन्न लोक कला के स्वरुपों का विश्लेषण कर जैसलमेर की भित्तिय अलंकरण परम्परा से सम्बन्धित साक्ष्यों के आधार पर निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुआ है।

यह क्षेत्र कई लोक कलात्मक स्वरूपों को अपने आंचल में संजोये है। यहाँ ग्रामीण क्षेत्र के भित्ति अलंकरण में माँडना, रिलीफ, बील के संयोजन जो संस्कृति व परम्परा का एक हिस्सा होते हुए अद्‌भुत कलात्मक रूपों से उन घरों को सौन्दर्यात्मक स्वरूप प्रदान करते है। यह सदियों से इस संस्कृति का हिस्सा रहें है, जो गृह सज्जा के साथ एक उपयोगी पक्ष के रूप में स्वीकारें गये हैं। बील जहाँ घर के वास्तु का एक हिस्सा है। वहीं दैनिक उपयोगी वस्तुओं के संग्रह का कार्य करते हुए घर की आन्तरिक सज्जा का एक रुप है तथा माँडना घर को सौन्दर्य प्रदान करने के साथ घर में शुभ व मंगल की कामना के साथ अंकित किये जाते है और रिलीफ दैनिक उपयोग की वस्तुओं के साधारण से स्वरूपों को अलंकरणात्मक रूप प्रदान करते है। इस प्रकार ये कच्ची भित्तियों से जुड़े लोक अलंकरण सदियों से इन संस्कृतियों से जुड़े हुए है, जो समाज तथा घरों में अपना विशेष स्थान रखते है।

वर्तमान में विकास के चलते ये लोक अलंकरण अपना मूल स्वरुप खोते जा रहे है। इन पर बाह्य प्रभाव पड़ रहा है तथा ये मूल स्वरुपों को खोते हुए धीरे–धीरे विलुप्तता की कगार पर है। आधुनिक सुख–सुविधा के उपभोग हेतु अब ग्रामीण कच्चे घरों का स्थान पक्के मकानों ने ले लिया है जिससे इन अलंकरणों का आधार तल ही समाप्त हो गया है। जो इनके लुप्त होने का प्रमुख कारण है। आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु रोजगार की भाग दौड़ में आयी व्यस्तता तथा आधुनिक सोच लोगों को इन सांस्कृतिक स्वरूपों से दूर ले जाती जा रही है।

वर्तमान में सरकार व कई संस्थानों, संस्थाओं द्वारा इन कलाओं को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। शिक्षण संस्थानों में इन कलाओं से सम्बन्धित प्रतियोगिताओं इन का प्रदर्शन कर इन कलाओं के प्रति आने वाली पीढ़ी को सजग किया जा रहा है। पर्यटन व्यवसाय में भी हॉटल संस्थानों आदि में ग्रामीण कलात्मक अलंकरणों का संयोजन कर पर्यटकों का आकर्षण इस कला के प्रति उत्पन्न किया जा रहा है। इससे इन कलाओं के मूल स्वरूप

का बदला हुआ रूप यहाँ प्रदर्शित होते हुए भी यह इन कलाओं को संग्रहित करता है। इस प्रकार कला के ये अद्‌भुत रूप अब लुप्त होने के कगार पर है तथा शोध द्वारा उनके मूल स्वरुपों का संग्रहण चित्रों व लेखन के माध्यम से किया गया, जो आवश्यक था। क्योंकि ये स्वरूप जब समाज में प्रदर्शित होगें तो यह एक आधुनिक समाज के लिए एक प्रेरणा स्रोत के रूप में प्रयोग किये जा सकते है तथा इनके सृजनकर्त्ताओं को भी प्रोत्साहन प्राप्त होगा।

हम चाहकर भी इन कलात्मक रूपों का परिवर्तित या लुप्त होने से नहीं रोक सकते। परन्तु नये प्रयोगों के साथ इन्हें जिन्दा रखा जा सकता है। उपरोक्त शोध में इन कलात्मक रूपों के मूल रूपों का संग्रहण व परिचय का उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया गया । जो कला के इन स्वरुपों के लिए आवश्यक है।

सारांश

मरू प्रदेश का जैसलमेर अपने रेतीलें टीलों 'बरखान' के लिए के लिए जाना जाता है, जो वायु की दिशा व गति के अनुसार अपनी स्थिति परिवर्तित करते रहते है। यह क्षेत्र आज भी अपनी विरासत, संस्कृति, व परम्पराओं को संजोयें है, तथा पारम्परिक संस्कृति को पीढ़ी–दर–पीढ़ी समर्पित करते आ रहा है।

यह क्षेत्र यहाँ स्थित 'सोनार के किले' व जैने मन्दिरों के कलात्मक स्वरूपों के लिए जाना जाता है। जो कला की बेजोड़ प्रतिमाओं व वास्तु के अद्‌भुत संयोजन को प्रकट करने वाले है। पीले पत्थरों से बने इस शहर को 'स्वर्ण नगरी' के नाम से भी जाना जाता है। जितना सौन्दर्य यहाँ के महल, किलों और मन्दिरों का है, उतनी ही सौन्दर्य यहाँ व्याप्त संस्कृति व लोककलाओं का भी है। यह क्षेत्र कई लौकिक सौन्दर्यपूर्ण कलाओं से ओत–प्रोत है, जो इस क्षेत्र के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बना हुआ है।

रेतीली मरू भूमि में परिवहन का मुख्य साधन 'ऊँट' है, जो अपने अलंकरणों व वेशभूषा के साथ इस क्षेत्र का प्रमुख आकर्षण बना हुआ है। इस क्षेत्र में कई हस्त लोक कलाऐं व्याप्त है तथा कला के कई अन्य लोक स्वरूप भी इस क्षेत्र में देखे जा सकते है। लोक गायन, लोक नृत्य व हस्तशिल्प कला का सौन्दर्य अद्‌भुत रसानुभव कराने वाला है।

यह शोध यहाँ के ग्रामीण लोक कलात्मक स्वरूपों में व्याप्त सौन्दर्य व कलात्मकपक्ष का परिचय कराने का एक प्रयास है। इन कलाओं का विस्तृत विवरण व परिचय यहाँ के ग्रामीण क्षेत्र में जाकर अवलोकन व मौखिक साक्षात्कार के माध्यम से सम्भव हुआ। ग्रामीण क्षेत्र के ये लोग कठिन परिस्थितियों में भी सरल–सौम्य व्यवहार के धनी है तथा हमारे द्वारा पूछे गये सभी प्रश्नों पर इन लोगों द्वारा सही उत्तर प्रकट किये गये। इस तरह मौखिक साक्षात्कार व अवलोकन से प्राप्त चित्र इस शोध का आधार रहे।

मीलों तक फैले रेतीले मैदान की विकट परिस्थितियों में भी यहाँ के ग्रामीण लोग अपना जीवन यापन सांस्कृतिक व पारम्परिक कलात्मक स्वरुपों के साथ कर रहे है। इस क्षेत्र में वनस्पति का अभाव, जल का अभाव है तथा उपजाऊ भूमि न होने से इस क्षेत्र में रोजगार के लिए लोक कलाओं व पशुपालन को मुख्य आधार के रुप में अपना गया है। इस क्षेत्र में गर्मीयों में तापमान 49^0C हो जाता है। वहीं सर्दी की रात्री में तापमान 1^0C

तक पहुँच जाता हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र के लोगों को वातावरणीय व भौगोलिक कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद भी ये लोग अपनी लोक कलाओं में अद्‌भुत सौन्दर्यपूर्ण कलात्मक रुपों का सृजन करते है।

यहाँ हस्तशिल्प कलाओं कई रुप दृष्टिगत होते है जिनका परिचय शोध में दिया गया है। ऊँट सज्जा, पेच वर्क से बने वस्त्र व अन्य सामग्रियाँ चमड़े से बनी जूतियाँ, बैग, हेट आदि तथा कटपूतली, पोकरण के टेराकोटा अलंकरण आदि हस्तशिल्प कला के उदाहरण यहाँ प्राप्त होते है। कला के यह अद्‌भुत अलंकरण ग्रामीण संस्कृति में व्याप्त पारम्परिक कला का स्वरुप प्रस्तुत करते है। सरल, सौम्य रुपों को प्रकट करने वाले यह स्वरुप कलात्मक सौन्दर्य के कारण अद्‌भुत है।

ग्रामीण अंचल में बसे ये लोग अपनी पारम्परिक व सांस्कृतिक कलाओं को सदियों संजोये हुए हैं। इन कलात्मक अलंकरणों को सरल ज्यामितीय स्वरुपों के माध्यम से अद्‌भुत आश्चर्यचकित संयोजन के साथ प्रकट किया जाता है। जिन्हें देखकर कला का पारखी भी इन ग्रामीण अलंकरणों के साधारण स्वरुपों में व्याप्त आश्चर्यचकित कर देने वाले कलात्मक आयामों का देख चकाचौंध हो जाते है।

साधारण, सरल, सौम्य जीवन जीने वाले ये लोग अपने कच्चे घरों को छोटे–छोटे कई अलंकरणात्मक स्वरूपों से सौन्दर्य प्रदान करते है। ये स्वरूप आधुनिक कलात्मक रूपों से प्रतीत होते है। जो गाँवों में रहने वाले इन लोगों की कलात्मक सूझ को व्यक्त करते है।

जैसलमेर क्षेत्र की लोक कला में भित्ति अलंकरण परम्परा के कलात्मक आयामों के अध्ययन के अन्तर्गत माँडना, रिलीफ व बील चित्रण इस शोध के मुख्य केन्द्र बिन्दु रहे। ये कलाऐं इस क्षेत्र के लोगों की संस्कृति व गृह सज्जा का एक हिस्सा है। जो इनके घरों को कलात्मकरुप देते हुए मंगल की कामना के रुप में उपस्थित रहते है।

माँडना जो सम्पूर्ण राजस्थान की ग्रामीण संस्कृति का हिस्सा है, इसके स्वरुपों में जाति, क्षेत्र व अवसर के अनुसार परिवर्तन देखा जा सकता है। इस प्रकार सम्पूर्ण राजस्थान में माँडना के भिन्न–भिन्न रुप देखे जा सकते है। यह भिन्नता सांस्कृतिक तथा भौगोलिक या वातावरणीय प्रभावों के फलस्वरुप देखी जा सकती है । जैसे हाड़ौती क्षेत्र वानस्पतिक सम्पन्नता होने के कारण यहाँ के माँडना स्वरुपों में फूल–पत्तियों, बेल–बूटों का समावेश किया जाता है। वहीं ढूँढार क्षेत्र में पशु–पक्षियों का अंकन अधिक देखा जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण राजस्थान में माँडना के रंगाकन आकारों व स्वरुपों में भिन्नता प्राप्त होती

है। परन्तु माँडना के स्वरूपों को सम्पूर्ण राजस्थान में गेरू/पीली मिट्टी तथा खडिया के माध्यम से ही स्वरूप प्रदान किया जाता है। माँडना को रूई के फोहे, लकड़ी से कूट कर बने ब्रश या कूंची तथा कहीं–कहीं बालों के गुच्छों द्वारा माँडा या बनाया जाता है। इस प्रकार प्रकृति की गोद में बने यह कच्चे घर प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं से बनाये व सजाये जाते है। इनकी वास्तुकला व वातावरणीय दृश्य अद्भुत, सौन्दर्य स्वरूपों को प्रकट करने वाले होते हैं।

जैसलमेर के माँडना स्वरुपों पर सामाजिक, सांस्कृतिक व भौगोलिक प्रभाव स्पष्ट देखे जा सकते है। यहाँ बनाये जाने वाले माँडनों में फूल –पत्तियाँ व पशु–पक्षियों का अंकन कहीं दृष्टिगत नहीं होता है तथा रंगाकंन भी सपाट किया जाता है। जिनमें चीर–भरण व लयात्मक रेखाओं का अंकन भी नहीं किया जाता है। जो राजस्थान के अन्य क्षेत्रीय माँडना में देखा जाता है। जैसलमेर के माँडना में आयत, कोण व पट्टीनुमा आकृतियों का समावेश किया जाता है। जो घर के बाहरी व आन्तरिक भित्तियों को अद्भुत स्वरूप प्रदान करते हैं। भित्तियों पर सफेद मिट्टी तथा पीली मिट्टी/गेरू का प्रयोग देखा जा सकता है। माँडना स्वरूप यहाँ द्वार के दोनों ओर सीढ़ीनुमा आकृतियों के संयोजन से बनाये जाते है। जो कभी सफेद पर पीली/लाल से तो कभी, पीले/लाल पर सफेद से बनाये जाते है। कभी यह दो तो कभी तीन रंगों के संयोजन से बनाये जाते है। ये घर की आन्तरिक व बाह्य दीवारों को अलंकरणात्मक स्वरूप प्रदान करते है। माँडना के दो स्वरूप यहाँ देख जाते है। पहला द्वार पर सीढ़ीनुमा उठे हुए कोनों को प्रदर्शित करता बनाया जाता है तथा दूसरा दीवार के मध्य वर्गाकार व कोणीय आकृतियों से निर्मित मध्य में छोड़े गये अन्तराल को रूप प्रदान करता हुआ बनाया जाता है। इस प्रकार यह माँडना स्वरूप सृजित व रिक्त छोड़े गये दोनों आधारों के आकारों के रूप में प्रकट होता है।

ये माँडना स्वरूप शुभ, मंगल की कामना व आस्था के रूप में इन कच्ची भित्तियों पर कलात्मकता के अदभुत् संयोजन को प्रकट करते हुए बनाये जाते है। इस क्षेत्र में बनाये जाने वाले भित्ति अलंकरण मुख्यतः ज्यामितीय आकारों से निर्मित होते है। वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य को प्रकट करने वाले यह भित्ति अलंकरण आधुनिक कला जगत के लिए प्रेरणा स्रोत हो सकते है तथा कला के अद्भुत संयोजन को प्रस्तुत करने वाले हैं।

इस क्षेत्र के घरों में दैनिक उपयोग की सामग्री तथा भित्तियों को अलंकरणात्मक स्वरूप देने के लिए **रिलीफ चित्रण** भी किया जाता है। जो कच्ची भित्तियों पर उभरी लहरदार रेखाओं या ज्यामितीय कोणीय रेखाओं के समायोजन से निर्मित की जाती है। यह

रिलीफ चित्रण मिट्टी की भित्ति पर मिट्टी द्वार उभार दी गई रेखाओं से निर्मित किये जाते हैं तथा कहीं–कहीं यह डूबे हुए रिलीफ के रूप में प्राप्त हुए है। जो किसी तीखी लकड़ी या वस्तु से गोदकर बनाये गये है। परन्तु अधिकांशतः इस क्षेत्र में उभरे हुए रिलीफ ही प्राप्त होते है। जिनका अंकन मुख्यतः मिट्टी से बनी कोठियों तथा तिजौरियों पर ज्यामितीय कोणीय रेखीय स्वरुप में किया जाता है। इस प्रकार यह रिलीफ दैनिक उपयोग की साधारण वस्तुओं को अद्भुत सौन्दर्य प्रदान करते है। जैसलमेर में लोक कला के अलावा भी रिलीफ के रुप दृश्यमान होते है। जिनकों महलों मन्दिरों व किलों पर हुए नक्काशी के रूप में देखा जा सकता है। जैसलमेर की लोक कला में रिलीफ साधारणतः ज्यामितीय आकृतियों के रूप में उभरी हुई रेखाओं से किया गया है।

ग्रामीण परिवेश के इस क्षेत्र के घरों में भित्ति अलंकरण के लिए एक ओर कलात्मक स्वरूप का निर्माण किया जाता है। जिसे **'बील'** नाम से सम्बोधित किया गया है। यह इस क्षेत्र विशेष में मुख्यतः देखा जा सकता है। यह कलात्मक रूप आधुनिक शोकेश जैसे भी प्रयोग में लिया जाता है। जो घरों की दैनिक उपयोग की वस्तुओं तथा सजावटी समाग्री के संग्रहण का कार्य करता है।

ग्रामीण घरों में बिजली के अभाव में अंधेरे कक्षों में आन्तरिक भित्ति पर बने यह अलंकरण अपनी श्वेत आभा के कारण अद्भुत रूप में दिप्तीमान होते हैं । यह ज्यामितीय आकारों से बने खाँचों के रूप में घर के मुख्य कक्ष के द्वार के सामने वाली दीवार पर बनाये जाते है। जिससे प्रवेश करने वाले व्यक्ति की प्रथम दृष्टि इन पर पड़े तथा इसके सौन्दर्यपूर्ण स्वरूप से आने वाला वह रसाभुत हो जाये।

बील एक अद्भुत ज्यामितीय कलात्मक स्वरूप है, जो खाँचों के रूप में बड़े आयत के मध्य संयोजित किये जाते है। इन ज्यामितीय खाँचों या आल्यों को और अधिक अलंकरणात्मक स्वरूप देने के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार की जालियों, कंगूरों तथा मिट्टी के बने मोतियों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार यह कला के अद्भुत स्वरूपों को प्रकट करता हुआ एक उपयोगी वास्तु स्वरूप है जिसके मध्य में ईश्वर के स्थान के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

दीवार पर उभार कर बनाया गया यह अलंकरणात्मक स्वरूप बाँस की खपच्चियों को कच्ची दीवार पर अलमारियों का रूप देते हुए बनाया जाता है। जिसे मिट्टी से जोड़ा जाता है तथा मिट्टी व खपच्चियों से ही इन पर ज्यामितीय आकारों के खाँचें बनाये जाते हैं और इन खाँचों को और अधिक सौन्दर्य प्रदान करने के लिए मिट्टी व खपच्चियों से ही

जाँलियों व मिट्टी के मोतीयों आदि का निर्माण किया जाता है। पूर्ण स्वरूप प्राप्त होने पर सेडी एवं कलई मिट्टी को पकाकर इन पर रंगांकन का कार्य किया जाता है। कलई मिट्टी रंगांकन के पश्चात् स्वतः एक चमक लिये हुए प्रकट होती हैं। अधिकांशतः बील के ऊपर कलई मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। जिसमें कहीं–कहीं अभ्रक को मिलाकर और अधिक चमकीला बना दिया जाता है। बील को रिलीफ, काँच के टुकडों तथा खराब बल्बों आदि द्वारा सजाया जाता है।

ये कलात्मक तथा उभरे हुए स्वरूप छोड़े गये आकारों से भी नये रूपों को निर्मित करते है। जिससे छोड़े गये व सृजित दोनों भाग इस कलात्मक स्वरूप के सम्पूर्ण दर्शन को अद्भुत अविस्मरणीय बनाते है तथा इस कलाकृति को वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य से परिपूर्ण करते है। प्रत्येक बील अपने अलग स्वरूप में प्रकट होता है, जो सृजनकर्त्ता की रूचि के अनुसार रूपायित किये जाने के कारण होता है। यह अलंकरण वास्तु का ही एक अभिन्न अंग है, जो भित्ति अलंकरण के साथ उपयोगी होने के कारण सदियों से इस संस्कृति का एक हिस्सा रहा है।

शोध के सम्पूर्ण अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ग्रामीण परिवेश में यह लोक कलात्मक स्वरूप जो ग्रामीण संस्कृति का हिस्सा होते हुए भी अद्भुत कलात्मक रूपों का सृजन करते है। जो आधुनिक कला जगत के लिए भी एक आकर्षक कौतूहल का विषय है। अद्भुत ज्यामितीय आकारों से परिपूर्ण ये कलात्मक रूप घरों में शुभ व मांगलिक प्रतीकों के रूप में अंकित किये जाते है, जो इन कच्चे घरों को अलंकरणात्मक रूप प्रदान करते हुए दृष्टिगत होते हैं।

जैसलमेर के इस ग्रामीण परिवेश में जहाँ दूर–दूर तक रेत का विस्तार दृष्टिगत होता है। वहाँ रेतीली भूमि में ही ये कच्चे घर गेरू व खड़िया के रंगों से अद्भुत सौन्दर्यात्मक रूपों को प्रकट करते है, जो दर्शक की दृष्टि को चकाचौंध कर देने वाले होते है तथा घर की आंतरिक सज्जा के रूप में भी यह भाव–विभोर करने वाले कलात्मक रूप दर्शक का मनमोह लेते है।

इन कलाओं में जहाँ ज्यामितीय आकारों का मुख्य स्थान है। अद्भुत संतुलन व संयोजन से निर्मित यह अलंकरण ग्रामीण संस्कृति व परम्पराओं की कलात्मक समझ को प्रकट करता है। ये लोग कला के नियमों व परिभाषाओं से अपरिचित होकर भी अप्रतीम अद्भुत कलाकृतियों का संतुलित स्वरूप प्रस्तुत करते है, जो एक आश्चर्य की बात है।

जैसलमेर की कला व संस्कृति पर निकटवर्ती क्षेत्रों की संस्कृति का प्रभाव देखा जा सकता है। यहाँ की बोली में गुजराती, मारवाड़ी, सिन्धी, उर्दू शब्दों का समावेश है। इसी प्रकार संस्कृति में भी गुजराती, मारवाड़ी व मुस्लिम प्रभाव परिलक्षित होता है। इस प्रकार इसी संस्कृति में बने कलात्मक स्वरूपों पर भी समीपस्त क्षेत्रों का प्रभाव देखा जा सकता है। जैसे – इस क्षेत्र के माँडना रूपों में पशु–पक्षियों व फूल पत्तियों का अंकन नहीं किया जाता है। जो मुस्लिम प्रभाव के कारण माना जा सकता है। क्योंकि मुस्लिम लोग सजीवों का अंकन अपने घरों में नहीं करते। उसी प्रकार इस क्षेत्र में भी सजीवों का अंकन माँडना में नहीं देखा जाता है। बील जैसलमेर के समीपस्त क्षेत्र बाड़मेर में भी बनाये जाते है। इसी प्रकार वस्त्र सज्जा कशीदा आदि पर सिन्धी व गुजराती प्रभाव देखा जा सकता है। इस प्रकार जैसलमेर की संस्कृति व कलात्मक रूपों पर समीपस्त क्षेत्रों का प्रभाव आसानी से दृष्टिगत होता है।

जैसलमेर में बनी ये लोक कलात्मक रूप वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य से ओत–प्रोत है। ये कलात्मक रुप शुद्ध ज्यामितीय आकारों से सृजित किये जाते है, जो सरल सौम्य होते हुए भी आश्चर्यचकित करने वाले रूपों में प्रकट होते है तथा मन को आनन्द की अनुभूति प्रदान करते है, जो सृजित व रिक्त छोड़े गये आधार के अद्‌भुत संयोजन के रूप में प्रकट करते हुए दर्शक को अदम्य, अद्‌भुत आनन्द से रसाभुत कर देते है।

इस प्रकार उपरोक्त शोध से इन कलात्मक स्वरुपों के कलात्मक पक्षों का परिचय प्राप्त होता है तथा लुप्त होती इस कला को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है। लोगों को इससे परिचित करवाकर इसके मूल स्वरुपों को संजोकर रखा जा सकता है। इस क्षेत्र में सरकार व शैक्षणिक संस्थान भी कई सेमीनार व प्रतियोगिताओं के माध्यम से इसका प्रचार करने में कार्यरत है। जैसलमेर शहर के एक स्कूल में बच्चों को बील की निर्माण प्रक्रिया को प्रत्यक्ष दिखाया गया है। जिससे आने वाली इस पीढ़ी को इन कलात्मक स्वरूपों से रूबरू होने का एक अवसर प्राप्त हुआ तथा सृजन को प्रोत्साहन भी मिला। इस प्रकार कई माध्यमों द्वारा इन लोक अलंकरणों का प्रचार–प्रसार कर उन्हें संग्रहित किया जा सकता है। जिसका प्रभाव इन कलात्मक स्वरुपों के मूल रूपों में परिवर्तन के रूप में भी होगा। परन्तु इन रूपों को संरक्षण भी प्राप्त होगा।

लोक कला के इन सौन्दर्यपूर्ण संयोजनों का प्रयोग अब टेक्सटाइल, वास्तु सज्जा व कई अन्य क्षेत्रों में किया जाने लगा है। इस प्रकार इनके मूल स्वरुप में परिवर्तन होते हुए

भी यह आधुनिक कला जगत के लिए एक आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है तथा यह उन्हें नये रूपों के सृजन के लिए प्रेरित भी करता है।

शोध में इस क्षेत्र के कई कलात्मक स्वरूपों का परिचय दिया गया। परन्तु फिर भी कई पहलु जैसे– सांस्कृतिक, भौगोलिक तथा वास्तुकला से सम्बन्धित है जो अद्‌भुत व अछूते है। यह शोध उन क्षेत्रों पर नवीन शोधों के लिए उपयोगी हो सकता है तथा सांस्कृतिक कलाओं का विस्तृत रूप प्रकट करते हुए यह शोध यहाँ की संस्कृति का परिचय भी देता है। जो आगन्तुक शोधों के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

शोध पर्यवेक्षक
डॉ. लोकेश जैन
चित्रकला विभाग

शोधार्थी
इंदूबाला
पंजीयन संख्या RS/985/10

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

हिन्दी सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अमन, अवधेश	:	मिथिला की लोक चित्रकला : सफलताएँ एवं असफलताएँ, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली 1992
आर्य, आर.पी.	:	राजस्थान टूरिस्ट रोड एटलस, इण्डियन मैप सर्विस, 2011
कोठारी, कंचन	:	दादी मांडणा, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर, 2013
कोठारी, गुलाब	:	राजस्थान की ग्रामीण कलाएँ एवं कलाकार, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
कृष्ण, रायदास	:	भारतीय चित्रकला, लीडर प्रेस, इलाहबाद।
खान, एस.आर	:	हाड़ौती अंचल एवं धर्म हाड़ौती के बोलते शिल्पलेख, हाड़ौती शोध प्रतिष्ठान केसर
गुप्ता, मोहनलाल	:	(2009) कोटा संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थान ग्रन्थागार, जोधपुर
गैरोला, वाचस्पति	:	'भारतीय संस्कृति व कला, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ संस्थान, लखनऊ
गोस्वामी, प्रेमचन्द	:	मनोहर माँडने, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
गोस्वामी, प्रेमचन्द (2010)	:	राजस्थान – संस्कृति, कला एवं साहित्य, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर

गोस्वामी, प्रेमचन्द	:	भारतीय कला के विविध स्वरुप, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
जैन, डॉ. भगवती	:	हाड़ौती का पुरातत्व, शोध संस्थान, प्रतिष्ठान, कोटा, 1989
प्रताप, रीता	:	भारतीय चित्रकला एंव मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी अकादमी, जयपुर, 2017
फतहसिंह	:	सिन्धुधाटी की लिपी में ब्राह्मणों और उपनिषदों के प्रतीक, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, 2010
भाटी, पुष्पा	:	राजस्थान साहित्य संस्थान, बीकानेर, 2006
भानावत, कहानी	:	साँझी कला, 2007
भानावत, महेन्द्र	:	लोककला प्रयोग और प्रस्तुति, भारतीय लोककला मंडल, उदयपुर, 1678
भानावत, महेन्द्र	:	राजस्थान की संझया, भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर, 1977
भवसार, वीरसिंह	:	'आदिवासी', नई दिल्ली
माथुर, कमलेश	:	पारम्परिक कला एंव लोक संस्कृति, साहित्यागार, जयपुर, 2010
व्यास, मांगीलाल मयंक	:	जैसलमेर राज्य का इतिहास

शर्मा, डॉ. देवदत्त	:	राजस्थान का माटी शिल्प, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
शर्मा, भवानीशंकर	:	लोक कला में माँडने
शुक्ल, प्रयाग	:	'कला–समय–समाज', ललित कला अकादमी, नई दिल्ली
शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश	:	रिसर्च मेथोलॉजी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2010
शर्मा, राधारानी	:	'हाड़ौती की लोककला में माँडनें, नवजीवन पं. नई दिल्ली, 2007
साखलकर, र.वि.	:	कलाकोश, राजस्थान हिन्दी अकादमी, जयपुर, 1906
सिंह, रणवीर	:	जैसलमेर वास्तु शिल्प तालाब और पर्यटन

पत्र पत्रिकाऐं

अल्पना	:	नई दिल्ली (पाक्षिक)
आकृति	:	राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर (त्रैमासिक)
		वर्ष : 6, अंक : 11, नवम्बर, 1983
		वर्ष : 11, अंक : 5, मई, 1988
		वर्ष : 13, अंक : 2, फरवरी, 1990
आकृति	:	अक्टूबर – दिसम्बर, 1995
आकृति	:	जुलाई–सितम्बर, 1997
कला किरण	:	जयपुर (त्रैमासिक)
कलादीर्घा	:	उत्कर्ष प्रतिष्ठान, लखनऊ, अक्टूबर, 2000 (षट्मासिक)
दैनिक नवज्योति	:	जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर, कोटा (दैनिक)
दैनिक भास्कर	:	जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर (दैनिक)
मूमल	:	जयपुर (पाक्षिक)
राजस्थान पत्रिका	:	जैसलमेर, जोधपुर (दैनिक)
सुजस	:	जयपुर (त्रैमासिक)
हिन्दुस्तान टाईम्स	:	टाईम्स ऑफ इण्डिया (दैनिक)

BIBLIOGRAPHY

Akenzi, D.A.	:	'The Migration of Symbol and Their Relation to Beliefs and Crafts Landon, 1920
Arrier, Alwin	:	Tribal Art of Middle India : Colactta. 1981 Colourful Rajasthan for all seasons, Mazgine, Department of Tourism, Government of Rajasthan.
Bhasham, A.L. (F.D.)	:	'A Cultural History of India : Oxford University, Press Oxford.
Chaitanya, Krishna	:	Rajasthan Tradition : Abinav Publication, New Delhi, 1992
Coomarswami, A.K.	:	The Transformation of Nature in Art , Dover Publication. 'Early Indian Iconography, Shri Laxmi Eastern Art. Vol. I. 1929
Culture, unveiled	:	Explore the heart of Rural Rajasthan, Department of Tourism, Government of Rajasthan.
Hooja, Rima	:	A History of Rajasthan, Roopa Co.
Jain K.C.	:	Aneient Cities and Towns of Rajasthan; Delhi, 1972
Kumar, Dr.	:	Research methodology, Laxmi Narayan agarwal Education, Agar, 2007

Leena Madan	:	'Nurturing Walls : Animal Arts by Meena Women', Sahara Books, Chennai, 2009
Pal, Bhisham H.	:	Handicraft of Rajasthan, Ministry of information and Broadcasting, Government of India.
Raj, Anand Mulk	:	The Hindu View of Art, A.P.H. Bombay, 1957
Saksena, Jogendra,	:	Art of Rajasthan- Henna and Floor Decorations, 1979, Swadesh Prasad singhal for Sundeep Prakashan, Delhi.
Sharma, G.L.	:	Social and Political awakening Among the] tribals of Rajasthan.
Singh, Chitralekha	:	'Drawing of Rajasthan, Aryan Book International, New Delhi, 1993

WEBSITE

1. Mandana_painting Ancient art and craft of Rajasthan, http://www.rajasthanonline.in/about/profile/ancient-art-and-craft-of-rajasthan.html.
2. Mapping community in Rajasthan and Calcutta, http://www.gutenberg-e.org/haa01/print/haa03.html
3. Utsavpedia, http://en.wikipedia.org/ wiki/

[1] District Administration website, Jaisalmer

[1] जसंविदर सहगल, http#//www.dw.com

[1] राजस्थान टूरिस्ट रोड़ एटलस एवं राज्य दूरी मार्ग दर्शिका, इण्डियन मेप सर्विस, जोधपुर पृ.सं.33

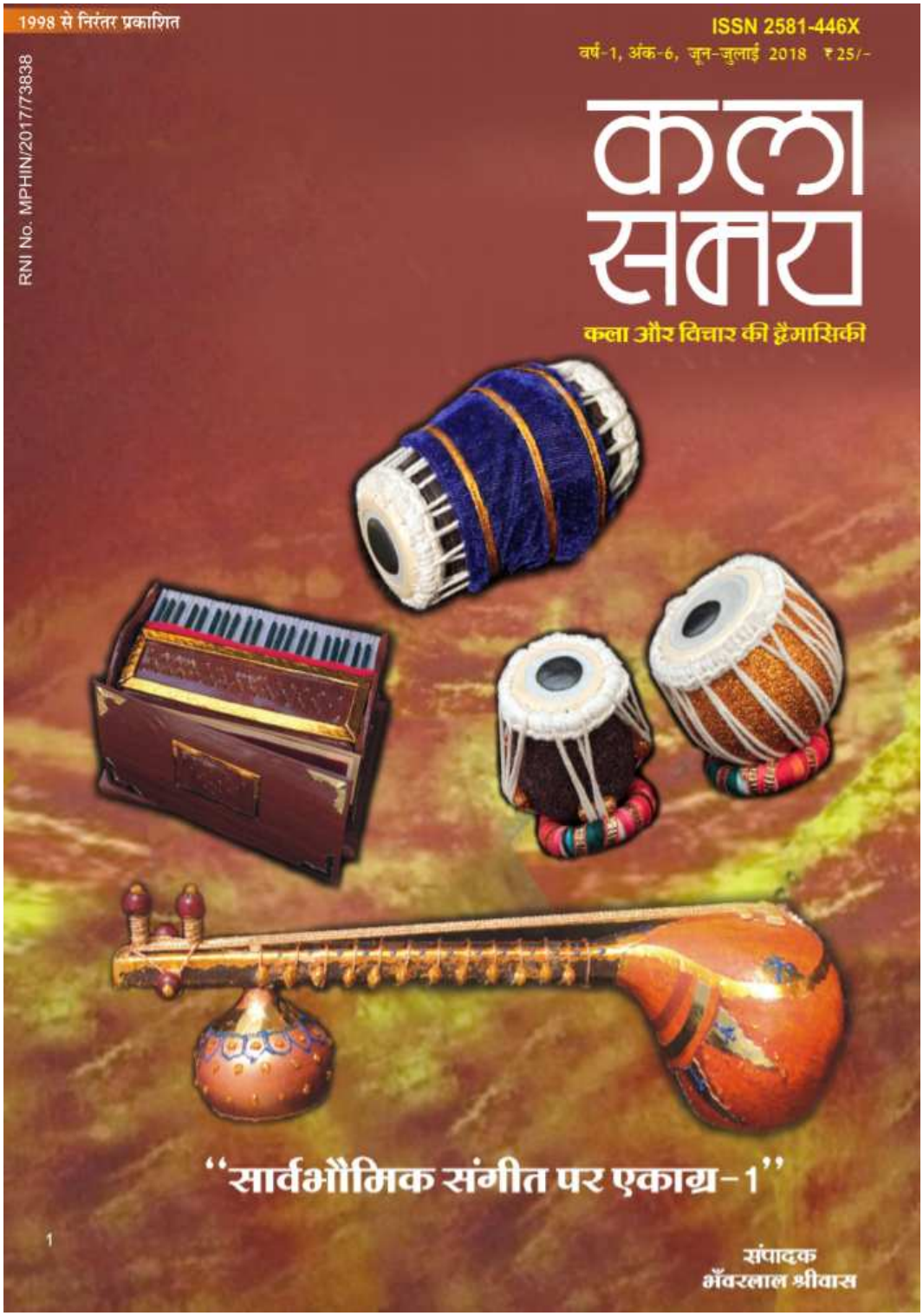
1998 से निरंतर प्रकाशित
RNI No. MPHIN/2017/73838
ISSN 2581-446X
वर्ष-1, अंक-6, जून-जुलाई 2018 ₹ 25/-
कला समय
कला और विचार की द्वैमासिकी
"सार्वभौमिक संगीत पर एकाग्र-1"
1
संपादक
भँवरलाल श्रीवास

• **गुरुजी, वर्तमान में जो स्थिति चल रही है, उसमें संगीत का भविष्य आप किस तरह से देखते हैं.**

- संगीत को कोई नुकसान नहीं है। संगीत तो मनुष्य के जीवन का संगी है। जीवन के साथ संगीत है। संगीत को कोई बाधा नहीं है। यही हो सकता है कि संगीत थोड़ा परिवर्तित हो सकता है, जो गुरु-शिष्य परम्परा थी वो कम हो सकती है, शास्त्रीय संगीत में भी कुछ कम हो सकता है संगीत। फ्यूजन संगीत हो रहा है। फिल्मी संगीत है, लोक संगीत है, सब संगीत है और कहीं न कहीं संगीत चलता रहेगा। संगीत के लिए कोई नुकसान नहीं है। संगीत कहीं रुकेगा नहीं, वो चलता रहेगा। ■

जैसलमेर के भित्ति अलंकरण

- इंदुबाला

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में भित्ति अलंकरण की प्रथा शुभ संकेतों के रूप मे यहाँ की संस्कृति का अटूट हिस्सा रहा है, जिनको कलात्मक रूप यहाँ की महिलाओं द्वारा, सदियों से दिया जा रहा है।

राजस्थान के सम्पूर्ण क्षेत्र में भित्ति अलंकरण के रूप में माँडना को बनाया जाता है, जो क्षेत्र विशेष व जाति विशेष के अनुसार भिन्नता लिए हुए होते है। भिन्नता होते हुए भी इनके रंग संयोजन व निर्माण सामग्री एक समान होती है। तथा इन रूपों में अधिकांशत: ज्यामितीय रूपों को संजोया जाता है।

राजस्थान का पश्चिमी क्षेत्र में बसा जैसलमेर जिला पूर्णत: रेतिला क्षेत्र है। यहाँ की विकट परिस्थितियों में भी यहां के लोग अपनी सांस्कृतिक लोककला को अपने जीवन का हिस्सा बनाए हुए है। यहाँ प्राप्त भित्ति अलंकरण में बील, माँडना व रिलीफ आदि को दृष्टिगत किया जा सकता है।

बील खाँचो के रूप में बना आल्यो का एक समूह है, जो आधुनिक समाज में प्रयोग शोकेस जैसे ही प्रयोग किया जाता है। इसे बाँस की खपच्चीयों के टुकड़ों व मिट्टी से बने मोतियों, जालियों व कंगूरों आदि से सजाया जाता है। कहीं-कहीं ऊपरी हिस्सों पर खराब बल्ब तथा काँच के टुकड़ों व चुड़ियों के टुकड़ों से और अधिक सजाया जाता है।

सम्पूर्ण बील निर्मित होने के पश्चात, उस पर सफेद मिट्टी/खड़ियां से रंगांकन किया जाता है। बील की आंतरिक भित्ति पर गेरू व पीली मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। बील घर में प्रयोग आने वाली सामग्री, सजावटी सामग्री तथा पूजा के लिए स्थान होता हैं। बील मुख्य कक्ष में ही बनाए जाते है जो एक अलंकरणात्मक रूप होते हुए उपयोग की एक प्रमुख वस्तु है।

जैसलमेर में बनाए जाने वाले माँडने साधारण रूपों को अपने में संजोये है राजस्थान के अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा उस क्षेत्र के माँडने अलंकरण रहित होते हुए भी अपना विशिष्ट स्थान रखते है। ये दरवाजों के दोनों ओर की दीवारों पर सीढ़िनुमा जिनके कोने कुछ ऊपर उठे हुए होते है। ये कोने पाँच या तीन के क्रम में बनाए जाते है। कहीं-कहीं इन कोने के ऊपरी भाग पर कुछ पत्तियाँ बना दी जाती है और यह सफेद रंग से बनाये जाते है तथा सम्पूर्ण भित्ति गेरूआँ या पीली मिट्टी से रंगी जाती है। घर की अन्य दीवारों के निचली भित्ति के हिस्सों पर सफेद खड़ियाँ से चौड़ी पट्टी बना दी जाती है। इस तरह के माँडने इस क्षेत्र में ही प्रमुख रूप से देखे जाते है जो साधारण होते हुए भी अद्‌भुत प्रतीत होते है।

ग्रामीण क्षेत्रों में दीवारों व कोठियों की भित्तियों को सजाने के लिए कई जगह रिलिफ आकृतियों का प्रयोग हुआ हैं। जिनमें कई स्थानों पर कच्ची दीवारों पर मिट्टी से उभारकर रेखाओं के विभिन्न रूपों को दोहराते हुए बना कर अलंकरणात्मक रूप दिया गया है। कहीं ज्यामितिक रेखीय स्वरूपों से फूल पत्तियों को बना कर सज्जा की गई है। दीवारों पर काँच के छोटे टुकड़ों को फूल आदि की आकृति बनाते हुए लगा कर तो कभी रंगीन काँच की चूड़ियों के टुकड़ों को मिट्टी में चिपकाकर आकृतियाँ बनाई जाती है। ये सब साधारण से इन घरों को अद्‌भुत स्वरूप प्रदान करते है। लोक कला में कच्चे घरों में बनी भित्ति अलंकरण की ये कलाएँ अद्‌भुत व अनोखी हैं, जो बिना कला की परिभाषा समझे, ग्रामीण अंचल की महिलाओं द्वारा संतुलित आकारों के संयोजन से बनाई गई है।

शोध अध्येता- इंदुबाला
कोटा चित्रकला, राजकीय महाविद्यालय (बूंदी)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

कोठारी, गुलाब : **'राजस्थान की ग्रामीण कलाएँ एवं कलाकार'** राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर,/ कृष्ण, रायदास : **'भारतीय चित्रकला'**, लीडर प्रेस, इलाहाबाद,/ खान, एस.आर. : **'हाड़ौती अंचल एवं धर्म, हाड़ौती के बोलते शिल्पलेख'**, हाड़ौती शोध प्रतिष्ठान केसर भवन,/ गुप्त, मोहनलाल : **'कोटा संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन'**, राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर 2009,/ गैरोला, वाचस्पति : **'भारतीय संस्कृति व कला,'** उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ संस्थान, लखनऊ,/ गोस्वामी, प्रेमचन्द : **'मनोहर माँडने'**, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,/ **'राजस्थान : संस्कृति, कला एवं साहित्य'**, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010,/ **'भारतीय कला के विविध स्वरूप'**, पंचशील प्रकाशन, जयपुर.

■

जैसलमेर के रिलीफ स्वरुप एवम् तकनीकी पक्ष

शोधार्थी
इदू बाला
चित्रकला विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बूँदी
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

रिलीफ प्राकृतिक तथा मानवीय स्वरुप में अधिकांशतः प्राप्त होते हैं। मानवीय स्वरुप अर्थात् मनुष्य व प्रकृति के विभिन्न रुपों का प्रदर्शन इस कला द्वारा किया जाता है। रिलीफ का स्वरुप कलाकार की स्वंय की सृजनशीलता, कल्पनाशीलता तथा उसका स्वयं का दृष्टिकोण समग्र एवं रूचि के क्षेत्र के अनुसार निर्धारित होता है।

आधार के अनुसार कलाकार आकार का चयन करता है जैसे – पत्थर पर नक्काशी करना, प्लास्टर ऑफ पेरिस का प्रयोग, लकड़ी पर नक्काशी, धातु पर नक्काशी, कच्ची भित्ति पर मिट्टी के द्वारा या रिलीफ का निर्माण किया जाता है। विषयवस्तु क्या है, उसे किस पर बनाया जाना है, उसकी आकृति कितनी होगी। आकृति तथा बनावट किस प्रकार की होनी चाहिए, आकृति एक है या अनेक आकृतियों का सम्मिश्रण है। किस आकृति के किस भाग को कितना उभार प्रदान करता है तथा मानवीय संवेदनाऐं, दृष्टिकोण किस पर कितना निर्भर करता है। अतः इस प्रकार के विश्लेषण तथा विवेचना द्वारा निर्णय किया जाता है तथा कलाकार कला का निर्माण करने को तैयार होता है।

चित्र सं. 1, खम्भे पर कोणीय निर्मित रिलीफ

राजस्थान में जैसलमेर में रिलीफ के स्वरुप राजा, महाराजाओं तथा शासकों द्वारा अंकित सिक्कों तथा मोहरों पर मिलते है। इसी के साथ मंदिरों की दिवारों, मुख्य कक्ष की छत ,गुम्बद, गर्भगृह आदि में भी इस प्रकार के रिलीफ मिलते है। जैसलमेर में जैन मंदिर इसका प्रमुख उदाहरण है। राजाओं के समय के सिक्के तथा उनके लिए तैयार करने वाले छापेखाने की मोहरों आदि भी रिलीफ उदाहरण है।

जैसलमेर में लोककला रिलीफ के स्वरुपों के मिट्टी की भित्तियों को अलंकरणात्मक स्वरुप देने के लिए किया जाता है। रिलीफ चित्रण के मुख्य आधार के रुप में कोठियों, तिजोरियों तथा मन्दिरों की भित्तियों पर देखा जा सकता है। कोठियों तथा तिजोरियों को सम्पूर्ण जैसलमेर में रिलीफ अलंकरण से सजाया गया है। ये अलंकरण मिट्टी की भित्ति पर मिट्टी से भी निर्मित रेखीय रुप में बनाये गये है तथा जैसलमेर के मॉडना स्वरुपों जैसे ही ज्यामितीय, कोणीय,

समान्तर आकारों का संयोजन रिलीफ चित्रण में देखा जाता है। उभारदार रेखीयरुप में ही कुछ फूल वृत्त टिपकीयों, पौधे जैसे रुपों का संयोजन देखा जा सकता है।

चित्र सं. 2, पौधे के आकार में काँच व काँच की चूड़ियों के टुकड़ों से अलकृत रिलीफ, जैसलमेर

तकनीकी पक्ष

रिलीफ चूँकि किसी ठोस आधार पर उभर या उकेर कर बनायी गयी कृति होती है, अतः इसमें सावधानी की आवश्यकता होती है। उभार कितना, कोण, दिशा आदि के साथ ठोस आधार किस प्रकार का बना हुआ है तथा उस पर कार्य करने के लिए किस प्रकार के उपकरण औजारों की आवश्यकता होगी। उसकी प्रकृति के अनुसार उसके निर्माण के समय उसके विभिन्न पक्षों के छायांकन भाग, उभार की स्थिति आदि को सम्मिलित करते हुए सम्पूर्ण कृति का समरुपता प्रदान करना जटिल कार्य है।

तालाब की मिट्टी, ऊँट/गधे/घोड़े की लीद के प्लास्टर से ही रिलीफ स्वरुप बनाये गये है। रिलीफ को आधार क्षेत्र से ही प्लासटर द्वारा उभार कर बनाया जाता है। जो दीवार आदि के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाता है, मिट्टी से ही उभार कर आकृतियों को स्वरुप दिया जाता है तथा कहीं–कहीं काँच आदि का प्रयोग कर रिलीफ बनाए गये है। बील भी उभरी हुई एक आकृति है, इसमें मिट्टी व खपच्चियों को गिली दीवार पर ही निर्मित करते हुए अलंकर्णात्मक स्वरुप प्रदान किया जाता है। रिलीफ में उभरे हुए तथा डूबे हुए तल का समान महत्व इन लोक अलंकरण में देखा गया है, क्योंकि गहरे तथा उभरे हुए तल से ही आकृतियों का सृजन होता है।

चित्र सं. 3, रेखीय स्वरुप में कोठी पर निर्मित रिलीफ

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

कोठारी गुलाब :

राजस्थान की ग्रामीण कलाएँ एवं कलाकार, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

कृष्ण रायदास :

भारतीय चित्रकला , लीडर प्रेस, इलाहबाद।

खान.एस.आर :

हाड़ौती अंचल एवं धर्म हाड़ौती के बोलते शिल्पलेख, हाड़ौती शोध प्रतिष्ठान केसर **गुप्त, मोहनलाल** :

(2009) कोटा संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थान ग्रन्थागार जोधपुर

गैरोला, वाचस्पति :

'भारतीय संस्कृति व कला, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ संस्थान, लखनऊ,

गोस्वामी, प्रेमचन्द :

मनोहर मॉडने, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

गोस्वामी, प्रेमचन्द (2010)

राजस्थान – संस्कृति, कला एवं साहित्य, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर

गोस्वामी, प्रेमचन्द :

भारतीय कला के विविध स्वरुप, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

जैन, डॉ. भगवती : (1989)

हाड़ौती का पुरातत्व, शोध संस्थान प्रतिष्ठान, कोटा

भवसार, वीरसिंह :

'आदिवासी', नई दिल्ली

शर्मा, राधारानी : (2007)

'हाड़ौती की लोककला में मॉडनें, नवजीवन पं. नई दिल्ली